विषय सूची

नोट—पुस्तक छपने पर यह देखा गया कि प्रूफ सम्बन्धी कुछ अशुद्धियां रह गई हैं। छपते २ टाईप की मात्राएं टूट गईं पाठकों से प्रार्थना है ऐसी अशुद्धियों को स्वयं ही ठीक कर लें।

(१) १२ पृष्ठ पर जो वनयात्रा सम्बन्धी चित्र है इसमें वनगमन वाली लकीर सरयू के नीचे चाहिए। पाठक ठीक कर लें।

(२) पृष्ठ-परिशिष्ट में जवाहरलाल जन्म १८८६ है।

ग्रन्थमाला का २३ वां पुष्प—

देश-रत्न

"आज हम अपनी मातृभूमि से दूर हैं। नीड़-विहीन पक्षी की भांति हम अनन्त आकाश में मंडरा रहे हैं—लेकिन हमें एक बार फिर अपनी मातृभूमि में वापिस जाना है। सुनो—सुनो हवा की लहरों पर यह आवाज, यह पुकार तैरती हुई आ रही है। हमारी जननी हमें बुला रही है, हमारी राजधानी दिल्ली में हमारे स्वागत के लिये अपने कोट-द्वार उन्मुक्त कर दिए हैं। सुनो, देश के कोने-कोने से सिंधु गङ्गा और रेवा के पुनीत तट से चालीस करोड आवाजें एक साथ हमें पुकार रही हैं। चालीस करोड़ हृदय हमारे स्वागत के लिए धडक रहे हैं। ८० करोड़ भुजायें हमारे आलिंगन के लिए खुली हैं।"

—हिज़एक्सेलेन्सी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस

राजर्षि पाराशर

विश्वज्ञान मन्दिर, कनखल (हरिद्वार)

—दो रुपया फरवरी १९४७

इन्द्रप्रस्थ प्रिंटिंग प्रेस, क्वीन्स रोड, दिल्ली।

प्रकाशकः—
राष्ट्र-निर्माण ग्रंथमाला
करौलबाग, दिल्ली

"शत्रु की पंक्तियों को चीरकर आपको अपने देश में पहुँचना है। 'आजादी या मौत' हमें याद रखना है। या तो हमें अपना तिरंगा झण्डा फहराते हुए दिल्ली का लाल किला फतह करना है या लड़ते-लड़ते अपनी जान दे देनी है। दिल्ली का मार्ग आजादी का मार्ग है। या तो हम दिल्ली में दाखिल होंगे विजयी होकर या हमारी लाशें धूल में मिल जायेंगी। सांझ की खूनी हवा के लहराते हुए झोंके इस बात के गवाह होंगे कि आजादी के लिये हम मौत की कीमत देने में कभी नहीं हिचके।

सुन रहे हो? सुनो, अपना खून रहा पुकार।
क्षितिज के उस पार दिल्ली है, क्षितिज के उस पार॥"

सुभाष

प्रधान कार्यालयः—
विश्व ज्ञान मन्दिर,
कनखल (हरिद्वार)

भूमिका

यद्यदाचरति श्रेष्ठास्तत्तदेवेतरे जनाः

प्रात स्मरणीय महाराष्ट्र-केशरी छत्रपति शिवाजी महाराज के पश्चात यदि किसी महापुरुष ने अपने अनुपम बलिदान, अदम्य साहस, अवर्णनीय तप-तेज द्वारा भारत के नाम को उज्जवल किया है, नि.सदेह वह भारत का सच्चा सपूत नेताजी सुभाषचन्द्र बोस है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के समान अज्ञात रूप मे बनवास मे जाकर वही पर बानर-सेना की शक्ति को सगठित कर उन्होने अत्याचारी साम्राज्य के मद को इस कदर चूर-चूर कर दिया कि वह साम्राज्य अब लड़खडाने लग गया है। उसके दिन अब लद गए। अधिक देर तक उसके टिकने की अब आशा नही।

अनेक मित्रो का मुझसे यह आग्रह था कि जवाहर-दिग्विजय के समान मै अब सुभाष-दिग्विजय का कथा लिखू। परन्तु मेरे सामने एक कठिनाई थी। सन ४२ मे दिल्ली के चीफ कमिश्नर ने "जवाहर-दिग्विजय" को जब्त कर लिया था। उस प्रतिबन्ध के रहते रहते दिल्ली का कोई प्रैस 'दिग्विजय' नामी कोई ग्रन्थ छापने को तैयार न था। पाठको को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि १८ जनवरी ४७ को जवाहर-सरकार ने अपनी एक घोषणा द्वारा जवाहर-दिग्विजय पर लगाये गये प्रतिबन्ध को हटा लिया है। अब मै इस पोजीशन में हू कि सुभाष-दिग्विजय (अर्थात रामायण, महाभारत की कथाओ द्वारा नेता जी सुभाषचन्द्र बोस की जीवन-गाथा) पाठको की सेवा मे उपस्थित कर सकू। वैसे तो इस पुस्तक मे भी मैने सुभाष के सम्बन्ध मे काफी लिखा है, और अपने पूर्व प्रकाशित ग्रथ राष्ट्र-सर्वस्व तथा काटो के ताज मे बहुत कुछ लिख चुका हू, परन्तु वह सब कुछ पढने की चीज है कथन करने की नहीं। मै चाहता हू सुभाष-जीवन की कथा घर घर मे हो। मैने आज ही से अपने इस प्रयास का श्री गणेश कर दिया है।

प्रस्तुत पुस्तक मे मैने मुख्यतया रामचरित्र का वर्णन किया है। हमारे साथ हमारे अतीत का अटूट सम्बन्ध है। भारतीय

अतीत से प्रेम करना ही हिन्दुत्व है। इस अतीत (past-history) से अपना सम्बध विच्छेद कर लेना ही इस्लाम है। क्रान्ति युग के आधुनिक परिवर्तन काल में हिन्दुत्व की रक्षा करना, भारतीय इतिहास का सुन्दर स्वरूप भारत-पुत्रो के सामने उपस्थित करना भारत माता की सब से बडी सेवा करना है । इसी लिये मैं ने नेताजी सुभाष का जीवन लिखने के साथ ही साथ भारतीय स्वाधीनता इतिहास की पूर्व कथा भी लिख दी है । क्यू कि हमारा आजादी की लडाई को शुरू हुए केवल पचास-सौ वर्ष ही नही हुए बल्कि इसे लगभग एक हजार वर्ष होने को आये । हमारी आजादी की लड़ाई केवल अग्रेज के साथ ही नही हमारा स्वातत्र्य सघर्ष प्रत्येक उस व्यक्ति के साथ है जो हिन्दुस्थान मे रहता हुआ भी अपने को हिन्दुस्थानी नही समझता । गगा के किनारे पर रहता हुआ भी जो दजला-अफरात की ओर देखता है गौ माता का दूध पाता हुआ भी जो ऊट के गीत गाता है, सहारनपुर-अमरोहा के आम चूसता हुआ भी जो खजूर के दरख्तो की तस्वीरे बनाता है ।

हो सकता है राम-कृष्ण सम्बन्धी मेरे विचार कुछ एक कट्टर पन्थियो को भले प्रतीत न दे परन्तु मैं ने भी सारे ससार को खुश करने का ठेका नही ले लिया । राम और कृष्ण को जिस रूप मे आज हमारे सामने रखा जाता है, वह तो केवल सुनकर मत्था टेकने वाली वस्तु है, वह केवल उन्ही लोगो को अपील कर सकता है जो जन्म से ही राम के भगत है । मेरा परिश्रम उन लोगो के लिये नही जो कथा-श्रवण को स्वर्ग का परमिट प्राप्त करने का एक साधन समझते है, मेरा परिश्रम उन लोगो के लिये है जिन्हें राम कथा सुनाना हम पाप समझते है, इसी कारण जो रामकथा से घृणा करते है और अपने इस अपमान का बदला लेने के लिये हमारे महापुरुषो के सम्बन्ध मे अनेक लाछन लगाते है ।

(पाराशर) १-२-४७ विश्व ज्ञान मन्दिर, कनखल (हरिद्वार)

: १ :

विष्णु के दश अवतार

आदित्यानां हि सर्वेषाम् विष्णुरेका सनातनः ।
अजेयश्चाव्यश्चैव शाश्वतः प्रभवेश्वरः ॥

कितनी अद्भुत बात है ! तैतीस करोड देवताओ मे अवतार केवल विष्णु भगवान का ही होता है । ठीक तो है । देश की रक्षा का भार केवल सम्राट् ही के कन्धे पर तो होता है । शिव हमारा देश है, ब्रह्मा हमारे देश का प्रधान मन्त्री है, गणेश हमारे देश का राष्ट्रपति है । कार्तिकेय रक्षा-मन्त्री और इन्द्र प्रधान सेनापति है । रुद्र इस महादेव की सेना है । पार्वती हमारे देश की प्राचीन सभ्यता है, उमा हमारी सभ्यता का वह अश है जिस का समावेश विदेश के प्रभाव से हमारी अपनी सभ्यता पर हुआ । दुर्गा हमारे देश की युद्धनीति का प्रतीक है । योद्धाओ को दशो दिशाओं मे युद्ध करना है इसीलिये दुर्गा की दश भुजाए है, योद्धाओ की नीति सिह के समान होनी चाहिये, अर्थात् जैसे शेर शत्रु पर पहले आक्रमण करता है इसी प्रकार जो राष्ट्र सहारात्मक नीति (Offensive) अपनाता है विजय उसी की होती है। अत दुर्गा (Goddess of power) सिह की सवारी करती है । यह तीनो महादेव की धर्म-पत्निया है । ब्रह्मा की धर्म-पत्निया दो है । गायत्री और सावित्री । ब्रह्मा विचारक है इसी लिये ब्रह्मा के चार मुख है,अर्थात् चार वेद। कही पर ब्रह्मा के तीन मुख भी कहे है तीन और चार का अर्थ एक ही है । सख्या की दृष्टि से वेद चार है और ज्ञान, कर्म, उपासना की दृष्टि से वेद तीन है । ब्रह्मा के एक हाथ मे दड है, दूसरे में कमण्डल । तात्पर्य यह कि प्रधान मन्त्री को नम्र तो अवश्य

होना चाहिये, परन्तु इतना नम्र भी नही होना चाहिये कि जनता उस की परवाह ही कुछ न करे, अत. प्रधान मन्त्री मे शासन करने की शक्ति भी होना चाहिये। इसी लिये दूसरे हाथ मे डडा पकडा दिया। प्रधान मन्त्री का चोला श्वेत है, जिस प्रकार श्वेत वस्त्र पर हर कोई रग चढ सकता है, उसी प्रकार प्रधान मन्त्री को ऐसा ही न्यायकारी होना चाहिये वह प्रत्येक व्यक्ति को सुने और सत्य का ग्रहण करने की कोशिश करे। हस नीर क्षीर अलग कर देता है यही ब्रह्मा का वाहन है।

विचार दो प्रकार के होते है—सासारिक तथा पारलौकिक। जिन्हे वेदान्त की भाषा मे विद्या तथा अविद्या कहा गया है। अन्तर्मुखी विचार-धारा गायत्री है और वहिर्मुखी विचार धारा सावित्री है। अन्तर्मुखी विचारधारा से मनुष्य का भीतर आलोकित हो जाता है, वहिर्मुखी विचारधारा से बाहरी ससार का अन्धकार दूर होता है। मनुष्य सर्वप्रथम विचार पैदा करता है। एक प्रकार की योजना वनाता है, पश्चात् वह उस योजना को कार्यरूप में लाता है अत वह एक ही विचारधारा का पिता भी है और पति भी। Brahma, a thinker when produces a thought he is father, but when he brings his thoughtful plan into action he may be called a husband as well. यही कारण है कि ब्रह्मा गायत्री और सावित्री का पिता भी है और पति भी।

शिवजी महाराज का पार्वती के साथ तो अटूट सम्बन्ध है। प्रत्येक अवस्था मे, प्रत्येक युग मे शिव-पार्वती एक साथ रहेगे। जो भी व्यक्ति उमा-महेश के इस सम्बन्ध मे बाधक वनेगा उसकी दुर्गति वैसी ही होगा जैसी दक्ष प्रजापति की हुई थी। दक्ष का यज्ञविध्वस तो हुआ, हा साथ मे उसे मनुष्य के सिर से वचित हो कर बकरे का सिर अपने धड पर लगाना पडा। उमा और दुर्गा का शिव के साथ अटूट सम्बन्ध नही। उन्हे अपनाना अथवा उन्हे त्याग देना यह तो शिव की अपनी इच्छाओ पर निर्भर है। एक समय की बात है कि जब राम

रावण पर हमला करने के लिये बिल्कुल तैयार थे, बानर सेना पुल बांधने की योजना बना ही रही थी, तत्काल वहा नारद मुनि आ गये और बोले—रावण को तो शिव ने वरदान दे रखा है। जब तक वह वरदान वापिस नही लिया जाता तबतक किसी भी शक्ति द्वारा रावण का वध सर्वथा असम्भव ही है। अतः ठीक तो यही होगा कि समुद्र पार करने से पूर्व शिव की सेवा में उपस्थित होकर उन से प्रार्थना की जाय कि अपना वरदान वापिस ले लें। आखिर कुछ एक ऋषिगणो को साथ लेकर भगवान शिव के दरबार मे पहुचे, परन्तु शिव ने भगवान की बात मानना तो दूर उनसे मुलाकात तक करना स्वीकार न किया। आखिर दुर्गा स्वय राम के साथ गई और राम की सेना के आगे हो रावण से लडी। इस कथाकार ने अपनी अलौकिक वर्णन शक्ति द्वारा यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि राम-रावण युद्ध मे यद्यपि आर्यावर्त राम के साथ नही था, परन्तु आर्यावर्त की विदेश तथा युद्धनीति राम को बराबर सहयोग दे रही थी।

शिव और दुर्गा के सम्बन्ध से जो पुत्र हुआ उसका नाम है कार्तिकेय। कार्तिकेय मयूर की सवारी करता है। मोर सर्पो को खा लेता है। धर्म शास्त्र मे आफरीदियो को सर्प कहा गया है। आर्यावर्त के रक्षा मन्त्री (Defence member)मे इतनी सामर्थ्य होनी चाहिये कि वह आफरीदियों को नष्ट भ्रष्ट कर सके। शिव का दूसरा पुत्र है गणेश। राष्ट्रपति गणेश शिव और पार्वती के मानस पुत्र है। पार्वती के हृदय मे स्नान करने की इच्छा उत्पन्न हुई। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहकार रूपी अन्त शरीर के मैल को उसने उतारकर फेंक दिया। अन्तःकरण निर्मल होते ही भीतर जगमगा उठा। उसी समय अपने महाप्रभ से पार्वती ने प्रार्थना की—प्रभो! मेरे पुत्र का सिर वापिस ला दीजिये। "वह सिर अब वापिस नही आ सकता" शिव ने कहा। क्यू, जो भेज सकता है क्या वह ला नही सकता? "ला तो सकता है परन्तु अन्तःकरण आलोकित हो जाने के पश्चात् उसी सिर का लाना निरर्थक

था, वह अज्ञान का अवस्था थी। ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् मुख-पृष्ठ का बदला जाना अत्यावश्यक था। अत मुख पृष्ठ बदला गया—और उसके ऊपर मोटे अक्षरो मे लिखा गया। **इस पुस्तक में पढ़िये—**

"यह पुस्तक है तो काम, क्रोध, लोभ, मोह अहंकार की ही, परन्तु पहले यह वस्तुएं आत्म-विनाश के लिए थीं अब शुद्ध पवित्र ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् यह वस्तुएं मानव शरीर के विनाश के लिये नहीं, बल्कि उद्धार के लिये हैं।"

देश, जाति तथा ईश्वर की भावना के बिना ससार की सभी वस्तुएं बुरी हैं। वही बुरी बाते ईश्वर की भावना के साथ भली प्रतीत होती है। वास्तव में अच्छाई-बुराई किसी वस्तुमें नही किन्तु उस वस्तुको प्रयोग में लाने वाले की भावना में है। बुरी भावना वाले के पास रुपया व्यभिचार का हेतु है, देश-भक्तके पास रुपया परमात्मा का वरदान है। नास्तिक के शरीर मे वीर्य की शक्ति दुष्टता का कारण है, देश-भक्त के शरीर में वही शक्ति राष्ट्र की सम्पत्ति है। विवेक पूर्वक प्रयोग में लाया गया विष भी अमृत है और विवेक से भ्रष्ट हुए मूर्खों के हाथमें अमृत भी विष है।

राष्ट्रपति गणेश शिव और पार्वती (country and culture) देश और वैदिक सस्कृति के मानस पुत्र (Mental son) है। राष्ट्रपति का आदर्श गजराज का आदर्श है तभी तो राष्ट्रपति के शरीर पर हाथी का सिर फिट किया गया। राष्ट्रपति को गजराज के समान सयमी तथा गम्भीर स्वभाव वाला होना चाहिये। हाथी स्वेच्छाचारी नही, वह सदैव अपने गणो के साथ विचरण करता है। इसी प्रकार राष्ट्रपति को डिक्टेटर न बनकर सदैव अपनी अतरङ्ग (Executive) की इच्छाओ को साथ लेकर चलना चाहिये। हाथी कभी जोश में नहीं आता, परन्तु जब जोश में आ जाता है तो उसका जोश निरर्थक कदापि नहीं जाता। हाथी समय की प्रतीक्षा करता है। और अनुकूल परिस्थितियो में ही शत्रु पर आक्रमण करता है। यही बात राष्ट्रपति के

सम्बन्ध में कही जानी चाहिये । राष्ट्रपति का वाहन मूषक (rat) है। जिस प्रकार चूहा जडों में लग कर सारे वृक्ष को निर्मूल कर देता है उसी प्रकार राष्ट्रपति को सर्व प्रथम शत्रु की जडे काटना चाहिये। (Public opinion) लोकवाणी किसी भी राज्य की जड़ हुआ करती है । शत्रु सैनिक पर प्रहार करने से पहले जनता की दृष्टि में शत्रु पक्ष की नैतिकता को गिराना चाहिये । राम ने भी यही किया, शिवाजी ने भी ऐसा ही किय। और शिशुपाल को मारने तथा कौरवो के विरुद्ध बाकायदा युद्ध घोषणा करने से पूर्व कृष्ण महाराज ने भी ऐसा ही किया। आज भी प्रत्येक राष्ट्र आकाशवाणी द्वारा अपने विरोधी की नैतिकता को ससार की दृष्टि मे गिराने की पूरी पूरी कोशिश करता ही है।

गणेश की दो धर्मपत्निया है–बुद्धी और सिद्धी। (How to attain the means and the attainment of the means.) और राष्ट्रपति की दो पुत्रिया है विजय और श्री (Power and plenty.)

विष्णु भगवान गरुडवाहन है । आर्यावर्त के सम्राट् को गरुडवाहन ही होना चाहिये ताकि वह देवासुर सग्राम मे सर्पो अर्थात् वजीरियो को नष्ट भ्रष्ट कर सके । विष्णु भगवान् की भुजाये चार है अर्थात् आर्य सम्राट का चारों दिशाओ पर पूरा कन्ट्रोल है। विष्णु भगवान शख (Propaganda) चक्र (Moving forces) गदा (Controlling power) पद्म (lotus) धारी है—अर्थात् आर्यावर्त का सम्राट् शत्रु पर आक्रमण करने से पूर्व ससार की दृष्टि मे शत्रु की नैतिकता को गिराता है । फिर उसके विरुद्ध सेना का प्रयोग करता है । गदा द्वारा शत्रु राष्ट्र को काबू मे करता है और भुजबल द्वारा प्राप्त किये इस समूचे एश्वर्य के बीच मे ऐसे रहता है जैसे जल मे कमल ।

लक्ष्मी तथा श्री विष्णु भगवान की दो धर्मपत्निया है । एश्वर्य दो प्रकार का होता है एक युगलकिशोर बिडला जैसे का दूसरा सेठ डाल-मिया जैसो का । एक उत्कर्ष की ओर ले जाने वाला, दूसरा पतन की

ओर। जो एश्वर्य मनुष्य को उत्कर्ष की ओर लेजाता है,जो एश्वर्य मनुष्य की आत्मा को परमात्मा से मिलाने का हेतु वनता है उसे श्री कहते हैं। श्री कमलवाहिनी है, प्रकाश के आलोक मे वह खिल जाती है। जो एश्वर्य मनुष्य को पतन की ओर ले जाता है, जिसे प्राप्त करने के पश्चात् मनुष्य अपनी मानवता से गिर कर पशु बन जाता है वह लक्ष्मी है। लक्ष्मी उलूक वाहिनी है। आलोक मे आते ही उसकी आखें चुन्धिया जाती है। उसे अन्धकार ही प्यारा है।

प्राचीन इतिहास का ध्यानपूर्वक अन्वेषण करने पर यह प्रत्यक्ष दिखाई देगा कि विष्णुभगवान ने कभी किसी को वरदान नहीं दिया। वरदान देने का महकमा केवल शिव और ब्रह्मा के लिये रिजर्व है। परन्तु यह दोनो कैबिनेट मैम्बरज केवल वरदान ही दे सकते है शाप कदापि नहीं। शाप देने वाले डिपार्टमैन्ट के इन्चार्ज दुर्वासा है, हमारे इस शिव रूपी पवित्र देश ने आज तक किसी को शाप नही दिया। शाका, मेथियन्ज, मगोल, गजनवी, फारसी, अर्बी, अग्रेज जितने भी हमारे देश में आये, सबको वरदान ही मिला शाप किसी को भी नही। बाहिर वालो को तो सदैव वरदान ही मिला। रावण, कुम्भकर्ण, वाणासुर कालयवन, मेघनाद, सब को वरदान। शाप तो केवल दशरथ, द्रोपदी, सीता, हरिश्चन्द्र इत्यादि के लिए ही सुरक्षित थे।

आर्यवर्त के सम्राट ने कभी शत्रुओ को बरदान नही दिये। वरदान से तात्पर्य सहयोग से है। अलबत्ता अनेक अवसरो पर ऐसा अवश्य हुआ है जब कि देश की जनता ने तथा प्रधान मत्री ने सम्राट् से सहयोग नही किया। हम अपने देश की निर्बल युद्ध नीति तथा सर्वसाधारण की उपेक्षा वृत्ति के कारण पराजित हो गये। इसी को प्राचीन कथाकारो न शत्रु के प्रति ब्रह्मा तथा शिव का वरदान कहा है। जब जब भी हमारे देश पर वहुत बडी आपत्ति आई उस समय जिस महापुरुष ने आगे बढ कर शत्रुओ का मान तोडा, उन्हे परास्त कर पीछे धकेल दिया उसी महापुरुष को शस्त्रकारो ने विष्णु का अवतार माना। यही

कारण है कि भिन्न भिन्न लोगों की दृष्टि में विष्णु के अवतारो की संख्या भी भिन्न भिन्न है। अनेक लोग दस अवतार मानते हैं, कुछ एक बाईस और ऐसे लोग भी हैं जो २४ तक मानते हैं। अपना-अपना दृष्टिकोण है। आगामी पृष्टो मे हम विष्णु भगवान के दश अवतारो का सविस्तार जीवन पाठको की सेवा मे उपस्थित्त करते है।

(१) भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तमराम (२) योगेश्वर कृष्ण (३) भगवान बुद्ध (४) चन्द्रगुप्त मौर्य (५) सम्राट् विक्रमादित्य (६) महाराज हर्ष (७) महाराणा प्रताप (८) छत्रपति शिवाजी महाराज (९) गुरु गोविन्दसिंहजी महाराज (१०) श्री सुभाषचन्द्र बोस।

: २ :

रामकथा की पृष्ठ भूमि

Some Back grounds of Ramayna

पुरा भ्रातः पिता नः स मातरं ते समुद्वहन्।
मातामहे समाश्रौषीद्राज्यं शुल्कमनुत्तमम्॥
देवासुरे च संग्रामे जनन्यै तव पार्थिवः।
संप्रहृष्टो ददौ राजा वरमाराधितः प्रभुः॥
तव राज्यं नरव्याघ्र मम प्रव्राजनं तथा॥

राम और रावण का युद्ध अकस्मात् ही नहीं हो गया, ऐसी बात भी नहीं जो केवल सीता के छले जाने के कारण ही राम ने लका पर धावा बोल दिया हो। वास्तव मे लका तथा अयोध्या का आपस मे बहुत पुराना वैर था। कोई जमाना अवश्य था जब आर्यो और राक्षसो के बीच मे घनिष्ठता थी और लका निवासी दक्षिणावर्ती द्वीपो के आक्रमण से आर्यावर्त की रक्षा किया करते थे। इसी लिये तो इन्हें

राक्षस नाम से पुकारा जाने लगा (The protectors) परन्तु समय की गति बडी विचित्र है–"कालोहि दुरतिक्रम"। कभी जापान और इगलेंड मे भी तो वडी घनिष्ठता थी। स्टालिन और हिटलर मे भी तो वडा प्रेम था। कभी रूस और इग्लेंड मे भी तो वैर विरोध था परन्तु समय ने क्या कुछ करके नही दिखाया। मित्र शत्रु वन गये और शत्रु अपनी शत्रुता भूलकर घी-खिचडी होगये।

राम के जन्म से वहुत पहले ही लका तथा आर्यावर्त के सम्वन्ध विगड चुके थे। एक समय तो ऐसा आन पहुचा था जव कि लका की फौजे फतह के डके वजाती हुई अयोध्या से दक्षिण-पश्चिम की ओर केवल पन्द्रह मील तक रह गई थी। उस समय अयोध्या पर अनरण्य राजा का शासन था। महाराज अनरण्य ने रावण का बडी वीरता से मुकावला किया। स्टालिनग्रेड तक पहुच कर भी जिस प्रकार हिटलर को पीछे हटना पडा। उसी प्रकार रावण पीछे हटा। भेद केवल इतना ही है कि हिटलर तो विल्कुल ही पीछे हट गया, केवल रूस की धरती से ही नही अपनी जर्मन धरती से ही नही वह तो परमात्मा की धरती से भी हट गया परन्तु रावण यद्यपि अयोध्या से तो हट गया परन्तु आर्यावर्त को एमदम छोड वह लका नही भाग गया। जिस समय भगवान राम का प्रादुर्भाव हुआ उस समय तक भी रावण की सेनायें नासिक, अमरावती तक छायी पडी थी। राक्षसो की अजेय सत्ता को नष्ट भ्रष्ट कर उन्हे आर्यावर्त की भूमि से निकाल वाहिर करने का गौरव राम ने ही प्राप्त किया इसी लिये तो आज घर-घर मे राम कथा का पाठ होता है, ग्राम २ मे रामलीलायें होती है।

पाठको को एक वात और अच्छी प्रकार से समझ लेनी चाहिये। रावण किसी व्यक्ति विशेष का नाम नही, एक गद्दी का नाम है। जिस प्रकार अफगानिस्तान के वादशाह को अमीर कहा जाता है, ईरान के वादशाह को शाह, रूस के सम्राट को जार, जर्मन-सम्राट को कैसर कहा जाता था, उसी प्रकार जो कोई भी लका की गद्दी पर बैठता

था वह कोई हो कही का हो उसे रावण ही कहा जाता था। रामायण के समय वाले रावण का ठीक ठीक नाम क्या था यह कह सकना कठिन ही नही असम्भव भी है। क्यूंकि रामायण मे लका-वासियो के जो नाम दिये गये है वे सब के सब ठीक नाम प्रतीत नही देते। ऐसा प्रतीत देता है मानो किसी बहुत बडे उद्देश्य (For Higher purposes) की पूर्ति के लिये असली नामो को बडो हुशियारी के साथ बिगाडा गया है। युद्धकाल मे क्या कुछ होना सम्भव नही। अभी पिछले युद्ध के दिनो मे युद्ध विभाग (National War Front) की ओर से टोजो तथा हिटलर के सम्बन्ध मे क्या कुछ नही कहा गया और लम्बे चौडे कारटूनो मे इन भद्र पुरुषो के नख-शिख की क्या क्या दुर्दशा नही की गई। **दशानन** अथवा **दशग्रीव** का अर्थ है दस ग्रीवा वाला (Ten-necked), **मेघनाद** जिसकी आवाज बादल के समान धडधड करने वाली हो। **कुम्भकर्ण** जिसके कान घडे के समान हो (Pot eared), **खर** गधा-**त्रिशिरा**-तीन सिर वाला (Three headed), **दूषण** दोषपूर्ण (Guilty fellow) **शूर्पणखा** तेज तथा कठोर नख-शिखवाली। इत्यादि २—कौनसी माता अपने पुत्रो के इस प्रकार के नाम रखना पसन्द करेगी। आज कल तो सर्वत्र सुन्दरलाल, स्वरूप नारायण, कोमलचन्द्र, विश्वमोहन, मधुर भाषिणी, भुवनमोहिनी की ही भरमार है तो क्या लका वासियो के शब्द कोश मे गधे, घडे, ईंट और पत्थर ही लिखे रह गये थे।

राजनीतिक दृष्टिकोण से राक्षस लोग हम आर्यावर्त वालो के लिये भले ही घृणा के पात्र हो, परन्तु निष्पक्ष भाव से देखा जाय तो जिन गुणो के कारण हम अपने महापुरुषो की गौरवगाथा बखानते है लका निवासी उन गुणो से सर्वथा वञ्चित न थे। मेघनाद यदि आज्ञाकारी पुत्र न होता, पिता के लिये वह काहे को प्राण देता। क्या कुम्भकर्ण ने भी अपने बडे भाई के लिये प्राण न्यौछावर नही किये ? क्या सीता ही के समान सुलोचना ने अन्तकाल तक पति का साथ नही निभाया।

रावण के मरने पर मन्दोदरी ने किस कदर विलाप किया। रावण के सभी साथी जी तोड कर नि स्वार्थ भाव से रावण के लिये मर मिटे। राम को सारी लका मे केवल दो ही तो विश्वासघाती मिल सके—एक विभीषण और दूसरा सुषेणवैद्य। हमारे अपने आर्यावर्त में भी जयचन्दों और मानसिहो की क्या कमी है ? फिर हम सदाचार तथा सासारिक व्यवहार की दृष्टि से लका वासियो को क्यू बुरा कहे।

कुछ एक राजनीतिक स्वार्थो के सग्राम मे एक दूसरे का चरित्र नही परखा जाता, हा इतना जरूर है कि युद्व के दिनो मे युद्ध जीतने के लिये एक पक्ष यह आवश्यक समझता है कि विरोधी पक्ष वालो की नैतिकता को प्रत्येक सम्भव उपाय से ससार की नजरो मे गिराने की भरपूर कोशिश की जाय और यदि युद्ध के तत्काल पश्चात् उसी भावना से प्रेरित हुआ विजयीपक्ष युद्ध का इतिहास लिखने बैठता है फिर तो विरोधियो पर लगाये गये लाछन मानो पत्थर की लकीर वन जाते है।

यदि राम ने रावण पर आक्रमण किया तो इसका यह अर्थ कदापि नही कि रावण दुराचारी था। हिटलर ने चैम्वरलैन के प्रधान मन्त्री होते समय इग्लैंड पर जो धावा वोला था उसका कारण क्या था ? क्या चैम्वरलैन दुराचारी था, क्या चर्चिल के आचार पर किसी को सन्देह है ? बेचारा हिटलर वालब्रह्मचारी था उसे अग्रेज ने काहे को नष्ट भ्रष्ट किया। शत्रु पर आक्रमण करने के लिये न तो दुराचार ही कोई वहाना है और नाही विजातीयता। राजनीतिक स्वार्थो की पूर्ति के लिये समान जाति के दो सदाचारी भी आपस मे लड सकते है। एक ही भगवान वुद्ध को धर्म गुरु मानने वाले चीन-जापान क्या आपस मे नही लडे ? एक ही ईसा को सिर झुकाने वाले क्या इटली और एबेसीनिया आपस में नही लडे ? जार्ज पचम और विलियम कैसर दोनो भाई थे। एक विक्टोरिया का दोहता था तो दूसरा पोता, फिर दोनो भाई-भाई आपस मे क्यू लडे ? क्या सिखो में दलवदिया

नहीं ? क्या मुसलमानो मे फूट नही ? क्या आर्यसमाजियो में पार्टी बाजी नही ?

भौगोलिक दृष्टिकोण से आर्यों तथा राक्षसो के भले ही दो भिन्न-भिन्न नाम हो जैसे एक ही सस्कृति को मानने वाले एक ही देश में रहने वाले लोगो को पञ्जाबी, गुजराती, मराठी इत्यादि भिन्न-भिन्न नामो से पुकारा जाता है। वास्तव मे दोनो का मूल एक ही था। इन दोनो मे परस्पर सम्बन्ध भी होते थे। तभी तो स्वरूपनखा को राम के सामने विवाह का प्रस्ताव रखने का साहस हुआ।

राम के समय जो लका का राजा रावण था पितृ पक्ष से उसका आर्यों के साथ अत्यन्त निकट सम्बन्ध था। ऋषि पुलस्त्य ने आस्ट्रेलिया निवासी राजा तृणविन्दु की कन्या से विवाह किया। उससे एक पुत्र पैदा हुआ, विश्रवा। विश्रवा का विवाह प्रयागराज के ऋषि भरद्वाज की कन्या से हुआ। उससे पुत्र हुआ वैश्रवण, जिसे साधारण भाषा में कुवेर भी कहा जाता है। विश्रवा बडा वीर पुरुष था। भुजवल से लका के राजा को परास्त कर स्वय वह लकाधिपति बन बैठा। परास्त राजा सुमाली ने अपनी पुत्री कैकसी का विवाह विश्रवा के साथ कर दिया। कैकसी के तीन पुत्र हुए और एक पुत्री। रावण, कुम्भकरण विभीषण तथा शूर्पनखा। ....

विश्रवा की मृत्यु के पश्चात् ज्येष्ठ पुत्र कुवेर का ही एक मात्र अधिकार था कि वह लका का राजा बनता, परन्तु कैकसी को यह कब सहन हो सकता था। अपने पुत्रो के रहते २ वह एक विदेशी को लका की गद्दा पर बैठते हुआ कैसे देख सकती ? आखिर सामन्तो के साथ मिल कर उसने कुवेर को समाप्त कर देने का षड्यन्त्र रचाया। प्रजा को तो कुवेरके साथ कोई सहानुभूति न थी। मन्त्रीमण्डल की दृष्टि में भी कुवेर एक विदेशी ही था अत रात-रात मे कुवेर के महल को विस्फोट द्वारा उड़ा देने का षड्यन्त्र रचाया गया। कुवेर सौभग्यवश जान से तो बच गया परन्तु तत्क्षण लका द्वीप को छोड़ कर उसे अन्यत्र कहीं

सिर छुपाना पड़ा। कुबेर कुछ समय तक अपने नाना के हां प्रयाग में रहा। परन्तु रावण की ओर से वहां भी बड़ा खतरा था। रावण कुबेर को समाप्त कर देना चाहता था क्यूंकि कुबेर के रहते २ अन्त राष्ट्रीय संसार की दृष्टि में रावण का पक्ष बहुत कमजोर था। रास्ते का यह कांटा वह उखाड़ ही देना चाहता था। कुबेर भाग कर हिमालय में चला गया। रावण ने अफरीका के रास्ते हिमालय तक पहुंच कुबेर पर धावा बोला परन्तू कुबेर भोगवती छोड़कर भाग निकला।

राम के समय में जो लंकाधिपति रावण था आर्यावर्त के साथ उसकी शत्रुता का प्रमुख कारण यही कुबेर का झगड़ा था। रावण तो कुबेर को भोगवती से भगा कर और उसका पुष्पक विमान छीन कर खामोश हो गया, परन्तु भारतीय ऋषि रावण द्वारा अपने दोहित्रे के इस अपमान को भूले नहीं। वे निरन्तर ऐसे अवसर की टोह में थे जब कि वे लंका पर से दशकन्धर रावण की सत्ता को नष्ट भ्रष्ट हुआ देखते।

परन्तु रावण और उसके मित्र राष्ट्रों की शक्ति इतनी प्रबल थी कि खुली लड़ाई में उनसे टक्कर लेना कठिन ही नहीं बल्कि एक प्रकार से असम्भव ही था। अत **उपायेन हि यच्छक्यं न तच्छक्यं पराक्रमैः** के कथनानुसार ही ऋषियों ने अपने इस महत्तम ध्येय को प्राप्त करने का प्रबन्ध किया। उन्हीं दिनों एक ऐसी घटना घटी जिसे निश्चय पूर्वक रामायण रूपी प्रासाद का आधार माना जा सकता है।

सिन्धु पार के असुरों ने कैकय देश पर बड़े जोर का आक्रमण किया। कैकय नरेश भी सेना सजाए मुकाबले पर डट गये। मोर्चा कठिन था। इसी छोटे राजा (sub ordinate power) की सहायता करने के लिए सम्राट स्वयं मोर्चे पर पधारे। वहीं कैकय नरेश के अतिथि रूप में ठहरे हुए महाराज ने कैकयी को देखा। कैकयी के रूप लावण्य पर मोहित हो महाराज ने उसे अपनी रानी बनाने की इच्छा की। और अपनी इस इच्छा को महाराज ने कैकयी के पिता पर भी

प्रगट कर दिया। परन्तु कैकयी के पिता इस सम्बन्ध मे सतुष्ट न थे। महाराज के दो रानिया तो पहले थी ही, तीसरा जगह अपनी इकलौती बेटी को देकर कैकय-राज को प्रसन्नता किस बात की थी ?

महाराज न एक बार फिर अपनी प्रार्थना को दुहराया। आखिर कैकयी के पिता ने दो शर्तो पर यह सम्बन्ध करना स्वीकार किया। सर्व प्रथम तो महाराज कैकेयी के पुत्र को उत्तराधिकारी बनाए और दूसरे—कैकयी को यह अधिकार हो कि अभिषेक के समय जैसे भी चाहे कौशल्या सुमित्रा के पुत्रो से अपने पुत्र केराज्य की रक्षा करे।

शर्ते वास्तव मे कठोर थी। यदि उस समय तक कौशल्या-सुमित्रा के सन्तान होती तो महाराज इस शर्त को कभी न मानते। परन्तु उस समय तक कौशल्या-सुमित्रा के कोई सन्तान न थी। ऐसे अवसरो पर मनुष्य की बुद्धी बहुत तीव्रहो जाती है। महाराज ने सोचा अब तक तो सन्तान हुई न और शायद हो भी न, और शायद कैकयी के ही पहली सन्तान हो जाय। कौशल्या सुमित्रा यद्यपि वडी रानिया है परन्तु राज्य का उत्तराधिकार तो पुत्र ने ही प्राप्त करना है। कैकयी की सन्तान पहले हुई तो वही उत्तराधिकारी होगी। अत इस समय तो यह प्रतिज्ञा-पत्र मान ही लेना उचित है। कम-से-कम तीस बत्तीस वर्ष के पश्चात् ही तो यह प्रतिज्ञा पत्र कार्य रूप मे लाया जायगा। तब तक न जाने हम क्या होंगे और ससार क्या होगा। ऐसा विचार महाराज ने इन प्रतिज्ञाओ को स्वीकार करते हुए कैकयी से विवाह किया।

परन्तु किसी ने कहा है। परमात्मा जो भी करता है अच्छा ही करता है। उसकी कृपा से बुराई मे से भी अच्छाई निकल आती है; दशरथ ने अपनी वासनाओं के वशीभूत होकर अच्छा नही किया था, परन्तु दशरथ की उसी प्रतिज्ञा के आधार पर ही राम बनवास का आयोजन कर ऋषियो ने राम द्वारा रावण वधकी योजना को क्रियात्मक रूप दिया। यदि दशरथ की प्रतिज्ञायें न होती, राम बनवास न होता और यदि राम बनवास न होता आज हमें भी रामायण के पाठ का

सौभाग्य प्राप्त न होता। धन्य है वह परमात्मा जो विष से भी अमृत उपजाता है। बुराई को भी अच्छाई में बदल देता है।

: ३ :
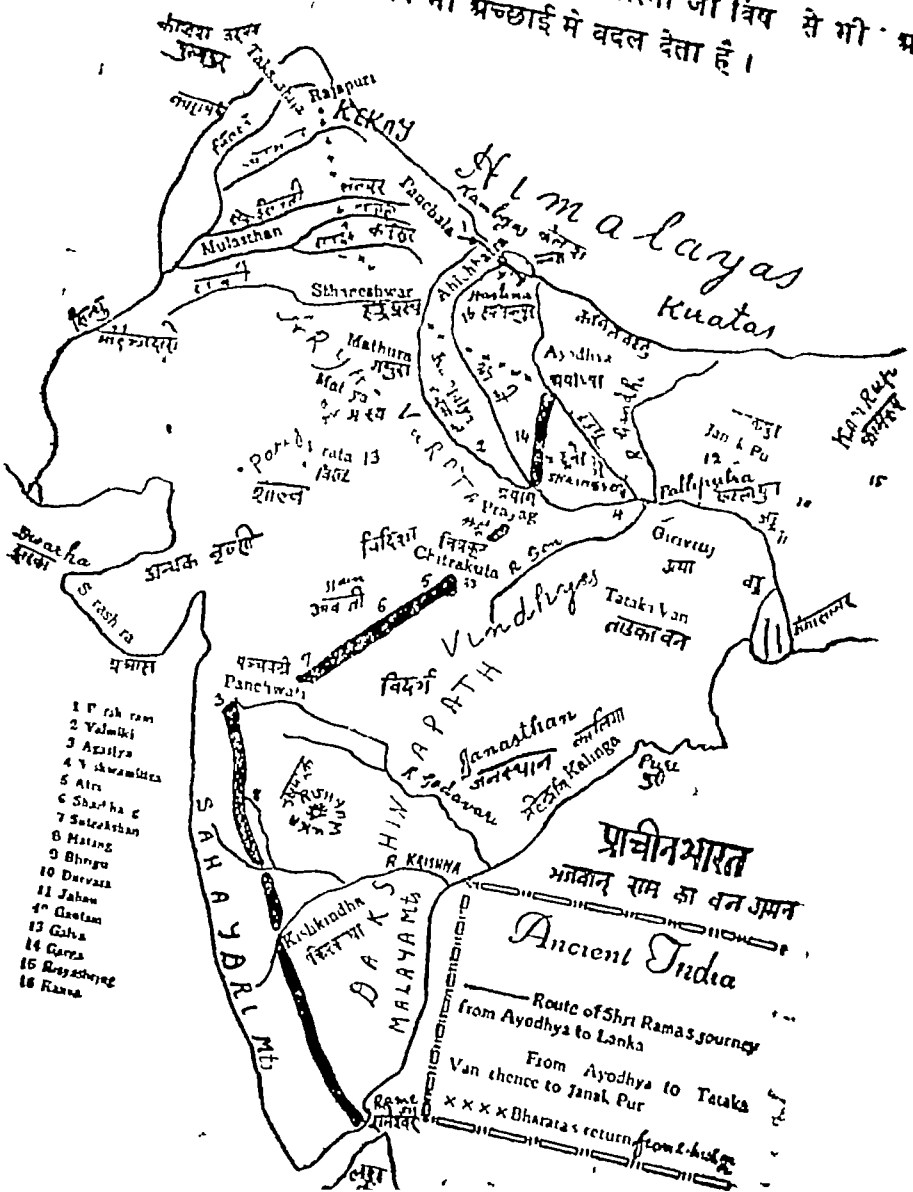
भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम राम

इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैःश्रुतः ।
नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमान्धृतिमान्वशी ॥
धर्मज्ञः सत्यसन्धश्च प्रजानां च हिते रतः ।
यशस्वी ज्ञानसंपन्नः शुचिर्वश्यः समाधिमान्
सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान्प्रतिभानवान् ।
सर्वलोक प्रियः साधुरदीनात्मा विचक्षणः ॥
रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता ।
वेदवेदांगतत्त्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः ॥
सर्वदाभिगतः सद्भिः समुद्र इव सिन्धुभिः ।
आर्यः सर्वसमश्चैव सदैव प्रियदर्शनः ॥

(१) ताड़का-वध

जिस समय हमारी धरती माता रावण, बाण, सहस्रार्जुन, अहिरावण इत्यादि राक्षसो के अत्याचारो से पीडित हो रही थी, जिस समय हमारा प्यारा आर्यवर्त चारो ओर से राक्षस-साम्राज्य द्वारा घिरा हुआ था—पूर्व मे ताडका सुबाहू, उत्तर-पश्चिम मे बाणासुर, दक्षिण म स्वयं राक्षसाधिपति रावण आर्यवर्त के लिये भयकर रूप धारण कर चुके थे उस समय भूतल का भार हरने के लिये चैत्र शुक्ला नवमी के दिन कर्क लग्न तथा पुनर्वसु नक्षत्र मे भगवान मर्यादा पुरुषोतम राम का ससार मे प्रादुर्भाव हुआ ।

भगवान का प्रारम्भिक काल महामुनि वाल्मीकि की छत्र छाया में व्यतीत हुआ। कानपुर ज़िले मे गगाजी के तट पर बिठूर के आस पास में प्राचेतस ऋषि का ऋषिकुल था वेद वेदाग के पूर्ण ज्ञाता बन कर राम अयोध्या लौटे। परन्तु ऋषि तो राम को दशरथ की छत्र छाया मे रखना राम के उज्वल भविष्य के लिये अच्छा न समझते थे। राम को वाल्मीकी आश्रम से लौटे अधिक देर न हुई थी तत्काल ऋषि विश्वामित्र राम याचना के लिये दशरथ के सामने आ उपस्थित हुए— ताडका—सुबाहू मुझे बेहद परेशान करते है। अत मैं ,चाहता हू राम को यज्ञ की राक्षार्थ मेरे साथ भेजें।" दशरथ ने कहा—ऋषे! आप का वचन सिर आखों पर, परन्तु यदि ताडका-सुबाहू का अन्त ही राम याचना का मुख्य उद्देश्य है 'तो यह काम मेरी चतुरगनी सेना भी कर सकती है। मै अपनी सेनाओ को साथ लेकर स्वय मोर्चे पर जाऊंगा और राक्षसो का विनाश कर दूगा।

राम याचना का मुख्य उद्देश्य यदि ताडका-वध ही होता तो दशरथ का वचन, स्वीकार करने मे ऋषि को कुछ भी आपत्ति न थी। परन्तु राम याचना का वास्तविक उद्देश्य तो सीता को राम की अर्द्धाङ्गनी बनाना था। ताडका वध तो एक बहाना था। ताडका को तो ऋषि विश्वामित्र भी मार सकते थे। ऋषि विश्वामित्र कोई साधारण सत्ता वाले महापुरुष न थे—उनके सम्बन्ध मे बोलते हुए प्रधान मन्त्री वसिष्ठ ने कहा था,—"कुशिक पुत्र की रक्षा में रहते हुए राम के शस्त्र सजे हुए हो व न हो कोई राक्षस इसका अहित चिन्तन नही कर सकता, क्योकि वह (विश्वामित्र, साक्षात मूर्तिमान धर्म है, और बलवानो में बल श्रेष्ठो मे श्रेष्ठ तथा यही नाना विद्याओ से अधिक बलवान है, और इसने तप को आश्रय बनाया हुआ है और लोगो के सब ही अस्त्र शस्त्रो की रचना और प्रयोगों को यह जानता है, पर इसके बल को दूसरे मनुष्य यक्ष राक्षस नही जानते। इस लिये इतने प्रतापी ऋषि के साथ जाने में राम को किसी प्रकार का भय न होगा,

तू बिना भय वा सकोच के राम को जल्दी भेज दे । और इसमे तू अपना सौभाग्य समझ, जो विश्वामित्र तुझसे सहायता चाहता है, नही तो यह खुद सब राक्षसो का नाश कर सकता है। न जाने यह इच्छा इस ने तेरे कल्याण के लिए ही प्रगट की हो।

राम याचना मे ऋषि का उद्देश्य राम को अपने पास रख कर उसे रावण-वध के लिये तैयार करना था तथा इसी निमित्त राम का सीता के साथ जीवन सम्बन्ध करना था। रावण कितना शक्ति शाली था इस का वर्णन करते स्वय विश्वामित्र ने दशरथ से कहा था—राजन्! पौलस्त्य के वश मे पैदा हुआ महा बलधारी रावण नाम राक्षस है जो पूर्व के तपोवल से वर प्राप्त किये है । वह सारी पृथ्वी की प्रजा को पीडित कर रहा है। उसीके भेजे यह उग्रस्वरूप महाक्रूर दोनो राक्षस है, आप राम को अवश्य मेरे साथ भेज दे।"

रावण का नाम सुनते ही महाराज थर-थर काप उठे, बोले—"हे ऋषे! मै उस दुष्टात्मा के साथ युद्ध मे लडने के योग्य नही। आप धर्म के जानने वाले देवस्वरूप है। आप मुझ अभागे पर और मेरे पुत्रो पर दया करे, रावण के साथ तो इस समय कोई देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, पन्नग आदि भी युद्ध नही कर सकते और मनुष्यो की तो गति ही क्या है? वह वीर्य वालों के वीर्यों को हर क्षण मे तेजस्वियो के तेज को नष्ट कर देता है, इस लिये मुझमे उससे व उसकी सेना से लड़ने की शक्ति नही, अत आपसे प्रार्थना है कि आप मुझपर दया करके और मेरे पुत्रो को जीवनदान दे।"

प्रधान मन्त्री के समझाने बुझाने पर आखिर दशरथ ने राम और लक्ष्मण को ऋषि के साथ भेजना स्वीकार कर ही लिया।

अयोध्या से छ कोस चल कर सरयू के दक्षिण किनारे पर पहुच राम से ऋषि मधुर वाणी द्वारा बोले—"जल लेकर आचमन कर। इस शुभ वेला मे बला और अतिबला नामक दो विद्यायें मुझसे ग्रहण कर। यह बला और अति बला दोनो विद्याए सब ज्ञानो की मातायें

है। इन दोनों विद्याओं से युक्त हो जाने पर तेरे सदृश फिर दूसरा कोई न होगा। चलते २ दोनो राजकुमारो सहित ऋषि विश्वामित्र सरयू और गगा के सगम पर पहुचे। एक रात दोनो नदियो के मध्य में व्यतीत कर दूसरे दिन नाव द्वारा गगा पार उतरे। आगे घोर जगल था, ऋषि बोले—राम! यहा से केवल २ कोस की दूरी पर ताडका का निवास है। हे नरोत्तम! हमारी आज्ञा से इस देश को निर्भय कर, गो ब्राह्मण के हितार्थ ताटका का वध कर। हे राघव! तुम्हे स्त्री वध से घृणा नहीं करनी चाहिये, क्योकि चारोवर्णों की रक्षा के लिये राजकुमार का कर्तव्य है कि जिस स्त्री के कारण किसी को दु ख पहुचता हो उस स्त्री का वध करने मे कोई दोष नही।

ऐसे वीर वचन सुन राम हाथ जोड बोले, ऋषे! अयोध्या में वसिष्ठादि गुरुओ के सम्मुख-मुझ को पिता ने आज्ञा दी है कि आप के वचन की मुझे अवज्ञा नही करनी चाहिये। सो मै पिता के वचनानुसार और आप की आज्ञानुसार नि सन्देह ताडका का वध रूप उत्तम काम करूगा। यह कह कर शत्रुओ के तपाने वाले राम ने धनुष के मध्य मे मुट्ठी बाध कर तिल्ले की ऐसी तीव्र ध्वनि की कि उसका शब्द सब दिशाओ मे गूज उठा।

(२) जनकपुर की ओर

जनकानाम् रघुनाम् च सम्बन्धो कस्यन प्रियः।
यत्रदाता ग्रहीताश्च स्वयं कुशिकनन्दनः॥

ताडका वध द्वारा उस समूचे वन के पवित्र हो जाने पर एक दिन ऋषि राम से बोले—"राम! मिथिलाधिपति जनक के यहा यज्ञ होगा। हम सब वहा जावेंगे। आप भी हमारे साथ चले और वहा अद्भुत धनुषयज्ञ देखें। यह धनुष देवताओ ने जनक महाराज को भेंट किया था। उस धनुष की शक्ति बडी प्रबल है। उसकी जिज्ञासा करते हुए बडे-बडे बल वाले राजपुत्र उसको नही तोल सके।

मार्ग में एक रात्रो विशाला नगरी के सुमति राजा का आतिथ्य

स्वीकार कर अगले दिन मुनिमण्डल के साथ राम जनकपुर पहुचे। महाराज जनक ने दिल खोल कर मुनिवर का स्वागत किया। अगले दिन महाराज विश्वामित्र की सेवा मे उपस्थित हो बोले—आपका आगमन शुभ हो, हे निष्पाप मै आपका क्या कार्य करू आज्ञा दीजिये। राजा के ऐसे वचन सुन विश्वामित्र बोले—राजा दशरथ के यह लोक विख्यात राजकुमार आपके उस धनुष को देखना चाहते है। इसके अनन्तर राजा जनक ने मत्रियो को आज्ञा दी कि गन्ध मालाओ से सुशोभित दिव्य धनुष को लाओ, जनक की आज्ञा पाते ही वे सचिव पुरी में प्रविष्ट हुए और आठ पहियो वाली उस पेटी को जिसमे धनुष था बड़ी कठिनाई से खीच कर लाए। महर्षि विश्वामित्र की आज्ञा पाकर राम उस पेटी के समीप गये जिसमें धनुष था, उसको खोल धनुष को देखकर बोले कि हे ब्रह्मन्! मै इस श्रेष्ठ धनुष को उठाने के लिये हाथ से पकड तोलने तथा चढाने का यत्न करता हू। मुनि की आज्ञा पाकर राम ने सहस्रो राजाओ के देखते २ झटपट लीलामात्र से धनुष को पकडकर उठा लिया और धनुष की प्रत्यञ्चा खीचकर मध्य से दो टुकडे कर दिया। राम का ऐसा कार्य देखकर जनक महाराज प्रसन्न हो बोले—दशरथ सुत राम की वीरता मैने देखी, इनका ब ा अद्भुत और अचिन्त्य बल है मै ऐसा नही जानता था। मेरी पुत्री सीता दशरथ नन्दन को भर्त्ता पाकर जनको के कुल मे यश लायेगी।

(३)

वनयात्रा

न दोषेणावगन्तव्या कैकयी भरत त्वया।
राम प्रव्राजनं ह्येतद् सुखोदर्कं भविष्यति॥
देवानां दानवानां च ऋषीणां भावितात्मनाम्।
हितमेव भविष्यद्धि राम प्रव्राजनादिह॥

शिव को शक्ति मिली और शक्ति को शिव मिले। महामुनि कौशिक

इच्छा पूरी हुई। राम-चरित्र का पूर्वार्द्ध समाप्त हुआ। रावण वध के लिय रामको पूर्ण रूपेण सुसज्जित करलिया गया। ऋषि विश्वामित्र उत्तर पर्वतकी ओर चले गये। परशुराम भी राम के तेज को अपनी आखों देख अतीव प्रसन्न हुए। अब प्रश्न था राम के भविष्य का। महाराज दशरथ राम को राज तिलक देकर स्वय विश्राम लेना चाहते थे, परन्तु ऋषियो द्वारा रावणवध के निमित्त रची गई योजना के अनुसार राम का राज्याभिषेक श्रेयस्कर न था। राम यदि अयोध्या के राजा बनकर लका पर धावा बोलते तो रावण को यह कहने का अवसर मिल जाता कि आर्यावर्त के राजा ने मुझ पर आक्रमण किया है। इस अवस्था में सम्भव था कि राम-रावण का युद्ध दो व्यक्तियो का एक स्थानीय युद्ध न होकर शायद विश्व-युद्ध का रूप धारण कर लेता। ऋषि अयोध्या को युद्ध की लपेट से सर्वथा अलग थलग रखना चाहते थे, ऐसा तभी हो सकता था यदि राम राजा की हैसियत से नही बल्कि व्यक्तिगत हैसियत से लका पर हमला करते। दूसरी बात एक और भी थी। ऋषियो की योजना यह थी कि रावण पर सहसा आक्रमण (Sudden attack)किया जाय। उसे किसी प्रकार की विशेष तैयारी का अवसर न दिया जाय। यदि लका पर आक्रमण करने के लिये अयोध्या से सेनाए मार्च करती हुई चलती, यह बात लुक छिप कर तो की न जा सकती थी। जरूरी था कि इस बात की चर्चा सर्वत्र फैल जाती और रावण भी अपना सम्पूर्ण सैन्य शक्ति को जुटाने मे लग जाता। अहिरावण, वाण, खरदूषण तथा वाली इन चारो की सुसगठित सेनाओ का खुले मैदान मे सामना करना यह अयोध्या की सेनाओ के वश की बात न थी। यदि होती फिर राम वनवास की और राम जन्म तक प्रतीक्षा की क्या आवश्यकता थी। नीति के जोर से नही बल्कि यदि ताकत के जोर से ही लका को जीतना था तो यह काम तो परशुराम, विश्वामित्र, अगस्त्य भी कर सकते थे ?

महाराज दशरथ राम को राजा बनाना चाहते थे। राम ज्येष्ठ

भी थे और श्रेष्ठ भी। शासनाधिकार प्राप्त करने का उभय दृष्टि से उनका पूरा पूरा अधिकार था। यदि राम को राजतिलक न देकर महाराज भरत को राज देते तो प्रजा इस बातको चुपचाप कैसे सह लेती। यदि महाराज अपनी प्रतिज्ञा पालने की बात कहते, तो इस मे उनकी अपनी ही बदनामी थी। तीस पैंतीस वर्ष पहले की हुई प्रतिज्ञा को उस समय जीवित करना मानो अपने हाथो अपने सफेद बालो पर स्याही पोतना था। यदि महाराज ने किसी प्रलोभन वश, अथवा कामके वशीभूत हो ऐसी प्रतिज्ञा की जो उनको नही करनी चाहिये थी, जिसे करने का उनको कोई अधिकार भी नही था तो इसका यह अर्थ कदापि नही कि पिता द्वारा किये हुए अनुचित तथा पापपूर्ण कार्य का फल पुत्र को भोगना पडे। यदि हमारा अपना पिता गई बीती उमर मे किसी जवान औरत के प्रेम मे फँस घर की सारी जायदाद उस औरत के नाम लिख देता है क्या आप चुप चाप अपनी जायदाद उस औरत के हवाले कर देंगे? दशरथ महाराज को कोई अधिकार नही था कि ज्येष्ठ पुत्र के यौवराज्य के अधिकार को किसी भी कीमत पर बेच सके। यदि कैकेयी महाराज की पत्नी थी, और उस के प्रति महाराजा का कुछ कर्तव्य था तो कौशल्या क्या पत्नी न थी? क्या कौशल्या के प्रति महाराज का कुछ भी कर्तव्य न था? कौशल्या पहिली रानी थी बडी रानी थी। उसी के पुत्र का राज्य पर अधिकार था संसार का कोई कानून कायदा इस बात की इजाजत नही दे सकता था कि कौशल्या के पुत्र को राज्याधिकारो से वंचित करके छोटी रानी के छोटे पुत्र को युवराज बना दिया जाय।

महाराज इस बात को भलीप्रकार समझते थे। वह चाहते थे उन के द्वारा काश्मीर नरेश के प्रति की हुई प्रतिज्ञा क्रियात्मक रूप में न लाई जाय। राम राजा बन जाये। महाराज का बुढापा कलंकित होने से बच जाये।

कैकेयी की ओर से तो महाराज सर्वदा निश्चिन्त थे, क्योकि कैकयी

भरत के लिय किसी भी प्रकार का विशेषाधिकार न चाहती थी। राम उसे अपने पुत्र से भी अधिक प्रिय थे। जब कैकयी स्वय ही अपने पुत्र के लिये राज्य न चाहती थी फिर महाराज को चिन्ता किस बात की थी। तथापि उन्हे भरत के मामा नाना की ओर से भय अवश्य था, सो खूब सोचविचार कर महाराज ने यह निश्चय किया कि भरत के मामा को इस सम्वन्ध मे किसी प्रकार की सूचना न दी जाय। राज्याभिषेक पर उन्हें निमन्त्रित न किया जाय। परन्तु महाराज बहुत ज्यादा सावधान थे। उन्होने सोचा—सम्भवतया, निमत्रण की प्रतीक्षा किये विना ही कही से समाचार पा, घर वाली वात समझ विना बुलाए आजायें तो। इसीलिये महाराज ने सावधानी के तौर पर भरत तथा शत्रुघ्न को उन के पास भेज दिया। ताकि ऐसी खवर पाकर भी वे इस समाचार को निराधार समझ काश्मीर में ही रहें, अयोध्या मे न आ धमकें। परन्तु महाराज को यह भी भय था यदि सभी राजाओ की उपस्थिति मे कैकय नरेश की अनुपस्थिति प्रजा को अखरी तो महाराज क्या उत्तर देगे। उन्होने इस का समाधान यो किया कि जानबूझ कर जनक को भी नही बुलाया। यदि कोई पूछे—महाराज! इस शुभ अवसर पर भरत के मामा को किस लिए नही बुलाया गया, तो महाराज इस प्रश्न को यह कह कर टाल सकें— अजी! आप को कैकय-नरेश की चिन्ता पडी है, यहा तो जनक महाराज भी नही आए।

महाराज ने ऐसी और भी अनेक सावधानियो के साथ लोक सभा का अधिवेशन बुलाया। सभा को सम्बोधन करते हुए महाराज बोले— मैंने भी वडो के मार्ग पर चलते हुए वैसा ही आचरण किया है कि सदा चैतन्य रह कर यथाशक्ति प्रजाओ की रक्षा की और सम्पूर्ण लोक हित का आचरण करते हुए मैंने क्षात्रधर्म रूप क्षत्र की छायामें अपने को बूढा कर दिया है। सो अब मै यहा बैठे हुए सब द्विजवरो की सम्मति से राम को प्रजा के हित मे लगा विश्राम करना चाहता हू। यदि यह मेरा विचार उत्तम फलवाला है और मैंने ठीक सोचा है तो आप सब मेरे साथ

सहमत हो अथवा अपनी सम्मति दे कि मुझको क्या कर्त्तव्य है ? यद्यपि मेरी अपनी प्रसन्नता तो इसी मे है कि राम को राज्याभिषेक हो परन्तु इससे उत्तम कुछ अन्य हित है तो आप सब सोचें, क्योंकि मध्यस्थों का विचार कुछ और ही होता है जो वाद-विवाद से अधिक फल वाला बन जाता है।"

राजा का उक्त विचार सुन कर सभी उपस्थित जनता ने प्रसन्नता-पूर्वक इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। तत्पश्चात् महाराज बोले—अहो, मै बडा प्रसन्न हुआ हू, जो मेरे प्यारे पुत्र को युवराज बनाने मे आप सब सहमत है। यह पवित्र-चैत्रमास इस शुभ कार्य के लिए सर्व-श्रेष्ठ है। कल ब्रह्म मुहूर्त पुष्य नक्षत्र मे राम का राज्याभिषेक होगा।" तत्पश्चात् अपने प्रियपुत्र से महाराज बोले, राम! आज पुनर्वसु नक्षत्र है, कल प्रात पुष्य नक्षत्र होगा। राज्याभिषेक के लिये यही नक्षत्र सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। इस लिये तुम आज रात्री को सपत्नीक व्रत कर नियम से रहना और पत्थर की शिला पर कुशासन बिछा कर शयन करना। महाराज की ऐसे आज्ञा प्राप्त कर राम घर लौटे। माता कौशल्या तक राज्याभिषेक का सम्वाद पहले ही पहुचे चुका था। राजमहल मे प्रवेश करते ही राम ने देखा—माता कौशल्या प्राणायाम द्वारा परम पुरुष का ध्यान कर रही थी। उस नियम वाली कौशल्या के समाप जाकर अभिवादन करके राम यह हर्ष युक्त वचन बोले—माता! मुझ को पिता ने प्रजापालन रूप कर्म मे नियुक्त किया है कल प्रातः मेरा अभिषेक होगा। जैसा कि मुझे पिता का शासन है।

राम को यदि यौवराज्य प्रदान करने के लिय प्रजा की स्वीकृति की आवश्यकता थी, तो राम को राज्य से वञ्चित करने के लिये भी तो प्रजा को पूछना जरूरी था। जिस समय लोक सभा राम के राज्याभिषेक का प्रस्ताव पास कर प्रातःकाल सुर्योदय पर उस प्रस्ताव को कार्यरूप में लाने के लिये उठी, बीच मे अधिक से अधिक चौदह पन्द्रह घंटे का अवकाश था। परन्तु प्रात.काल जो मामला ही पलट गया इस

भरत के लिय किसी भी प्रकार का विशेषाधिकार न चाहती थी।
राम उसे अपने पुत्र से भी अधिक प्रिय थे। जब कैकयी स्वय ही अपने
पुत्र के लिये राज्य न चाहती थी फिर महाराज को चिन्ता किस बात
की थी। तथापि उन्हे भरत के मामा नाना की ओर से भय अवश्य
था, सो खूब सोचविचार कर महाराज ने यह निश्चय किया कि भरत
के मामा को इस सम्बन्ध मे किसी प्रकार की सूचना न दी जाय।
राज्याभिषेक पर उन्हे निमन्त्रित न किया जाय। परन्तु महाराज बहुत
ज्यादा सावधान थे। उन्होने सोचा—सम्भवतया, निमत्रण की प्रतीक्षा
किये विना ही कही से समाचार पा, घर वाली वात समझ विना
बुलाए आजाये तो। इसीलिये महाराज ने सावधानी के तौर पर
भरत तथा शत्रुघ्न को उन के पास भेज दिया। ताकि ऐसी खबर
पाकर भी वे इस समाचार को निराधार समझ काश्मीर में ही रहें,
अयोध्या मे न आ धमके। परन्तु महाराज को यह भी भय था यदि सभी
राजाओ की उपस्थिति में कैकय नरेश की अनुपस्थिति प्रजा को अखरी
तो महाराज क्या उत्तर देंगे। उन्होने इस का समाधान यो किया कि
जानबूझ कर जनक को भी नही बुलाया। यदि कोई पूछे—महाराज!
इस शुभ अवसर पर भरत के मामा को किस लिए नही बुलाया गया,
तो महाराज इस प्रश्न को यह कह कर टाल सकें— अजी! आप को
कैकय-नरेश की चिन्ता पडी है, यहा तो जनक महाराज भी नही आए।

महाराज ने ऐसी और भी अनेक सावधानियो के साथ लोक सभा
का अधिवेशन बुलाया। सभा को सम्बोधन करते हुए महाराज बोले—
मैंने भी वडो के मार्ग पर चलते हुए वैसा ही आचरण किया है कि सदा
चैतन्य रह कर यथाशक्ति प्रजाओ की रक्षा की और सम्पूर्ण लोक हित
का आचरण करते हुए मैंने क्षात्रधर्म रूप क्षत्र की छायामे अपने को बूढा
कर दिया है। सो अव मैं यहा बैठे हुए सव द्विजवरो की सम्मति से राम
को प्रजा के हित मे लगा विश्राम करना चाहता हू। यदि यह मेरा
विचार उत्तम फलवाला है और मैंने ठीक सोचा है तो आप सव मेरे साथ

सहमत हो अथवा अपनी सम्मति दे कि मुझको क्या कर्त्तव्य है ? यद्यपि मेरी अपनी प्रसन्नता तो इसी मे है कि राम को राज्याभिषेक हो परन्तु इससे उत्तम कुछ अन्य हित है तो आप सब सोचे, क्योंकि मध्यस्थो का विचार कुछ और ही होता है जो वाद-विवाद से अधिक फल वाला बन जाता है।"

राजा का उक्त विचार सुन कर सभी उपस्थित जनता ने प्रसन्नता-पूर्वक इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। तत्पश्चात् महाराज बोले—अहो, मैं बडा प्रसन्न हुआ हू, जो मेरे प्यारे पुत्र को युवराज बनाने मे आप सब सहमत हैं। यह पवित्र-चैत्रमास इस शुभ कार्य के लिए सर्व-श्रेष्ठहै। कल ब्रह्ममुहूर्त पुष्य नक्षत्र मे राम का राज्याभिषेक होगा।" तत्पश्चात् अपने प्रियपुत्र से महाराज बोले, राम! आज पुनर्वसु नक्षत्र है, कल प्रात पुष्य नक्षत्र होगा। राज्याभिषेक के लिये यही नक्षत्र सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। इस लिये तुम आज रात्री को सपत्नीक व्रत कर नियम से रहना और पत्थर की शिला पर कुशासन बिछा कर शयन करना। महाराज की ऐसे आज्ञा प्राप्त कर राम घर लौटे। माता कौशल्या तक राज्याभिषेक का सम्वाद पहले ही पहुचे चुका था। राजमहल में प्रवेश करते ही राम ने देखा—माता कौशल्या प्राणायाम द्वारा परम पुरुष का ध्यान कर रही थी। उस नियम वाली कौशल्या के समाप जाकर अभिवादन करके राम यह हर्ष युक्त वचन बोले—माता! मुझ को पिता ने प्रजापालन रूप कर्म मे नियुक्त किया है कल प्रात मेरा अभिषेक होगा। जैसा कि मुझे पिता का शासन है।

राम को यदि यौवराज्य प्रदान करने के लिय प्रजा की स्वीकृति की आवश्यकता थी, तो राम को राज्य से वञ्चित करने के लिये भी तो प्रजा को पूछना जरूरी था। जिस समय लोक सभा राम के राज्या-भिषेक का प्रस्ताव पास कर प्रात:काल सुर्योदय पर उस प्रस्ताव को कार्यरूप में लाने के लिये उठी, बीच मे अधिक से अधिक चौदह पन्द्रह घटे का अवकाश था। परन्तु प्रात.काल जो मामला ही पलट गया इस

का तो पहले किसी को विचार तक न था। प्रात सूर्योदय के समय लोक-सभा को फिर इकत्रित होना था। प्रजा मे से तो किसी को यह स्वप्न में भी ख्याल न था कि प्रात. होते ही रग में भग पड जायगा। यदि रात रात में केकेयी रूठ भी गई थी, महाराज के लिए तो वच निकलने का वहुत ही सरल उपाय था। केकेयी के प्रति वह साफ शब्दों में कह सकते थे—"कैकयी! मैंने तुम्हे दो वर देने की प्रतिज्ञा अवश्य की थी, परन्तु जो कुछ तुम माग रही हो यह दे सकना मेरे वस की वात नही। रघुकुल मे यह रीति चली आई है कि ज्येष्ठ पुत्र ही राज्य का उत्तराधिकारी हो सकता है। अत परम्परा से चले आ रहे इस नियम को तोड सकना मेरी शक्ति से वाहर की वात है। राम के राज्याभिषेक की घोषणा की जा चुकी है। यदि तू अपने पुत्र के लिए ही यौवराज्य प्राप्ति का हठ किये है तो प्रात काल लोकसभा मे मै इस प्रस्ताव को उपस्थित कर दूगा। यदि प्रजा के मुखियो ने, मन्त्रीमडल तथा प्रधान मन्त्री ने पूर्व वने नियमो मे यह सशोधन स्वीकार कर लिया कि विशेष २ अवस्थाओ मे ज्येष्ठ पुत्र की उपस्थिति में छोटे पुत्र को भी यौवराज्य प्राप्त हो सकता है तो मुझे भरत को राजतिलक देने मे किसी भी प्रकार का कोई आक्षेप नही। राम और भरत मुझे समान रूप से प्यारे है।" महाराज सारी जिम्मेदारी मन्त्रीमडल पर डाल देते। उनका वचन भा पूरा हो जाता और वह अपयश से भी बच जाते। इस अवस्था मे वचन भग का दोष महाराज पर कदापि न लग सकता था क्यूकि कैकयी जो कुछ माग रही थी, महाराज, मन्त्रिमडल तथा लोक सभा की अनुमति के विना वह देही नही सकते थे। यदि महाराजका अपना दोष न होता वे कैकयी को साफ इन्कार कर देते। अनुचित माग के लिए ससार कैकयी को ही बुरा कहता। महाराज के वचन भग का तो प्रश्न ही न था।

जव महाराज इस सरल उपाय से साफ २ वच सकते थे तो इतन बुद्धिमान होते हुए भी उन्होने ऐसा क्यू न किया? ऐसा तो तब करते जब स्वय वह निर्दोष होते। ऐसा तो तभी हो सकता था जब उन्होन

कैकयी की कोई सी दो बातें पूरी करने का वचन दिया होता। कठिनाई तो यह थी कि वह कैकयी से विवाह करते समय यह प्रतिज्ञा कर चुके थे कि कैकयी का पुत्र ही अयोध्या का युवराज बनेगा, इस अवस्था मे लोक सभा अथवा मन्त्रि-मडल के वश की बात न थी कि वह किसी भी उपाय से महाराज द्वारा स्वीकृत प्रतिज्ञा पत्र को निरर्थक सिद्ध करे।

महाराज ने कैकयी को अन्दर ही अन्दर समझाने की बहुत कोशिश की, परन्तु मन्थरा ने इस सफैद कपडे पर वह रग चढा रखा था जिसे महाराज अपने आसुओ से भी धो न सके। कैकयी अपनी बात पर दृढ थी। वह अपना अधिकार मनवाने पर खूब मजबूती के साथ डटी हुई थी। महाराज बिल्कुल बेबस थे, कैकयी के प्रेम के कारण नही, बल्कि तीस वर्ष पहले अपने द्वारा की गई एक भयकर भूल के कारण।

तथापि एक महापुरुष ऐसा जरूर था जो यदि चाहता तो इस सारी मुसीबत से महाराज को बचा सकता था—वह महापुरुष था, प्रधान मन्त्री वसिष्ठ। परन्तु महाराज का दुर्भाग्य यह था कि प्रधानमन्त्री भी रामाभिषेक के पक्ष मे न थे। राम बनवास को रावणवध का हेतु बनाने की योजना महामन्त्री वसिष्ठ के दिमाग ही की उपज तो थी, फिर भला प्रधानमन्त्री महाराज के जीवन की चिन्ता क्यू करते। यदि वसिष्ठ राम को राजगद्दी पर बिठाना चाहते तो इसके लिए उनके पास बहुत ही सरल उपाय था। वह स्वय कैकयी के सामने उपस्थित होते और कहते—कैकयी, प्रधान मन्त्री की हैसियत से मैं तुम्हे यह वचन देता हू कि तेरा ही पुत्र राज्याभिषेक को प्राप्त करेगा। राम अवश्य ही अनुज तथा भार्या सहित जगल को जायेंगे, परन्तु इस समय महाराज की अवस्था शोचनीय हो रही है ऐसी अवस्था मे राम को कुछ दिन तक यहा रहने दे, ताकि महाराज राम को देखकर कुछ दिन जी तो सकें और यदि इस चिन्ता मे महाराज का देहान्त हो भी जाय तो अन्त्येष्टी के लिए ज्येष्ठ पुत्र का उपस्थित रहना भी तो आवश्यक है' प्रधान मन्त्री की जमानत पर कैकयी राम को दस पन्द्रह दिन अयोध्या मे रहने की छूट दे देती।

इसी बीच में वसिष्ठ जल्दी से जल्दी भरत को अयोध्या में बुलवा लेते।" यदि राम के अयोध्या में रहते रहते भरत आ जाते फिर कैकयी तो क्या, कैकई का बाप भी राम को जगल न भेज सकता। भरत को राज्य की इच्छा न थी। भरत में इतनी योग्यता थी कि वह अपनी माता को, मामा तथा नाना को समझा लेते। उस अवस्था में, दशरथ भी मरने से बच जाते। उनकी इज्जत भी रह जाती। उनका वचन भी पूरा हो जाता और राम राजा भी बन जाते—परन्तु प्रश्न तो यह है कि जब यह सब कुछ हो सकता था तो ऐसा क्यू न किया गया ?

परन्तु प्रधान मन्त्री ने जो कुछ किया उससे तो ऐसा प्रत्यक्ष प्रतीत देता है कि जो कुछ भी किया गया, पहले से ही खूब सोची विचारी योजना के अनुसार ही किया गया। वास्तव मे ऐन मौके पर खेल को खराब करना मथरा का काम न था, मन्थरा तो प्रधान मन्त्री के हाथो मे एक खिलौना (Instrument) मात्र थी। प्रधान मन्त्री यदि चाहते तो भरत के मामा नाना को ठीक मौके पर बुला सकते थे। यदि महाराज ने उन्हे सूचना न दी थी तो स्वय प्रधान मन्त्री ही किसी विशेष व्यक्ति द्वारा उन्हे सूचना भिजवा सकते थे, परन्तु परिस्थिति वश हजारो राजाओ के बीच मे कैकयी नरेश द्वारा महाराज का अपमान उन्हे असह्य था। जो काम शोर मचाकर होना था, उसी काम को प्रधान मन्त्री चुपचाप खामोशी से कर लेना चाहते थे। उन्होने कितनी बुद्धिमता दिखाई। पहले भी तो मन्थरा द्वारा वह कैकयी को भडका सकते थे। परन्तु वह तो इस समूचे खेल को कुछ घटो मे ही समाप्त कर देना चाहते थे। बात लम्बी पड जाती शायद अपना प्रभाव ही खो बैठती। पुष्य नक्षत्र मे जब कुछ ही घटे शेष थे तब महाराज पर वज्र-पात हुआ और भरत को अयोध्या लाने के लिये दूत उस समय अयोध्या से भेजे गये जब प्रधान मन्त्री को इस बात का पक्का विश्वास हो गया कि अब राम उस स्थान पर पहुच गये है जहा से उन्हे लौटाना भरत के बस का बात नही।

राम द्वारा रावण-वध ही राम बनवास का मुख्य हेतु था। अगर राम बनवास पर दशरथ का देहान्त न होता, अयोध्या भी शोक न मनाती भरत भी राम को लौटाने के लिये चित्रकूट न जाता तो अन्तर्राष्ट्रीय संसार राम बनवास में कोई न कोई राजनीतिक रहस्य छिपे रहने का अवश्य ही सदेह करता, परन्तु यह सारा खेल इस प्रकार बुद्धिमत्ता पूर्वक सोच विचार कर खेला गया कि सन्देह की कोई भा बात नही रहने दी गई। तत्कालीन ससार ने राम बनबास को किसी प्रकार का राजनीतिक महत्व नही दिया।

ऋषियो का सुख स्वप्न पूरा हुआ। "राम, सीता तथा लक्ष्मण सहित चुप चाप दक्षिण की ओर जाए। खरदूषण तथा बाली को मार सुग्राव से मैत्री करे। पश्चात चौदहवे साल के अन्त मे इन तीनो की संयुक्त सैनाओ की सहायता से समुद्र पार कर रावण की सत्ता को छिन्न भिन्न करदे।"

परन्तु सीता को राम के साथ क्यो भेजा गया, उर्मिला भी तो घर पर रही। सीता को राम के साथ जाना अत्यावश्यक था। आखिर राम किसी वहाने से तो रावण की लका पर धावा बोलते। यदि विना कारण राम लका पर चढाई वोल देते, निश्चय ही अन्त.र्राष्ट्रीय जगत मे उनका पक्ष वहुत निर्वल हो जाता। ससार राम से पूछता—"राम! लंका पर किस अपराध मे धावा बोला गया। अपका लडाई का उद्देश्य (War-aim) क्या है।" राम उस समय क्या कहते। पुराने वैर का वदला, विना नवान कारणो के कोई शोभायुक्त पुरुषो के लिये शोभनीय नही है। ऋषि राम के लोक-पक्ष को सुदृढ वना देना चाहते थे। अतः उन दूरदर्शी ऋषियो ने इसी निमित्त सीता को राम के साथ भजा।

"खरदूषण की हत्या के पश्चात आर्यवर्त के दक्षिण पश्चिमी तट पर अपना सत्ता को सर्वथा समाप्त समझ, वाली की मैत्री पर भरोसा न रखता हुआ, अपने साम्राज्य की रक्षा करने के लिये यदि रावण लंका की भूमि पर ही राम से टक्कर लेना चाहे, और राम को लका

में ही आकर युद्ध के लिये विवश करने की इच्छा से यदि वह अपनी राजनीतिक चाल से सीता को हर कर लका ले जाये तो रावण के इस कार्य मे राम तथा लक्ष्मण की ओर से किसी प्रकार की बाधा उपस्थित न की जाय। क्यूकि रावण के इस मूर्खतापूर्ण कृत्य द्वारा राम की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति (International position) बहुत मजबूत हो जायगी। उस अवस्था मे राम ससार के सामने छाती ठोक कर कह सकेगे। मै लका पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिये आक्रमण नही कर रहा, मै तो केवल सीता की प्राप्ति के लिये ही लका पर धावा बोल रहा हू। हम युद्ध नही चाहते थे, परन्तु रावण के इस धृष्ठतापूर्ण कार्य ने और हमारी आर्यत्व की भावना ने हमें लडाई के लिये मजबूर किया है।

I am fighting not for Lanka I am fighting simply for my Sita–we wanted not war gentlemen but war is forcibly thrust upon us

(४)

वन की ओर

भवतामर्थ सिद्धयर्थमागतोऽहं यदृच्छया।
तस्यमेऽयं वने वासो भविष्यति महाफल ॥
तपस्विनां रणे शत्रून्हतुमिच्छामि राक्षसान्।
पश्यन्तु वीर्य्यमृषय. स भ्रातुर्मे तपोधना ॥

ऋषियो के आदेश को पूरा करने के लिये भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम अनुज तथा वैदेही सहित लका की ओर चल पडे। एक दिन भरद्वाज के आश्रम मे विश्राम कर ऋषि द्वारा अनुशासन प्राप्त कर भगवान ने कुछ दिन के लिये चित्रकूट मे वास किया। जिस दिन राम चित्रकूट पहुचे उस दिन मुनि वसिष्ठ ने भरत को लाने के लिये दूत भेजे। उन दूतो को इस बात की खास हिदायत थी वे अयोध्या में घटित घटनाओ के सम्बन्ध मे भरत को तथा भरत के मामा नाना को कुछ

मत बताए । राम बनवास के ६ दिन पश्चात दशरथ का देहान्त हुआ । राम बनवास के सोलहवें दिन भरत अयोध्या पहुचे । यह आवश्यक ही था कि वे राम को लौटने की प्रेरणा करने के लिये पीछे २ जाते । भरत के इस कार्य द्वारा ऋषि ससार के सामने एक वार फिर अपनी स्थिति को स्पष्ट कर देना चाहते थे । युद्ध को अन्त तक जीतने के लिए यह आवश्यक होता है कि अन्त तक अपनी युद्ध नीति को जहा तक हो सके गुप्त रखा जाय । ऋषि एक बार फिर ससार को बता देना चाहते थे कि राम बनवास मे किसी प्रकार की राजनीतिक चाल नही । हम नही चाहते थे कि राम जगल मे जाय । हमने राम बनवास को टालने की अन्त तक कोशिश की ।

भरत राम के पास चित्रकूट पहुचे । उन्होंने राम को लौटाने के लिये शक्तिभर प्रेरणा की । जावाली ने भी वहुत लम्बा चौडा व्याख्यान दिया । धारे सिरे कोई पेश न जाती देख, आखिर राम ने मन की बात कह ही दी । वोले, भरत ! तुम मुझ पर अयोध्या लौटने के लिए इतना भार मत डालो। अयोध्या के राजपर मेरा कानूनन कोई अधिकार नही । हमारे पिता ने जव तुम्हारी माता के साथ विवाह किया था, उस समय तुम्हारे नाना को यह वचन दिया था कि अयोध्या का राज्य कैकई की ही सन्तान का होगा । इसलिये तुम मुझ पर राज्य के लिये अधिक दवाव डालकर स्वर्गीय पिता की आत्मा को अशात न करो । राज्य तुम्हारा है जाओ और पुत्रवत प्रजा का पालन करो ।

उन्ही दिनो चित्रकूट पर्वत पर तपस्वियो का एक शिष्ट मडल राम की सेवा मे उपस्थित हो प्रार्थना करने लगा—भगवन ! पम्पा नदी, मन्दाकिनी तथा चित्रकूट पर रहने वाले तपस्वियो को राक्षस वहुत दुःख देते है, इस प्रकार वन मे बडे भयानक कर्म करने वाले राक्षसो से किया हुआ तपस्वियो का इतना घोर अनादर हम नही सह सकते, सो आप शरण के योग्य होने से हम सव आपकी शरण को प्राप्त हुए है, हे राम ! राक्षसो से वध किये जाते हम को आप बचावे,

तपस्वी और ऋषियो के उक्त वचन सुनकर धर्मात्मा राम बोले—आप मुझ से इस प्रकार प्रार्थना पूर्वक कहने योग्य नही, मैं तपस्वियों का आज्ञाकारी हू। मैंने केवल अपने कार्य्यार्थ वन में प्रवेश किया है और तुम्हारा कर्य मेरा अपना कार्य है।

राक्षसों से आपके इस अनादर को मिटाने के लिए पिता की आज्ञानुसार इस वन मे आया हूँ, मैं अचानक ही आपकी अर्थ सिद्धि के लिए यहां आ गया हूं, सो इस वन में मेरा बास बहुत फलदायक होगा। मैं तपस्वियों के शत्रु राक्षसों को रण में हनन करने की इच्छा करता हूं। हे तपोधन,ऋषियो! आप भ्राता के सहित मेरे बल को देखें।

तपस्वियो को तथा ऋषियो को इस प्रकार आश्वासन दे राम ने दण्डक वन मे प्रवेश किया। विराध तथा कदम्ब आदि राक्षसो का सहार करते, शरभग-सुतीक्षण ऋषियो के आश्रम मे ठहरते राम महामुनि अगस्त्य के तपोवन की ओर चले।

आश्रम को दूर से देख लक्ष्मण से बोले—लक्ष्मण यह उस पुण्यकर्मा ऋषि का तपोवन है जिन्होंने लोगों के हित की कामना से अपने बल द्वारा आर्य्यों के मृत्यु रूप राक्षसों को छिन्न-भिन्न करके दक्षिण दिशा शरण लेने योग्य बना दी है। उनका यह आश्रम है जिनके प्रभाव से राक्षस भयभीत हुए दक्षिण दिशा को देखते हुए भोग नहीं सकते। जब से इस पुण्यकर्मा मुनि ने यह दिशा अपने आधीन की है तभी से राक्षस लोग वैर त्याग कर शान्त हो गये हैं। हे सौम्य। मैं वनवास का शेष समय यहां व्यतीत करता हुआ महामुनि अगस्त्य की आराधना करूंगा।

तदनन्तर राम सीता तथा लक्ष्मण सहित हरिणो से भरे आश्रम को देखते हुए भीतर प्रविष्ट हुये, और उधर शिष्यो से घिरे ये मनि भी

अभ्यागार से वाहर निकले तब मुनियो सहित सम्मुख आते हुए उन तेजस्वी अगस्त्यमुनि के राम ने दर्शन किये।

राम ने सूर्यतुल्य तेजस्वी मुनि के आते ही पाद ग्रहण किये, और अभिवादन करके खडे हो गये। तत्पश्चात राम लक्ष्मण तथा सीता का यथायोग्य अतिथि सत्कार करते हुए ऋषिवर वोले—राम ! यह दिव्य वैष्णव महाधनुष जो सुवर्ण तथा वज्र से भूषित और जिसको विश्वकर्मा ने वनाया है, यह ब्रह्मा से दिया हुआ सूर्य के समान अमोघ तीर और यह महेन्द्र के दिये अक्षय दो सायक, यह सुवर्ण से भूषित चादी के मयान वाली तलवार,हे राम ! इन सबको विजय के लिये स्वीकार कर।

(५)

पञ्चवटी में

इतो द्वियोजने तात बहुमूलफलोदकः।
देशो बहुमृगः श्रीमान्पञ्चवट्यभिविश्रुतः॥
तत्र गत्वा श्रमपदं कृत्वा सौमित्रिणा सह।
रमस्व त्वं पितुर्वाक्यं यथोक्तमनुपालयन्॥
हृदयस्थं च ते छन्दो विज्ञातं तपसा मया।
अतश्च त्वामहं ब्रूमि गच्छ पंचवटीमिति॥

कुछ दिन पश्चात महामुनि राम से वोले—राम ! यहा से दो योजन पर वहुत मूल, फल तथा जल वाला और वहुत मृगो वाला शोभायमान स्थान पचवटी है। तुम्हारे हृदय का अभिप्राय मैंने तप द्वारा जान लिया है इसलिए मैं तुम्हे पचवटी मे निवास करने की सम्मति देता हू। सीता तथा लक्ष्मण सहित वहा जाकर रहे। ऋषि का ऐसा आदेश पा राम ने पचवटी मे निवास किया।

एक दिन की वात है—राम प्रात काल के सन्ध्या अग्निहोत्रादि कर्म करके वाहर पर्णशाला मे वैठे कुछ वार्तालाप कर रहे थे कि इतने में ही एक राक्षसी अपनी इच्छा से वहा अचानक आ गई। आते ही उस राक्षसी ने पूछा—धनुष वाण लिये हुए स्त्री सहित आप कैसे राक्षसों

से सेवित इस देश में आये है ? राम ने शूर्पणखा मे वहा आने का अभिप्राय पूछा। शूर्पणखा ने राम से विवाह की प्रायना की, परन्तु राम पचवटी में प्रेम का सौदा करने नही आये थे। उन्होने शूर्पणखा की प्रार्थना को ठुकरा दिया। शूर्पणखा ने इसे अपना अपमान समझा। शूर्पणखा को अपनी सुन्दरताका कुछ कम अभिमान न था। हमारी दृष्टि में भले ही शूर्पणखा काली कलूटी और भद्दी सूरत वाली हो, परन्तु यदि पक्षपात का पर्दा उतार कर सोचा जाय तो ऐसी काली कलूटी औरत को राम जैसे सुन्दर पुरुष के कम्पीटीशन मे आने का साहस ही न होता। वास्तव में शूर्पणखा वहुत सुन्दरी थी। रामायण मे उसे अनेक स्थलो पर "मनोज्ञाङ्गी" मन को मोहने वाली लिखा है। अब उसे यह चिन्ता थी कि राम द्वारा ठुकराई हुई उसकी प्रेम प्रार्थना का रहस्य कही ससार पर प्रगट न हो, लोकापवाद से बचने के लिए उसने यही उपाय समझा कि मूल को ही नष्ट कर दिया जाय। वह भागी भागी खर के पास पहुची, परन्तु वहा जाकर भी उसने सच्ची बात नही बताई। उसने इस मामले को सरासर पौलिटीकल रग दे दिया। उसने राम के आगमन को विदेशियो द्वारा आक्रमण की भूमिका ही बताया और आक्रमण को आरम्भ मे ही नष्ट-भ्रष्ट कर देने के लिए उसे उकसाया। खर और दूषण ने अपनी पूरी शक्ति से राम पर आक्रमण किया। यद्यपि राक्षस सेना की जनशक्ति अधिक थी, परन्तु राम के पास ऐसे-ऐसे युद्ध के अस्त्र-शस्त्र थे जिन के सामने राक्षस टिक न सके।

स्वरूपणखा के नाक काटने की बात निश्चय ही कवि के वर्णन की शैली मात्र है। राम इतने गिरे हुए नही थे जो एकान्त में आई अबोध बालिका के नाक-कान पर हाथ उठाते। स्वरूपणखा ने राम से विवाह की प्रार्थना करके कोई पाप नही किया था। यदि एक लडके को अधिकार है कि वह एक लडकी को प्रेम भरी चिट्ठी लिखे, तो यदि एक लडकी भी किसी लडके को प्रेम भरी चिट्ठी लिखती है तो कुछ भी

बुरा नही करती । यदि शूर्पणखा, सीताजी को अपनी सफलता के मार्ग का रोडा समझ उन्हे खा जाने को उनकी ओर झपटी ही थी तो सीता भी तो दूध पीती बच्ची न थी । यह सीता का काम था कि वह स्वरूपणखा को सम्भालती, उसकी गरदन पकड उसकी मरम्मत करती । राम को यह शोभा नही देता था कि वह किसी पराई औरत का अग भग करे, यह काम तो सीता का था । शूर्पणखा अकेली थी, उसके साथ न तो उसका भाई ही था और न ही उसका कोई सगी साथी । राम, लक्ष्मण, सीता तीन थे । ऐसी अवस्था मे बहुसख्यको को अल्पसख्यको के अधिकार की रक्षा करनी चाहिये थी । यदि शूर्पणखा का भाई अपनी बहन के साथ होता, तो सीता की सहायता करना राम के लिए नि सन्देह शोभनीय था, परन्तु जब बेचारी शूर्पणखा अकेली ही थी, राम को चाहिये था वह सीता को आगे करते । औरतो की लड़ाई मे दखल देना मर्दों को शोभा नही देता । सीता न तो खाड की ही बनी हुई थी, जिसे शूर्पणखा खा जाती और न ही वह मोम की बनी थी कि छूते ही टूट जाती । सीता आर्यावर्त की वह आदर्श देवी थी जिसकी वीरता के कारनामे ससार आज भी गा रहा है । जिस धनुष को ससार के योधा मिलकर हिला तक न सके सीता ने उस धनुष को खिलौना समझ कर उठा लिया । इतने जोर वाली सीता जिस ने फौलादी धनुष को तोड दिया, क्या वह एक औरत की चमडे की गरदन न मरोड सकती थी ?

और राम का आदर्श तो इतना ऊंचा था कि ताडका वध के समय मर्यादापुरुषोत्तम राम ने स्त्री पर हाथ उठाने से इनकार कर दिया— अरे ! यह स्त्री है ! आर्य पुरुष देवियो पर हाथ नही उठाया करते । जिस ताड़का के पास तोपखाना था, जिसके साथ उसका सेना थी, अस्त्र-शस्त्र थे ऐसी ताडका पर भी राम ने हाथ उठाने से इनकार कर दिया । वही राम एकान्त मे आई एक देवी पर हाथ कैसे उठा सकते थे ?

वास्तव मे राम ने स्वरूपणखा का अगभंग कदापि नही किया,

सरूपणखा ने राम के सामने अपने रूप लावण्य की महिमा बखानी। उसने राम को लुभावने शब्द भी सुनाये। "मै राक्षसराज की बहन हू। आधे राज्य पर मेरा अधिकार है। मेरे पति बनकर आप आधे राज्य का सर्वाधिकार प्राप्त कीजिये। परन्तु राम ने इन दोनो प्रलोभनों को ठुकरा दिया। सुन्दरता का प्रतीक नाक है और शब्द का प्रतीक कान। राम ने सरूपणखा के रूप को भी ठुकरा दिया और राज्य के प्रलोभनो को भी, दूसरे शब्दों में राम ने उसकी नाक भी काट दिया और कान भी। वास्तव मे चाकू-छुरी से काटना ही काटना नही, नाक तो विना चाकू-छुरी के, विना एक भी रक्त का विन्दू गिराये भी कट जाती है। बेटी के विवाह पर पाच हजार खर्च न कर सके, बस नाक कट गई। पडोसन ने बनारसी साढी खरीदी हमने बाहिर जाना छोड दिया, यदि वैसी साडी पहने विना हम वाहिर चले गये हमारी नाक कट जायगी। हमें स्वरूपणखा के नाक का तो वहुत ध्यान है, परन्तु हमारी अपनी नाक जो दिन में वीसियो वार कट कर रात का सोते समय फिर जुड जाती है उस नाक का हमें विल्कुल ध्यान नही।

(६)

लङ्काधिपति रावण

स ददर्श विमानाग्रे रावणं दीप्त तेजसम्।
उपोपविष्टं सचिवैर्मरुद्भिरिव वासवम्॥
आसीनं सूर्यसंकाशे कांचने परमासने।
रुक्मवेदिगतं प्राज्यं ज्वलन्तमिव पावकम्॥
विशालवक्षसं वीरं राजलक्षण लक्षितम्।
सुभुजं शुक्लदशनं महास्यं पर्वतोपमम्॥

खर-दूषण और त्रिशिरा के देहान्त के पश्चात स्वरूपणखा रोती-विलखती रावण के सामने उपस्थित हुई। ऊचे महल के ऊपर तेजस्वी रावण इन्द्र-तुल्य मन्त्रियो सहित सूर्य के समान देदीप्तमान सुवर्ण के

परमासन पर इस प्रकार शोभायमान था जैसे सुवर्ण की वेदि मे प्रचुर घृत से प्रज्वलित अग्नि देदीप्तमान होती है। विशाल छाती वाला, वीर, राज लक्षणो से युक्त, सुन्दर भुजाओं वाला, श्वेत दातों वाला, बड़े मुखवाला और पर्वत के तुल्य आकार वाला जिसने गम्भीर समुद्रों को हिलचल मे डाला हुआ है, और जो भोगवतीपुरी मे जाकर वासुकी को जीत तक्षक की प्यारी पत्नी को हर लाया है। और जिसने कैलाशपर्वत पर जाकर कुवेर को जीत अपनी इच्छानुसार चलने वाला पुष्पक विमान छीना हुआ है, ऐसे अपने महाबली भयंकर भाई रावण को दिव्य वस्त्र पहने हुए तथा दिव्य मालाओ से शोभायमान उस शूर्पणखा ने देखा और बोली—क्या तू उत्पन्न हुए घोर भय को नही जानता जिसका जानना तेरे लिए आवश्यक था, जो राजा देश को अपने अधीन न रख कर उसकी रक्षा नही करते वह अपनी बुद्धि से प्रकाशित नही होते, जैसे समुद्र[१] मे पर्वत नही दीखते। जो राजा गुप्तचरो द्वारा दूरस्थ सम्पूर्ण बातो का ज्ञान रखते है वह दीर्घ चक्षु कहलाते है। भयकर कर्मो वाले चौदह सहस्र राक्षस और दूषण सहित खर को अकेले राम ने मार दिया है, शान्तिपूर्वक काम करने वाले राम ने ऋषियों को अभय देकर दण्डकवन मे कल्याण कर दिया है और हमारा जनस्थान भय को प्राप्त है. सो हे राक्षस! क्या आप अपने ही देश मे पैदा हुए इस भय को नही जानते।

सरूपणखा के ऐसे वचन सुन रावण ने सोचा जोश में आकर एक-दम कोई कदम उठाना ठीक न होगा। न जाने राम के पीछे कितनी शक्ति हो। न जाने चुपचाप आर्यावर्त के लोगो ने कितनी तैयारी कर रखी है। जिस राम ने निमिषमात्र में खरदूषण की सेनाओ का संहार कर दिया, बिना पूरी तैयारी के समुद्र पार जाकर राम से टक्कर लेना सहज नही। बाली उसका ऐसा ही मित्र था जैसा स्टालिन चर्चिल का। अब बाली के सहयोग का उसे आशा न थी; खरदूषण की सत्ता छिन्न-भिन्न हो जाने के पश्चात समुद्री तट पर पूरी तरह राम का कन्ट्रोल

था। ऐसी अवस्था मे रावण के लिए यह समस्या भी एक विचारणीय थी कि सैनाओ को समुद्रपार तट पर कैसे उतारा जाय। अभी गत युद्ध मे ससार ने देखा हिटलर के बीच अन्त में भले ही चार काने भी न निकले हो परन्तु अग्रेजो पर उसका आतक खूब रहा। चार साल तक अग्रेजो की हिम्मत नही पडी कि वे २३ मील की चैनल को पार कर सकें।

एकाएक चारसौ मील चौडा सागर पार करना बच्चो का तमाशा न था। अत रावण ने सोचा मैदाने जग हिन्दुस्तान न बने, कोई ऐसा उपाय सोचू जिससे राम स्वय लङ्का मे आ जाए। राम के समाप्त हो जाने पर आर्यावर्त की सत्ता स्वत ही छिन्न भिन्न हो जायगी। अन्त में उसने लका को ही मैदाने जग वनाने का निश्चय किया—। परन्तु राम को वह लका में बुलाए कैसे। उसने कुछ सोचा और मन्त्रियो को आज्ञा देकर वहा से चल पडा, और चुपचाप यानशाला मे जाकर सारथि को कहा कि शीघ्र ही रथ तैयार कर, रावण की आज्ञा पाते ही सारथि ने तत्काल ही उनके अभिमत उत्तम रथ तैयार कर दिया। तब अपनी इच्छा से चलने वाले रत्नो से भूषित सुनहरी रथ (Plane) पर चढकर श्रीमान राक्षसाधिपति रावण नद तथा नदियो के पति समुद्र की ओर गया, और समुद्र से पार होकर वन के मध्य एकान्त पवित्र रमणीय देश मे उसने एक आश्रम देखा जिसमे काला मृगान पहने हुए, जटा मडलधारी, नियताहारी मारीच को देखा। मारीच के पास जा रावण हाथ जोड बोला—हे तात ? तू मेरे वचन को सुन, मै इस समय वडा दुखी हू और मुझ आर्त का आप एकमात्र सहारा है।

मारीच द्वारा पूछे जाने पर रावण ने अपना अभिप्राय स्पष्ट शब्दो मे वताते हुए कहा— "मै राम की पत्नी सीता को वलपूर्वक जनस्थान से लाऊगा उस के लाने मे आप मेरे सहायक हो। मारीच बुद्धिमान था, वह राम की शक्ति को खूब पहचानता था। रावण की नीति का उसने समर्थन नहीं किया। विपरीत इसके उसने रावणको सीता हरण से रोका—

"रावण ! सीता हरण तुम्हे बहुत महंगा पड़ेगा । सीता हरण से तेरी अन्त राष्ट्रीय स्थिति बहुत खराब हो जायगी । राम को लका पर आक्रमण करने का एक बहाना मिल जायगा, युद्ध को जीतने के लिये लोकवाणी को अपने पक्ष मे लाना हितकर होता है । सीताहरण से लोकवाणी सर्वथा तेरे विपरीत हो जायगी । स्वय तेरे अपने घर मे फूट पड जायगी । जो तेरे विरोधी तुझे नष्ट हुआ देख स्वय लका का राज प्राप्त करना चाहते हे उन्हे सीता-हरण के प्रश्न को नैतिक पतन का प्रतीक समझ तेरा विरोध करने का मौका मिल जायगा । इसलिये भला इसी मे है कि सीता हरण के विचार को छोड वापिस अपने घर को जा । परन्तु रावण को अपनी नीति पर पूरा भरोसा था । उसे अपनी ताकत पर भी भरोसा था । उसे इस बात का पूरा विश्वास था कि एक बार राम के लका आ जाने पर फिर राम का जावित लौटना सम्भव न होगा ।

मारीच के इसप्रकार वचन सुन रावण ने झट अपना रग-ढग बदला। उसका चेहरा लाल हो गया । गरज कर उसने कहा—मारीच ! मै प्रार्थना नही करता बल्कि तुम्हे आज्ञा देता हू कि तुम्हे मेरा वचन मानना ही होगा । राजा के विरुद्ध आचरण शुभकारी न होगा । रावण ने तलवार सूत ली । कहो मारीच ! मेरी आज्ञा का पालन करोगे या यही तुम्हारा किस्मा समाप्त करूं । आखिर मारीच ने रावण का काम करना स्वीकार किया । परन्तु रावण भी खूब समझता था—जबरदस्ती तो इसे भरती किया है, अगर मौके पर इसने काम विगाड दिया तो । उसने एक बार फिर पूछा—क्या तैयार हो ? अगर तैयार हो तो आओ मेरे साथ समुद्र के तट पर और हाथ मे गगाजल लेकर शपथ खाओ कि मेरा काम वफादारी और नेकनीयती से करोगे। मारीच के लिये अब दो ही रास्ते थे—या तो वफादारी का हल्फ उठाये या जान से जाय, मौत दोनो ही ओर थी । अगर वह वफादारी का हल्फ उठाने के पश्चात विश्वास घात करता है तो भी उस के लिये नरक का द्वार खुला है, यदि वह मरता है तो भी राजा के हाथ से मरने वाले को

शास्त्रकारो ने नरक मे ही स्थान दिया है। आखिर मारीच ने वफादारी का हल्फ उठा कर समय टालना उचित समझा। तत्पश्चात रावण और मारीच विमानतुल्य रथ पर आरूढ हो शीघ्र ही राम के आश्रम मे गये।

मारीच यदि चाहता तो रावण को रंगे हाथो पकडवा देता। रावण को वह आश्रम के आस पास में छुपा आता और उसे यह दिलासा दे आता कि वह उसका काम पूरा कर देगा। उधर राम के पास जाकर रावण के वहा छिपकर बैठने का तथा सीता को हरने की उसकी नीयत का पूरा-पूरा हाल बता देता। 'रावण पकडा जाता और रामायण का लका काण्ड पञ्चवटी मे ही समाप्त कर दिया जाता। परन्तु मारीच ने ऐसा क्यो न किया ?

वास्तव में मारीच हिरण न था। वह ६० वर्ष की आयु का एक वनप्रस्थी सज्जन था, वह मनुष्य था। मनुष्य के लिये हिरण बन जाना और हिरण के समान चमडी धारण कर लेना, असम्भव ही नही बल्कि अप्राकृतिक भी है। कितने आश्चर्य की बात है कि रावण को अपनी लका मे तो एक भी आदमी ऐसा नही मिला जो मृग बन सकता हो। दूसरे शब्दो मे इसका अर्थ यह है कि तत्कालीन ससार में एक मारीच ही ऐसा था जो मृग बन सकता था। परन्तु उस दिन के पूर्व भी क्या किसी ने उसे मृग बनते देखा ? यदि देखा तो उसके मृग बनने का उद्देश्य क्या था। अपने इस मायाचार द्वारा क्या वह जनता को दो घडी प्रसन्न करने के लिये खेल खेला करता था। रावण को पता कैसे लगा कि मारीच हिरण बन सकता है। अच्छा तो यह था कि मारीच हिरण बनने की बजाय शेर बनकर रावण को ही खा जाता, या कबूतर बनकर आकाश में उड जाता।

सच बात तो यह है कि बेचारा मारीच एक साधारण सा व्यक्ति था। मनुष्येतर किसी अन्य स्वरूप को धारण करने की उसमे सामर्थ्य न थी—परन्तु रावण का काम वही कर सकता था। रावण को ऐसे आदमी की खोज थी जो राम का मित्र भी हो (ताकि राम उससे बात

करना स्वीकार करे) और राम का शत्रु भी हो (ताकि वह रावण का हित रखे)——लका मे तो राम से पूर्व परिचित कोई आदमी न था। रावण आर्यावर्त के इतिहास को जानता था। उसका ध्यान मारीच पर गया। मारीच राम का दुश्मन था। क्योकि वह ताडका वन मे राम से लड़ा था, और राम का मित्र था क्योकि उस दुश्मनी को सोलह सत्रह वर्ष से भी ऊपर हो गये थे। रावण मनोविज्ञान का पण्डित था। उसे पूरा विश्वास था कि राम मारीच के साथ बात करना अवश्य ही स्वीकार कर लेगे। रावण को ऐसा ही आदमी चाहिये था जो राम लक्ष्मण को बातो-बातो मे कुटिया से दूर ले जाता। रावण इस सम्बन्ध मे निश्चिन्त हो जाना चाहता था जिस समय वह सीता-हरण के लिये जाए उस समय राम लछमन कुटिया पर न हो। ऐसा व्यक्ति जिसके सम्बन्ध मे पता नही दोस्त है अथवा दुश्मन,जिसकी चाल का कुछ पता नही उसकी उपमा कविगण हिरण से दिया करते है जिस प्रकार हिरण की गति कोई निश्चित नही। ऐसे मारीच हिन्दुस्तान के इतिहास मे और भी अनेको हो चुके है। जयसिह, मानसिह, यशवन्तसिह इत्यादि ऐसी कितनी ही मिसाले हमारे सामने है। जयसिह शिवाजी का शत्रु भी था और हितैषी भी। मानसिह प्रताप का शुभचिन्तक भी था और शत्रु भी। ऐसे लोग भी अपने-अपने समय के मारीच ही कहे जा सकते है।

मारीच राम के पास गया। बातो-बातो मे वह राम लक्ष्मण को कुटिया से बाहिर ले गया, परन्तु प्रश्न तो यह है कि जिस समय रावण ने सीता को छलने की चेष्टा की, सीता ने अपने बचाव की कोशिश क्यों न की ? यदि यह कहा जाए कि रावण खूब तैयार हो कर आया था, सीता बे खबर थी, और न सही तो कम से कम सीता जोर जोर से राम और लक्ष्मण को पुकार ही देती। आखिर इस सारे खेल में कुछ समय तो लगा ही होगा। राम लक्ष्मण कुटिया से बहुत दूर न थे, अगर मारीच की आवाज सीता को सुन सकती थी तो क्या सीता यदी पूरे जोर से पुकारती तो उस की आवाज सुनने वाला पास मे कोई भी न था ?

खरदूषण के मरने के पश्चात् खरदूषण के राँज्य का क्या बना ? क्या हमने कभी सोचा। यह तो हम बडी आसानी से कह देते है कि राम ने खरदूषण की १४ हजार सेना को मार गिराया लेकिन क्या हमने कभी इतना भी सोचा कि जिस प्रजा की रक्षा के लिये यह १४ हजार सेना थी, जिस प्रजा के टैक्सो से इस सेना का पालन-पोषण होता था खरदूषण के पश्चात् उस प्रजा का क्या बना। राम ने खरदूषण के प्रदेश पर क्यो कब्जा न किया ? एक बडे प्रान्त के राजा को जीतकर भी राम पचवटी में ही क्यो रहे ? क्या उस समय उनके पास एक भी आदमी न था जो राम लक्ष्मण के बाहिर चले जाने के बाद सीता के पास रहता। आदमी न सही कोई औरत ही होती, सेविका ही होती। अगस्त्य का आश्रम बिल्कुल पास था वहा से भी लोग आते-जाते रहते होगे ?

देखिये तो सही एक बहुत ही बडे अचम्भे की बात। एक तरफ तो हमें यह बताया जाता है कि राम ने चौदह हजार सेना को एक ही बाण से वेंध दिया, हमे यह बताया जाता है कि राम ने एक ही बाण से सात ताल एक साथ बेध दिये, एक तरफ तो हमे इतनी बडी-बडी बाते बताई जाती है फिर साथ ही हमें यह भी बता दिया जाता है कि राम ने एक हिरण को देखा, हिरण आगे-आगे और राम पीछे-पीछे, राम हिरण का निशाना नही कर सकते। जो राम अन्धेरे मे शब्द-भेधी बाण मारा करते थे वे दिन की रोशनी में अपना सारा जोर लगाकर भी हिरण को पकड न पाये। आखिर सच्चाई का भी तो पता चले। या तो यह मान लिया जाये कि वह हिरण ही ऐसी धातुओ को मिलाकर बनाया गया था जिन पर बाण असर ही न कर सकते थे अथवा यही हो सकता है कि राम जान-बूझकर समय टाल रहे हो और हिरण को वेधने की स्वय ही कोशिश न करते हो।

रावण का सीता को छलने की कोशिश करना और सीता का अपने बचाव के लिये कुछ भी हाथ-पैर न मारना इस बात को स्वय मान लेने से अथवा बढा चढाकर श्रोताओ के सम्मुख उपस्थित करने से न तो सीता

ही का कोई गौरव है और न ही प्राचीन भारतीय सभ्यता की शान। अच्छा होता यदि सीता कुटिया मे ही रावण का सिर फोड देती ताकि हम आज अपनी बहनो के सामने एक उदाहरण तो पेश कर सकते कि जब कोई आजकल के जमाने का रावण उन्हे छलने के लिये आये उन्हे भी सीता ही के समान उस व्यभिचारी का सिर फोड देना चाहिये। परन्तु हम तो अपनी देवियो के सामने इससे सर्वथा विपरीत आदर्श रखते है। हम उन्हे कहते है सीता रोता ही रह गई। रावण उसे बलपूर्वक उठाकर ले गया, बेचारी औरत की जात थी करती क्या— परिणाम यह कि आज सिन्ध, फ्रन्टियर तथा पूर्वी बगाल मे कितनी हो सीताये रावणो के कब्जे मे बैठी है, परन्तु वे राती है—वे कहती है हम औरत की जात हम करे क्या ?

हमारा पक्ष तो बिल्कुल सीधा और साफ है। हमारा यह दृढ मत है कि राम बनवास हुआ ही रावण-वध के लिये था। राम अयोध्या से चलकर इतनी दूर इसी लिये आये थे। ऋषियो की दृष्टि मे रावण द्वारा सीता-हरण अन्त राष्ट्रीय ससार की दृष्टि मे रावण की स्थिति का कमजोर बनाने के लिए बहुत बडा अस्त्र था। आखिर राम के पास लका पर धावा बोलने का कोई बहाना भी तो होना चाहिये था। राम जानते थे कि सीता-हरण अवश्य होगा। ऋषि भी चाहते थे कि सीता-हरण अवश्य हो। सीता का राम के साथ आना केवल इसी उद्देश्य के लिये था। ऋषियो को रावण के चरित्र पर पूरा भरोसा था। आयु की दृष्टि से रावण सीता के लिये पिता के समान था। आज हमारी दृष्टि में रावण के आचार की चाहे कोडी कदर न हो, परन्तु अपने जमाने मे रावण जितेन्द्रिय, सदाचारी तथा एक आदर्श आर्य-पुरुष था। क्या आधुनिक आजादी की लडाई मे हजारो देविया जेलो मे नही गई ? क्या हम उन देवियो के चरित्र पर अथवा उन्हे कारागार मे बन्द रखने वाले लोगो के चरित्र पर कोई लाछन लगा सकते है, अग्रेज की जेल में हमने माताओ-बहनो को भेजा परन्तु हैदराबादी निजाम की जेल मे हमने

एक भी देवी को नही भेजा। क्यो ? अंग्रेज के चरित्र पर गांधी को विश्वास था परन्तु निजामी गुण्डो पर हमे विश्वास न था।

बात तो सारी विश्वास की है। हमको अगर अपने सगे भाई पर विश्वास नही तो हम अपनी बहु-बेटी को उसके पास तक फटकने न देगे, यदि हमें पराये पर विश्वास है तो अपनी बहु-बेटी को उसके साथ प्रसन्नतापूर्वक भेज देगे। रावण के चरित्र पर ऋषियो को विश्वास था। उन्हे इस बात का पक्का विश्वास था कि रावण की जेल मे सीता पर राजनैतिक अत्याचार भले ही हो परन्तु सीता के आचार पर किसा प्रकार के हमले का भय नही।

भगवान यर्मादा पुरुषोतम राम यह अच्छी प्रकार से जानते थे कि मारीच रावण का भेजा हुआ आया है। मारीच किस लिए आया है इस बात को भी राम खूब समझते थे। राम यह भी खूब अच्छी तरह जानते थे कि रावण पर्णकुटी के पास ही सीता-हरण की नीयत से छिपा बैठा है। विचारणीय प्रश्न केवल इतना ही है कि राम ने रावण का किस्सा वही क्यो न समाप्त कर दिया। यदि लका पर धावा बोलने का उद्देश्य रावण-वध ही था यह काम तो राम उस समय भी कर सकते थे। राम ने समुद्र पार जाकर रावण को क्यो मारा, पचवटी मे ही रावण को समाप्त क्यो न,कर दिया। लका मे तो रावण के पास सेना तथा अस्त्र-शस्त्र भी थे, परन्तु पचवटी में तो रावण अकेला ही था। यदि राम-बनवास का उद्देश्य रावण को नष्ट-भ्रष्ट करना ही था, तो राम के लिये यह कही अच्छा था, कि पचवटी मे सीता-हरण की नीयत से आये रावण को पकडकर बाध लेते और अयोध्या के चिडियाघर मे उस दश सिर वाले अजीबोगरीब इन्सान की नुमायश करते।

परन्तु जिस उद्देश्य को लेकर राम बनवास हुआ था वह उद्दश्य लका में जा कर ही पूरा हो सकता था। The Aryan Rishis were not against Ravana, they were against Rava nism, just as the British were not against Hitler

though they were deadly against Hitlerism the so called Nazism. रावण को वन्दी वना लेने से अथवा रावण के व्यक्तित्व को नष्ट भ्रष्ट कर देने से ही राम वनवास का उद्देश्य पूरा नही हो सकता था। ऋषियो को रावण के व्यक्तित्व से इतना भय न था जितना भय उसकी पारटी से था। एक हिटलर को मार दने से ही अंग्रेजों का भय समाप्त न हो पाता। अगर हिटलर मर जाता तो गौराग हिटलर वन जाता, अगर गौराग भी मारा जाता तो हिमलर हिटलर वन जाता अग्रेजों का भय तो तभी दूर हो सकता था जव जड मूल से नाजी पारटी को ही नष्ट भ्रष्ट कर दिया जाता। ऐसा लन्दन मे वैठें २ तो हो न सकता था। इस के लिये नौरमडी के तट पर फौजे उतारना आवश्यक ही था। नाजी पारटी के घर पर जाकर उसका उन्मूलन किया जा सकता था। अत रावण-इन-कौसिल को नष्ट करने से ही लका तथा आर्यावर्त के सम्वन्ध अच्छे हो सकते थे। राम वनवास का उद्देश्य तभी पूरा हो सकता था जव राम लका मे जाकर रावण, मेघनाद, कुम्भकरण, अक्षयकुमार, प्रहस्त, नरान्तक इत्यादि को समाप्त कर रावण के ही परिवार के किसी ऐसे व्यक्ति को लकाधिपति वनाते जो आर्यावर्त के साथ अच्छे सम्वन्ध रख और अयोध्या के सम्राट के हाथो की कठपुतली वनकर रहना स्वीकार करे।

अगर राम पचवटी मे ही रावण को मार देते तो मेघनाद रावण वन जाता और रावणवध की खवर पाते ही लका मे जोर शोरसे लडाई की तैयारिया होने लग जाती। पश्चिमोत्तर सीमा के असुर जो रावण के परम मित्र थे वे तो तत्काल ही देव-लोक पर धावा वोल देते। इधर लका की सैनाये आर्यावर्त के दक्षिणी तट पर उतर आती। दो जवरदस्त मोर्चे वन जाते। एक ओर समार होता, दूसरी ओर केवल राम। लोक-वाणी भी उस स्थिति मे राक्षसो के ही पक्ष मे होती। ससार यह कहता राम ने निर्दोष रावण का वध कर के जान वूझ कर युद्ध के देवता को

सोते से जगाया है। जहाद-जहाद के नारे लगाता हुआ सारा ससार आर्यावर्त की सभी सीमाओ पर टूट पडता।

यदि राम पचवटी मे रावण को मार देते, और ससार राम से पूछता—बताओ राम! रावण ने तुम्हारा क्या अपराध किया था जो तुमने उसे मार डाला। राम क्या जवाब देते। अधिक-से-अधिक राम यही कह सकते थे—रावण सीता-हरण करना चाहता था, पेश्तर इसके कि वह सचमुच ऐसा करता मैंने सिंह-नीति का पालन करते हुए उसे पहले ही समाप्त कर दिया। परन्तु रावण सचमुच सीता हरण की ही दृष्टि से वहा आया है, राम के पास केवल सन्देह के और दूसरा सबूत क्या था? ससार राम से पूछता—भगवन्! आप यह बताइये कि आप अयोध्या से चलकर पचवटी गये ही क्यो थे। यदि आपको वनवास के चौदह वर्ष ही व्यतीत करने थे तो जहा तेरह वर्ष काटे वहा क्या चौदहवा वर्ष नही कट सकता था। अन्तिम वर्ष आप अगस्त्य ऋषि के आश्रम मे ही रहते। शत्रु के प्रदेश मे आपने प्रवेश ही क्यो किया। रावण अपने इलाके मे था, वह अपने प्रदेश का बादशाह था उसे इस बात का पूरा अधिकार था कि वह अपने प्रदेश में जिस प्रकार चाहे स्वच्छन्द विचरन करता। अत राष्ट्रीय ससार राम पर यह अपराध लगा सकता था कि राम वनवास का मुख्य हेतु केवल रावण को किसी न किसी उपाय से न्याय अथवा अन्याय से जान से मार डालना ही था।

महापुरुषो को लोकवाणी (world opinion)का बहुत ध्यान रहता है इसीलिये अपनी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को यथापूर्व मजबूत बनाये रखने के लिये और लका मे पहुचकर रावण एण्ड हिज पार्टी को समाप्त करने से पहले राम किसी भी प्रकार से ससार की दृष्टि मे अपने पक्ष को निर्बल बनने नही देना चाहते थे। वास्तव में राम की यह बुद्धिमत्ता ही राम की अन्तिम विजय का मुख्य कारण था। राम की उच्चतम नैतिक महानता का ही पुण्य प्रताप था कि न केवल रावणके मित्र-राष्ट्रो ने ही रावण का साथ नही दिया, बल्कि स्वय रावण के अपने घर में भी

फूट पड गई । मेघनाद तथा कुम्भकरण सरीखे रावणीय सत्ता के स्तम्भ भी डावाडोल हो गये ।

रावण को अपनी योजना पूरी करनेमे.पूर्णतया सफलता प्राप्त हुई। राम, सीता, लक्ष्मण अथवा अगस्त्य प्रभृति महामुनियो की ओर से रावण के मार्ग मे किसी प्रकार की वाधा उपस्थित नही की गई । अपहरण के समय सीता ने विलाप अवश्य किया, वह भी केवल इसलिये, ताकि रावण के दिल मे ऋषियो की योजना के सम्बन्ध मे कोई सन्देह उत्पन्न न हो । अपहरण के समय यदि सीता कुछ भी हाथ पैर न मारती, यदि एक भी आसू न गिराती तो शायद रावण समझता सीता हरण मे कुछ ऋषियो का स्वार्थ है । यदि सीता के सामने रावण से बचने का ही प्रश्न होता तो जटायू का थोडा बहुत आश्रय प्राप्त कर सीता और जटायू दोनो मिलकर रावण की खूब मरम्मत कर सकते थे । जहा ऊचे पर्वत पर कुछेक वानरो को बैठे देख सीता ने गहने गिराये थे, यदि रावण के दुराचार के सम्बन्ध मे सीता के हृदय मे लेशमात्र भी सन्देह होता, वह अवश्य ही उस पर्वत पर कूद कर अपनी इज्जत बचाती । परन्तु सीता इस वात को भली प्रकार जानती थी कि रावण के कारागार मे उसके चरित्र पर किसी प्रकार का हस्तक्षेप न होगा ।

रावण ने सीता को अपने राजमहल मे नही रखा । यदि वह रखना चाहता, ससार की कोई शक्ति उसे रोक नही सकती थी । परन्तु सीता तो उसके लिये सुलोचना के समान थी । राजमहल मे वह सीता को तभी रखता यदि उसकी नीयत खराब होती । सीता के सम्बन्ध मे उसकी मनोवृत्ति विल्कुल शुद्ध और पवित्र थी, मन्दोदरी के रहते हुए यदि रावण सीता को धर्म-पत्नी बनाने की नीयत से ही उठा कर लाता, मेघनाद इसे अपनी माता का अपमान समझता वह इस अपमान को कदापि सहन न करता, वह पहला आदमी होता जो अपने पिता के प्रति विद्रोह करता और स्वय सीता को राम के पास पहुचा देता वास्तव मे रावण को समझने मे ससार ने इस महापुरुष के साथ न्याय नही किया ।

(७)

वाली-वध

इक्ष्वाकूणामियं भूमिः सशैलवनकानना ।
तां पालयति धर्मात्मा भरतः सत्यवानृजुः ॥
तस्य धर्म कृतादेशा वयमन्ये च पार्थिवा ।
चरामो वसुधां कृत्स्नां धर्मसन्तानमिच्छवः ॥

राम और लक्ष्मण जब कुटिया मे लौटे, सीता को वहा न पा कर न तो उन्हे आश्चर्य ही हुआ और न ही दुख। विपरीत इसके उन्हे इस बात की प्रसन्नता थी, जिस अवसर की प्रतीक्षा मे वे महीनो से उस निर्जीव वन मे डेरा डाले पडे थे आखिर प्रभु कृपा से वह अवसर आगया। लका की जग सीता हरण के पश्चात ही शुरू हो सकती थी, उन्होने एक क्षण भी व्यर्थ नही गवाया वे लका की ओर चल दिये।

जिन लेखको ने अपनी कल्पना शक्ति द्वारा इस स्थल पर राम को रुलाया है वास्तव मे उन्होने राम के साथ अन्याय ही किया है। जो राम अपनी माता को छोडते हुए न रोये, जो राम अपने पिता को सामने मरते हुए देखकर न रोये, जो राम अयोध्यावासियो के प्रेम को ठुकराते हुए न रोये, वे राम सीता-हरण पर क्या रो सकते थे ? यदि राम ने रोनाही था,अच्छा होता वे पचवटीमे आते ही न। आखिर पचवटी मे उनका था क्या ? चौदहवा वर्ष वे सुख पूर्वक अगस्त्याश्रम मे व्यतीत कर सकते थे।

इस बात मे तो कुछ भी सन्देह न था कि सीता हरण रावण ने ही किया है। जटायू से मिलने के पश्चात ऐसे सन्देह की गुजायश जो थोडी बहुत थीभी वह भी जाती रही, उन्हे चाहिये था खरदूषण की बची खुची सेनाओ सहित वे रावण का पीछा करते, परन्तु नही, राम ने तो ऋषियों का आदेश पालन करना था। लका पर धावा बोलने से पहले वाली को समाप्त करना आवश्यक था। वाली रावण का मित्र था। रावण और

वाली का आपस मे यह समझौता था कि यदि कोई तीसरी ताकत दोनों में से किसी एक पर आक्रमण करेगी तो दूसरा अपने साथी की यथोचित सहायता करेगा। इस समझौते के अनुसार वाली के लिये जरूरी था कि ज्योंही राम समुद्र पार करते त्योंही वह भी रावण की सहायता के लिये पीछे-पीछे चल देता। राम दो सेनाओं के बीच मे घिर जाते। आगे से धावा बोलता रावण और पीछे से आजाता वाली, और जैसे पिस गया रूस और अंग्रेजो के बीच मे हर हिटलर, वही गति होती मर्यादा पुरुषोत्तम राम की। इसलिये लका की ओर मुह फेरने से पूर्व वाला का किस्सा समाप्त करना वहुत जरूरी था।

एक और कारण से भी वाली का मारा जाना जरूरी था। यदि वाली रावण की सहायता करने लका मे न भी जाता, परतु रामकी वढता हुई ताकत से खौफ खाकर वह लका से लौटते हुए राम पर हमला कर सकता था। इस लिये लौटती वेर इस चुभने वाले काटे को राम पहले ही उखाड जाना चाहते थे, ताकि पीछे पनप कर वह कोई उपद्रव न खडा करदे।

वाली का माराजाना एक और कारणसे भी वहुत जरूरी था वाली-वध का प्लान तो अयोध्या मे ही वनाया जा चुका था। यह पूर्व निश्चित था कि ल का पर धावा उस समय वोला जाय, जव आर्यावर्त इस स्थिति मे हो कि आवश्यकता पडने पर राम की पूरी सहायता कर सके। ऐसा कदम चौदहवे वर्ष की समाप्ति के पश्चात ही उठाया जा सकता था। चौदह साल के भीतर आर्यावर्त राम की सहायता नही कर सकता था, क्योंकि राम वनवास का अर्थ ही यह था कि चौदह वर्ष तक राम का आर्यन साम्राज्य की राजनीति के साथ कोई सम्वन्ध नही। ऐसा प्लान ऋषियो ने ही तैयार किया था। इसी मे उनका लाभ भी था। क्योकि राक्षस साम्राज्य का विस्तार वहुत ज्यादा था और आर्यसाम्राज्य राक्षसो द्वारा चारो ओर से घिरा हुआ था इसलिये ऋषि राम-रावण युद्ध को राम तक ही सामित रखना चाहते थे, वे ससार को यह वता देना

चाहते थे कि राम और रावण की लडाई दो राष्ट्रो की अथवा दो भिन्न-भिन्न साम्राज्यो की लडाई नही, यह तो महज दो आदमियो की अपनी निजी लडाई है। राम जाने, रावण जाने। इस प्रकार ऋषि अपने साम्राज्य को युद्ध की ज्वाला से अलग-थलग रख युद्ध के लिये पूरी तैयारी कर सकते थे। ऋषियो को यह विश्वास था कि निरन्तर तेरह वर्ष लडते-लडते रावण की सत्ता अत्यन्त क्षीण हो जायगी। अन्त में जब चौदहवे वर्ष मे लका पर धावा बोला जायगा तो रावण का जीतना कुछ भी कठिन न होगा। परन्तु शायद मरता क्या न करता के सिद्धान्तानुसार अपना अन्त करीब देख रावण बहुत बडी सैना मैदान मे ले आए, सम्भव था कि रावण के सग सम्बन्धीभी दूर अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया से आ-आकर लका मे जमा हो जाते। ऐसी अवस्था मे यदि राम हार जाते तो ? इसलिये ऋषि समुद्र पार की लडाई को उस समय शुरू करना चाहते थे जबकि चौदहवा वर्ष समाप्तिपर हो। अगस्त्याश्रम में बैठे हुए ऋषि दिव्य दृष्टि मे लका की क्षण क्षण मे बदलती हुई परिस्थिति पर विचार करते। यदि वे देखते—राम अपनी ही शक्ति मे विजय प्राप्त कर रहे है ऋषि चुप रहते। परन्तु राम को हारते हुए देखकर ऋषि एक दम घोषणा कर देते—चौदह साल बीत गये। अब राम हमारे है और हम राम के है। हम रामकी सहायता करेंगे, रावण के साथियो, तुमभी यदि चाहो तो रावण की सहायता कर सकते हो।

ऐसी अवस्था मे जब कि अयोध्या की सेनाए राम की सहायता के लिये आती, यदि बाली को सही सलामत पीछे छोड दिया जाता, सम्भव था कि बाली सहायता के लिए आ रही सेनाओ का रास्ता रोक लेता। इसी कारण लका जाने से पूर्व बाली को समाप्त कर देना आवश्यक ही था।

परन्तु राम के सामने सबसे बडी कठिनाई यह थी कि बाली, को मारने किस बहाने से। रावण पर धावा बोलने के लिए तो उन के पास एक बहाना था, परन्तु बाली ने तो राम का कुछ बिगाडा न था।

केवल साम्राज्य विस्तार की कामना से एक निर्दोष व्यक्ति पर आक्रमण करना राम जैसे आदर्श पुरुष के लिए शोभनीय कदापि न था। संसार राम से अवश्य ही पूछता—राम! रावण पर तो आपने इसलिए आक्रमण किया क्योंकि वह आपकी सीता को ले गया था, परन्तु बाली ने न तो सीता पर ही कभी मनसा, वाचा, कर्मणा कोई प्रहार किया, न ही आप पर और न ही आप की अयोध्या पर, फिर आपने किस अपराध मे बाली को मारा? राम के पास ऐसा कोई भी उत्तर न था जिससे वे अन्त राष्ट्रीय ससार को सन्तुष्ट कर सकते। परन्तु लका को जीतने से पूर्व बाली का मारा जाना तो अत्यावश्यक ही था।

परन्तु सुग्रीव के साथ मैत्री स्थापित करने की बजाय राम यदि बाली के साथ ही मित्रता कर लेते तो। बाली की शक्तिशाली सेनाओ की सहायता प्राप्त कर लका को वह बहुत जल्दी जीत सकते थे। परन्तु बाली के साथ समझौता करने मे एक दो कठिनाइया ऐसी थी जिन्हे पार करना राम के लिए सहज न था। मृत्यु के समय भले ही बाली ने राम को महापुरुष, ईश्वर, परमात्मा मान लिया हो, परन्तु उसके पहले तो बाली की दृष्टि मे राम का कुछ महत्व नहीं था। राम चुप-चाप अज्ञात रूप मे केवल घरेलू बातो के चक्कर मे वहा आये थे, तत्कालीन ससार की दृष्टि मे राम-वनवास का कोई राजनीतिक महत्व न था। कमजोर और सतप्त आदमी के साथ मित्रता स्थापित करना आसान है और वह मित्रता फलदायिनी भी होती है, परन्तु अपने से बडे, सन्दिग्ध परिस्थिति के सत्तासम्पन्न महाराज के साथ यदि मित्रता स्थापित कर भी ली जाय तो वह अपने लिए ही महगी पडती है। राम यदि बाली से मित्रता स्थापित कर भी लेते तो भी यह आवश्यक नही था कि बाली जैसा दिग्विजयी सूरमा सुग्रीव के समान राम के हाथो मे एक कठपुतली बन जाता। राम के जीवन का एक-एक क्षण आर्यावर्त की बहुमूल्य सम्पत्ति था। उस राष्ट्र की अमानत को सत्य और अहिंसा के विविध प्रकार के प्रयोगों में बरबाद

कर देना आज कल के महात्माओ के लिए भले ही शोभनीय हो, परन्तु मर्यादा पुरुषोत्तम राम ऐसी भूल कदापि न कर सकते थे। अपनी व्यक्तिगत भावनाओं की अपेक्षा राम को जनता की भावनाओ का अधिक ध्यान था। राम का शरीर राम ही का शरीर न था वह तो आर्यावर्त के करोडो नर नारियो की आशाओ और आकाक्षाओ का मूर्तिमान मदिर था। "क्योकि मुझे उस राज्य के अमुक-अमुक उच्चाधिकारी ने व्यक्तिगत पत्र लिखा, इसलिये मै लन्दन चला गया—मर्यादा पुरुषोत्तम राम जनता की भावनाओ को खिलवाड बनाने वाले स्वेच्छाचारी राजनीतिज्ञ नही थे। उन्हे अपने व्यक्तित्व का अभिमान बिल्कुल न था। वह जिस राष्ट्र के लिए पैदा हुए थे उसी राष्ट्र के लिये जी रहे थे। उनका ससार कल्पनाओ का ससार न था। वह उस ससारमें रहते थे जहा, धोका, फरेब, छल-कपट, विश्वासघात, मित्रमार सभी कुछ था। इन सभी निशाचरो के बीच मे राम को अपने आदर्श पर चट्टान की तरह स्थिर रहते हुए अपने ध्येय पर आगे बढना था।

भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रयोगो में ही अपने सारे जीवन को लगा देना, कोल्हू के बैल की तरह आयु पर्यन्त चलते चलते भी किसी स्थान विशेष पर न पहुचना, यह तो राष्ट्र के साथ खुला विश्वासघात है। अपने हाथो अपने उपवन को चोरो, डाकुओ, लुटेरो के हवाले कर देना उन लुटेरो की नीचता-पूर्ण भावी योजनाओ को भली प्रकार जानते हुए भी हाथ पर हाथ धरे राम भरोसे बैठे रहना और बागीचा उजड जाने पर ग्राम ग्राम में "रघुपति राघव राजा राम" की रट लगाते फिरना बीसवी शताब्दि के राजनीतिज्ञो के सम्बन्ध मे ही यह बात शोभनीय कही जा सकती है। खाई को अपने सामने प्रत्यक्ष देखते हुए उसमे कूद पडना, केवल यह देखने के लिए कि कूद कर क्या होता है जरा देखे तो सही—कोई बुद्धिमान व्यक्ति बच्चो की इन खेलो को राजनीति नही कह सकता।

बाली को मारना तो अवश्य ही था, परन्तु राम बाली-बध का

योजना को किसी प्रकार का राजनीतिक महत्व न देना चाहते थे। वाली-बध पर राजनीतिक दृष्टिकोण का रग चढाना मानों ससार को राम बनवास पर भी इसी दृष्टिकोण से विचार करने के लिए निमत्रण देना था। अत राम ने वाली के विरुद्ध एक लम्बा चौडा चार्जशीट तैयार किया। वाली पर अपने छोटे भाई की धर्म-पत्नी को अपनी धर्मपत्नी बनाने का आरोप लगाया गया। सर्वप्रथम तो वाली पर यह अपराध राम के ही बुद्धिबल का चमत्कार था, परन्तु यदि यह अपराध सत्य भी था, तो इसका यह अर्थ तो कदापि नही कि प्रत्येक छोटे बडे अपराध का दड केवलमात्र गोली से उडा देना ही है। टके सेर भाजी टके सेर खाजा और किसी के राज मे भले ही बिकता हो, परन्तु राम राज्य के सम्बन्ध मे ऐसी कल्पना करना राम रज्य का अपमान करना है। कितने आश्चर्य की बात है यह फर्दजुर्म भी राम ने वाली पर उस समय लगाया जबकि वाली राम के तीर से घायल हो चुका था। वह दम तोड़ रहा था और इस अवस्था मे न था कि वह किसी प्रकार भी अपने पर लगाए हुए फर्दजुर्म के सम्बन्ध मे सफाई पेश कर सके।

वास्तव मे राम ने वाली को अपने राजनीतिक हितो के लिये (For political purposes) ही मारा। गृहस्थ सम्बन्धी बातो को तो खामखाह बीच मे घसीटा गया। रामायण शत प्रतिशत राजनीतिक ग्रन्थ है। गुलामी के जमाने मे सर्वसाधारण राजनीति की बातो मे कुछ भय मानते है इसलिए रामायण के एक२ शब्द मे राजनीति की बजाए हमे केवलमात्र गृहस्थकी हेराफेरीही दिखाई देती है। सच बात तो यह है कि असली वाल्मीकि रामायण केवल कुछ सौ श्लोको मे थी। गगोत्तरी की निर्मल धारा ज्यू २ आग बढती गई त्यू २ मार्ग की सभी नदियां उसमे मिलती गई। और कही कहीं तो तटवर्ती नगरो और ग्रामो का गन्दा पानी भी इसी जलधारा मे आ मिला। गगा जी का पाट विस्तृत हो गया और उसमे असली गगोत्तरी की धारा को तलाश करना कठिन ही नही असम्भव हो गया।

वाली वध गाथा में तारा और रूमा की प्रेम गाथाओ का समावेश किन्ही थर्डक्लास कवियों का काम है। इतिहास केवल इतना ही है कि लका-प्रस्थान से पूर्व राम वाली का समाप्त किया जाना आवश्यक समझते थे। अपने इस ध्येय को पूरा करने के लिए उन्होने सुग्रीव से मित्रता की और वाली-सुग्रीव के द्वन्द्व युद्ध में उन्होने वाली को अपने तीर का निशाना बना दिया।

वाली-वध के पश्चात सुग्रीव और तारा का विवाह भी किसी निकम्मे कवि की ही कल्पना है। आर्यों के विवाह का आदर्श विलासता नहीं सन्तान प्राप्ति है। अगद सरीखे योग्यतम राजकुमार की माता होते हुए तारा को पुनर्विवाह की आवश्यकता न थी। रूमा भले ही सुग्रीव को वापिस मिल सकती थी। यदि ऐसा मान भी लिया जाय कि वानरों मे ऐसा रिवाज था, परन्तु जिस राम ने व्यभिचार-दोष मे वाली को गोली से उडा दिया, सुग्रीव को वह वैसे ही व्यभिचार की कैसे आज्ञा दे सकते थे। यदि छोटे भाई की धर्मपत्नी पुत्री के समान है तो बडे भाई की धर्मपत्नी भी माता के समान है। देवर-भरजाई का सम्बन्ध धर्मशास्त्र ने केवल आपदधर्म माना है। केवल सन्तान प्राप्ति के लिये ही देवर-भरजाई का सम्बन्ध माना गया है, परन्तु तारा के तो सन्तान था और सुग्रीव को यदि सन्तान की इच्छा थी तो वह रूमा से सन्तान प्राप्त कर सकते थे।वाली की इच्छानुसार वाली के सामने ही राम ने अगद को युवराज घोषित किया। इसीलिए उसे सुग्रीव का ही एक प्रकार से पुत्र माना गया तारा को सुग्रीव की धर्मपत्नी माना जाना गल्तफहमी का फल है।

हमारे साहित्य पर भी न जाने किन २ अजीबोगरीब दिमागो ने मेहरबानिया की है। ज्येष्ठ मे राम ने बाली को मारा, चार महीने विश्राम कर कार्तिक मे उन्होने लका पर चढाई बोल दी। यदि इस बीच मे चार पाच वर्ष का समय होता तो सुग्रीव-तारा का रग रलिया मनाना समझ मे भी आ सकता था, परन्तु रामायण में मिलावट करने

वाले किसी दुष्ट की नीचता तो देखिये। युवराज सेनाध्यक्ष की माता, तारा के पति को मार दिया जाता है, और अगले ही दिन या अगले ही महीने सुग्रीव के साथ उसका सम्बन्ध भी स्थापित कर दिया जाता है। मानवता का पतन तो देखिये। तारा को कम से कम एक वर्ष तो वाली का शोक मनाना चाहिये था।

वास्तव मे तारा-सुग्रीव का कोई सम्बन्ध न था, क्योकि तारा के पुत्र अगद ने यौवराज्य प्राप्त करना था अत. तारा को राजमाता कहा गया, राजा सुग्रीव था। यदि सुग्रीव की धर्मपत्नी की सन्तान ने ही राज करना होता तो तारा के सम्बन्ध मे यह गल्तफहमी पैदा ही न होती।

परन्तु राम ने बाली को छिपकर क्यू मारा? सर्व साधारण भाषा मे जिसे हम डिप्लोमैटिक चाल अर्थात कूटनीति कहते है, कवियो की दृष्टि मे उसे छिपकर मारना ही कहा जाता है। राम ने बाली को मारना था, केवल प्रश्न यह था कि वह उसे मारे कैसे। राम के सामने दो रास्ते थे। सुग्रीव की सेनाओ को वाली की सेनाओं के मुकाबले पर लाते या इक्का दुक्का कही बाली मिल जाता तो उसे मार डालते। पहला रास्ता लम्बा था सन्दिग्ध था और हानिकारक था। आमने सामने की लडाई मे सर्वप्रथम तो सुग्रीव की जीत कोई निश्चित बात न थी, दूसरे लडाई लम्बी हो जाने पर लका मे रावण को तैयारी का मौका मिल जाता और यह भी सम्भव था कि राम और वाला को आपस मे ही युद्धरत देख वह अपनी फौजे आर्यावर्त के तट पर उतार देता। जिन दिनो राम सुग्रीव के पास पहुचे वह ज्येष्ठ का महीना था। एक महीने के अन्दर अन्दर यदि बाली को नही मारा जाता तो आगे चार महीने वर्षा ऋतु थी। बरसात मे युद्ध जारी रख सकना असम्भव था। इतने में वाली भी खूब तैयारी कर लेता और फिर वही रूस-जर्मन वाला किस्सा हो जाता। राम ने बरसात के पहले पहले वाला को अवश्य ही मैदान से हटा देना था ताकि बरसात में निश्चिन्त होकर लंका पर

आक्रमण करने की पूरी २ तैयारी कर सकते। वाली-सुग्रीव की खुला लड़ाई मे दोनो तरफ का नुकसान होना जरूरी था और दोनो का नुकसान राम का अपना नुकसान था, क्योकि सुग्रीव और वाली की मिली-जुली ताकत से ही राम ने लङ्का को फतह करना था। लका में लगाई जाने वाली शक्ति को राम अपने घर मे ही बरबाद नही करना चाहते थे। वाली की फौजो, तोपो, बन्दूको और उसके खजाने के बल पर ही तो राम ने लका जीतनी थी। इसलिए राम, वाली और सुग्रीव की लड़ाई इस प्रकार करवाना चाहते थे जिस मे सेना, अस्त्रशस्त्र तथा धन का अपव्यय न हो। यही राम की बुद्धि का चमत्कार था, साधारण व्यक्तियो मे और राम मे यही अन्तर था। राम को अपने ध्येय मे पूर्ण-तया सफलता प्राप्त हुई।

युद्ध जीतने मे नीति का प्रयोग निन्दनीय कदापि नही। Diplomacy, we can define as the mechanical advantage of human Energy गीता मे स्वय भगवान ने कहा है "नीतिरस्मिजिगीषिताम्" हे अर्जुन ! विजय की कामना चाहने वालो मे मै नीति। असुरो का संहार करने के लिए विष्णु भगवान ने जो मोहनी का रूप धरा था वह भी एक नीति ही थी। नीति से ही कृष्ण ने जरासन्ध को मारा था।

(१०)

ऋषयमूक पर्वत नियराया

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेद धारिण ।
नासामवेद विदुष. शक्यमेवं विभाषितुम् ॥
नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन वहुधा श्रुतम् ।
बहु व्याहरताऽनेन न किञ्चिदपशब्दितम् ॥
न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रुवोस्तथा ।
अन्येष्वपि च सर्वेषु दोषः संविदित क्वचित् ॥

एवं गुणगणैर्युक्तः यस्य स्युः कार्य साधकाः।
तस्य सिध्यन्ति सर्वेऽर्था दूत वाक्य प्रचोदिताः ॥

भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम सुग्रीव के निवासस्थल की ओर चले। भगवान का स्वागत करने के लिये सुग्रीव ने अपने प्रधान सेनापति हनुमानजी को भेजा। दोनो राजकुमारो के पास आ महावीर उन्हे इस प्रकार बोले—राजर्षि और देवताओ के तुल्य आप दोनो तीक्ष्ण व्रतोवाले तपस्वी ब्रह्मचारी कैसे इस देश मे आये है। पद्मपत्र के तुल्य नेत्रो वाले वीर जटा मण्डलधारी एक दूसरे के सदृश वीर मानो देवलोक से यहा आये है। सुग्रीव नाम धर्मात्मा वानर श्रेष्ठ वीर भाई से निकाला हुआ दु.खित हुआ जगत् मे घूम रहा है। वानर मुख्यो के राजा उस सुग्रीव महात्मा से भेजा हुआ मै हनुमान नाम वानर आपके पास आया हू। वह धर्मात्मा सुग्रीव आप दोनो के साथ मैत्री चाहता है, मुझे आप उसका मन्त्री पवन सुत वानर जाने।

हनुमान के ऐसे वचन सुनकर प्रसन्न मुख राम पास स्थित लक्ष्मण से बोले—यह कपिराज महात्मा सुग्रीव का मन्त्री है। उसी की इच्छा से यह मेरे पास आया है। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का जाननेवाला ही ऐसा भाषण कर सकता है। निःसन्देह इसने व्याकरण अनेक वार सुना है. वहुत बोलते हुए इसने कहीं भी अपभ्रंश नहीं बोला है। बोलते समय इसके मुख पर, नेत्रों में, ललाट पर, भवों में और भी सारे अंगों मे कहीं दोष विदित नहीं हुआ है। संस्कार के क्रम से सम्पन्न, अद्भुत, विलम्ब दोष से रहित, हृदय को हर्ष देनेवाली कल्याणी वाणी को उच्चारण करता है। जिस राजा का दूत इस प्रकार का न हो, उसके कर्मो के फल कैसे सिद्ध हो सकते है। इसप्रकार के गुण गणों से युक्त पुरुष जिसके कार्य साधक हों, उसके सारे कार्य दूत के वाक्यों से प्रेरित हुये सिद्ध होते है। राम के द्वारा ऐसा कहा गया लक्ष्मण हनुमान से बोला—हे विद्वान ! महात्मा सुग्रीव के गुण हमे

विदित है, उसी वानरपति सुग्रीव को हम ढूंढ़ते है, हे हनुमान ! जैसा आप सुग्रीव के वचन से करते हैं, हे सत्तम ! वैसा ही हम आपके वचन से करेंगे ।

सुग्रीव और राघव मित्र बन गये । सुग्रीव ने अपनी व्यथा सुनाई । बाली का बलवर्णन करता हुआ सुग्रीव बोला--वन में अनेक प्रकार के बहुत से दृढ वृक्ष बाली ने अपना बल दिखाते हुए बल से तोडे है। दुन्दुभि नाम महाकाय भैंसा,जो अनेक हाथियो का बलधारी था, पर्वत के तुल्य उस दुन्दुभि को सींगों मे पकडकर उसे बेध दिया । उस दुन्दुभि को ऊंचा उठाकर उसने पृथ्वी पर पटका। तब उस प्राणहर युद्ध में वह दुन्दुभि चूरा-चूरा हो गया । और यह सात बडे बडे साल जो लटकती हुई बडी-बड़ी शाखाओ वाले है । इनमे एक को बाली अपने बल से कम्पाकर पत्रहीन कर देता है । बाली का इस प्रकार बलवर्णन करके सुग्रीव कुछ निराश सा बोला, तो क्या आप सचमुच बाली को मार सकेंगे । ऐसा कहते हुये सुग्रीव को लक्षण बोला—किस काम को कर देने में आपको बालि बध का विश्वास होगा ? बाली बोला—यदि राम एक बाण से एक वृक्ष को फोड दे तो मै राम के विक्रम से बालि को मरा समझू । सुग्रीव के इस सुभाषित वचन को सुनकर महातेजस्वी राम ने उसके विश्वास के लिए धनुष को पकडा और उस की ध्वनि से दिशाओ को लक्ष्य करके छोडा । राम से छोडा हुआ वह बाण सातो तालो को और पर्वत की चोटी को फोड कर भूमि मे जा गडा । रामका ऐसा पौरुष देख विस्मित हो हाथ जोड बोला--हे पुरुष श्रेष्ठ ! आप अपने बाणो से इन्द्र समेत सारे देवताओ को भी युद्ध मे जीतने को समर्थ है, क्या फिर बाली को । जिसने सात बडे ताड, पर्वत और भूमि एक बाण से फोड दी है, हे राम ! आपके आगे रण मे कौन ठहर सकता है ।

राम द्वारा भेजे गये सुग्रीव ने बाली को ललकारा । बाली ने सुग्रीव का चैलेन्ज स्वीकार किया । जब दोनो भाई आपस मे गुत्थम-

गुत्था हो रहे थे राम ने ठीक निशाना मारा, बाली बेहोश हो पृथिवी पर गिर पडा। एक बहुत बडे पुण्य के लिए राम ने छोटा सा पाप अवश्य किया। परन्तु मानवता के आदर्श का परित्याग तो उन्होंने कदापि नही किया। वह मरते हुए बाली के सामने आये। वह जानते थे, बाली उन्हे खरी खोटी सुनायगा। परन्तु राम सब खरी खोटी सुनने को तैयार थे. आवश्यक न था कि राम बाली को शूट कर देने के बाद बाला के सामने आते-परन्तु उनमे हिम्मत थी—

वह बाली के सामने आ खडे हुए। राम को देखते ही बाली का स्वाभिमान फिर जागा—धैर्ययुक्त विनय से वह बोला—राम! सामने न लडते हुए को मार कर आप ने कौन गुणलाभ किया है, जो युद्ध मे जुटा हुआ तेरे अर्थ मृत्यु को प्राप्त हुआ। आप मुझे असावधान हुए को नही मारेंगे यह मेरी आप के दर्शन से पहली बुद्धि थी। वही मैं आपको नष्ट हुए अत्मावाला, धर्मध्वजी, अधार्मिक जानता हू। आप के देश मे वा पुर मे जब मैं कोई पाप नही करता हू तो आप मुझ निर-पराध को कैसे मारते हैं। हे काकुत्स्थ! युद्ध मे यदि सामने होकर तू मेरे साथ लडता, तो आज मुझ से मारा जाता। यह कह कर बाण की पीडा से पीडित बाली सूर्य तुल्य राम को देखकर चुप होगया।

बाली द्वारा इस प्रकार कठोर कहे गए राम ने बाली से कहा धर्म, अर्थ,काम और लोकाचार को न जानकर कैसे बालकपन से तू मुझे कठोर कहता है। पर्वत, बन, जंगलों समेत यह सारी भूमि इक्ष्वाकुओं की है। पशु, पक्षियों और मनुष्यों के निग्रह अनुग्रह में भी उन्हीं का अधिकार है। उसको धर्मात्मा भरत पालन कर रहा है, जो सत्यवान, सरल, धर्म, अर्थ, काम का तत्व जानने वाला है। जिसमें न्याय विनय सत्य और विक्रम स्थित हैं, देशकाल के जानने वाला वह भरत इस समय राजा है। उसकी धर्मकृत आज्ञा पाए हुए हम धर्म वृद्धि चाहते हुए सारी पथ्वी पर घम रहे हैं, उस राजश्रेष्ठ धर्मवत्सल भरत के

सारी पृथ्वी को पालन करते हुए कौन धर्म नाश कर सकता है। सो हम परम धर्म मे स्थित भरत की आज्ञा का आदर कर मार्ग से गिरे हुए को यथाविधि निग्रह करते हैं।

वाली उस समय दम तोड़ रहा था। वह अब घडी दो घडी का मेहमान था। अधिक वादविवाद का समय न देख वह राम से बोला—राम! तुमने जो कुछ किया बहुत अच्छा किया, मुझे अपना शोक नही, तारा का तथा अन्य बन्धुओ का भी मुझे शोक नही परन्तु मुझे अपने पुत्र अगद की चिन्ता बहुत है। वह बाल्य से लेकर पालन किया हुआ मेरे अदर्शन मे दीन हुआ पिए गए तालाब की तरह सूख जाएगा। बाल अकृत बुद्धि है, इकलौता बेटा मेरा प्यारा है, तारा का पुत्र महा बली आप से रक्षा के योग्य है। जो बर्ताव आपका भरत और लक्ष्मण में है हे राजन! वही बर्ताव सुग्रीव और अङ्गद मे आप चिन्तन करने योग्य है। इतना कह बाली ने अङ्गद को प्यार किया। उसका हाथ राम के हाथ मे दिया। तदनन्तर उसकी आखे फिर गई, जीवन निकल गया। बाली को मरा हुआ देख सभी वानर रोने लगे।

बाली का वध आषाढ मे हुआ। आगे चार महीने वर्षा के थे। कार्तिक मे लका पर बडा आक्रमण शुरू किया जाना था। बाली को समाप्त करने के पश्चात उसके स्थान पर सुग्रीव को बिठाकर भी राम स्वय किष्किन्धा मे नही गये, क्योकि वह अपने वनवास को किसी प्रकार का राजनीतिक महत्व देना नही चाहते थे।

सर्वसाधारण की तो बात ही क्या, बडे-बडे समझदार बुद्धिमान लोग भी हनुमान, सुग्रीव इत्यादि को वानर, भालू (Monkeys and Jackals) ही समझते है। परन्तु उनकी ऐसी समझ न केवल बुद्धि के ही विरुद्ध है बल्कि रामायण मे स्थान-स्थान पर जो इन्ही लोगों के सम्बन्ध मे [वर्णन मिलते है उसके भी सर्वथा विपरीत है। वानर साम्राज्य की राजधानी का वर्णन करता हुआ कवि लिखता है। तब राम द्वारा आज्ञा दिया हुआ, शत्रु वीरों के मारने वाला लक्ष्मण रमणीक

किष्किन्धा मे प्रविष्ट हुआ। उसने वह दिव्य रत्नमयी, फूले हुए बगीचो वाली, रत्नो से भरी हुई रमणीय बडी गुफा देखी। जो बडे-बडे मन्दिर और प्रासादो से भरी हुई उत्तम वस्तुओ से सजी हुई, सदा मनमाने फल देने वाले फूले हुए वृक्षो से सुशोभित चन्दन, अगर, और पद्म के गन्धो से सुगन्धित, मैरेय और मदुरा के समूहो से महकती हुई सडको वाली। राजमार्ग के ऊपर लक्ष्मण ने इन मुख्य बानर महात्माओं के बड़े-बड़े महल देखे। अङ्गद, मयन्द, द्विविद, गवय, गवाक्ष, गज, शरभ, विद्युन्मालि, संपाति, सूर्याक्ष, वीरबाहू, हनुमान, सुबाहु, नल, कुमुद, सुषेण, तार, जाम्बवान, दधिवक्र, नील, सुपाटल, सुनेत्र। बानर राज्य के इन बड़े-बड़े सरदारों के अलग-अलग महल देखे। उस धर्मात्मा ने नाना जनों से भरी हुई सात डेउढ़ियां लांघ कर आगे प्रवेश करके पूरी तरह से रक्षा किये हुये बहुत बड़े अन्तःपुर को देखा। वहां प्रवेश करते ही उसने वीणा की ध्वनि से युक्त, समताल पद अक्षरों वाला मधुर गीत सुना। और रूप यौवन से गर्वित विविध प्रकार की बहुत स्त्रिये सुग्रीव के भवन मे देखीं। नूपरों का शब्द और मेखलाओं का शब्द सुनकर श्रीमान लक्ष्मण लज्जित हो गया। यह था उन राजा लोगो का एश्वर्य जिन्हे ससार दिल से मनुष्य मानता हुआ भी ऊपर से मूर्खता अथवा द्वेष वश बन्दर कहता है।

वर्षा ऋतु समाप्त हुई। अब राम ने सुग्रीव की सहायता से समुद्र पार करना था। परन्तु समुद्र पार जाने से पहले एक काम आवश्यक था। प्रश्न यह था कि रावण के पश्चात लका के शासन का भार किस पर सौपा जाय। वह व्यक्ति रावण के परिवार का ही होना चाहिये ताकि कोई व्यक्ति राम पर साम्राज्य लिप्सा का दोष न लगाने पाये। इसलिये राम के सहयोगी किसी एक व्यक्ति को लङ्का मे जाना था ताकि वह ऐसे आदमी की खोज करके युद्धारभ से पूव ही उसे राम के पक्ष मे ला सके। यह काम हर किसी के करने लायक न था। यह

काम वही आदमी कर सकता था, जिसका अपना व्यक्तित्व भी हो, जो लङ्का वासियो से पूर्व परिचित भी हो। लङ्का वालो की नजरो में जिसका कुछ मूल्य भी हो। वह व्यक्ति हनुमान ही हो सकता था।

सुग्रीव ने हनुमान को ही समुद्रपार भेजने का निश्चय किया— एतदर्थ सुग्रीव हनुमान से बोला—महावीर! न भूमि में, न अन्तरिक्ष में, न आकाश में, न देवलोक मे, न जलो मे कही तेरी गति का रुकना देखता हू। तुझे असुर, गन्धर्व, नाग, नर और देवताओ के सारे स्थान समुद्र पर्वतो समेत विदित है। तेज मे भी तेरे समान कोई प्राणधारी पृथ्वी पर नही है। तुझ मे ही हे नीति मे पडित हनुमान बल बुद्धि पराक्रम, देशकाल का अनुसरण और नीति है।

(१)

राष्ट्रदूत हनुमान

शुश्राव जपतां तत्र मन्त्रान्रक्षो गृहेषु वै।
स्वाध्याय निरतां श्चैव यातुधानान्ददर्श सः॥
षडङ्गवेद विदुषां क्रतुप्रवश्याजिताम्।
शुश्राव ब्रह्मघोषाना स त्रिरात्रे ब्रह्मराक्षसाम॥

हनूमान लका जाने को तैयार हुये। उनके सामने लका तक यात्रा करने के तीन साधन थे। हवाई जहाज मे, किश्ती अथवा अग्नबोट मे अथवा पानी के अन्दर ही अन्दर चलने वाली किश्ती मे। हवाई जहाज में लङ्का तक पहुचना तो सहज था परतु यह सम्भव था कि लङ्का में उतरते ही वे शत्रु के एजन्ट की हैसियत में गिरफ्तार कर लिये जाते। किश्ती मे चार सौ मील जाने में कष्ट भी बहुत था और देर भी बहुत लगती। रामायण में हनुमानजी की लङ्का यात्रा का जो वर्णन है यदि कवि की अलौकिक वाणी के भीतर झाक कर वास्तविकता को समझने की कोशिश की जाय तो ऐसा प्रतीत होता है कि लगभग तीन चौथाई मार्ग इन्होने एक ग्लाईडर मे तय किया तथा शेष मार्ग

पानी के भीतर ही भीतर चलने वाली किश्ती (Sub-marine) में।

उत्तम पराक्रम वाला वह श्रीमान सौ योजन पार होकर भी न हांपा और न खेद को प्राप्त हुआ। उस लक्ष्मीवान ने वहा पहुच कर रावण से पालित लङ्का को देखा, जो पत्तों और उत्पलो वाली खाइयो से अलकृत है। सीता को हरलाने के हेतु अब जो रावण से विशेषत: रक्षा की गई है। प्रचण्ड धनुषो वाले राक्षस जिनके चारो ओर घूम रहे हैं। ऐसी रमणीय महापुरी जिसके इर्द-गिर्द सुनहरी कोट है, सैकडों ऊची ऊची अटारियो से युक्त है। श्वेत सुन्दर भवनो से पर्वत की चोटी पर स्थित लङ्का को श्रीमान बानर ने आकाशगामी पुरी की तरह देखा।

परन्तु लङ्का मे प्रवेश किस प्रकार हो, हनुमान के लिए यह भी एक विचारणीय समस्या थी। राक्षसो की दृष्टि से बचकर उन्होने अपना कार्य करना था। कार्यसिद्धि के पश्चात ही उन्होने अपने को प्रकट करना था, पहले नही। अत' हनुमान ने रात्री के अन्धकार मे ही नगरी में दाखिल होने का सकल्प किया। रात के समय अद्वार से कोट को फाद कर हनुमान लङ्का नगरो में प्रविष्ट हुए। बानर राजके उस हितैषो ने लङ्का नगरी मे प्रवेश करके मानो अपना बाया पाओ शत्रु के सिर पर रख दिया। पद्माकार, स्वस्तिकाकार राक्षसो के सुरम्य घरों की छटा को देखते हुए हनुमान नगर मे विचरन करने लग। वहा राक्षसो के घरो में उसने जप करते हुओ के मन्त्र सुने और स्वाध्याय में रत राक्षसो को देखा। महावीर के पास समय बहुत थोडा था और इस थोडे समय में उन्होने एक महत्तम कार्य की सिद्धि करना था। जो कुछ उन्हे करना था, रात-रात मे हो सकना सम्भव था, अत एक भी क्षण इधर-उधर वृथा गवाये वह सीधे विभीषण के घर पहुचे।

हनुमान लङ्का के लिए कोई अपरिचित व्यक्ति न थे। लङ्का मे उनका आना पहली बार ही न था। बाली की सैना के प्रधान सैनापति की हैसियत मे वह पहले भी बीसियो बार लङ्का में आ चुके थे। लङ्कावासी हनुमान को अच्छी प्रकार जानते थे और हनुमान भी लङ्का

वासियो की नस नस से परिचित थे। रावण हनुमान के बल को खूब अच्छी प्रकार जानता था, क्योकि हनुमान के बल पौरुष के पुण्य-प्रताप से ही रावण ने अनेक लड़ाइया लडी थी। राम की ओर से अवश्य ही कोई न कोई दूत यहा आयगा, रावण यह अच्छी तरह समझता था। परिस्थिति का सामना करने का उसने पूरा पूरा प्रबन्ध कर रखा था। परन्तु जब अपना सगा भाई ही पाचवें कालम (Fifth column) का आदमी बन गया तब रावण क्या कर सकता था। उसी वृक्ष की लकडी जब लोहे के साथ जुडकर वृक्ष पर प्रहार करने लगे तो बेचारा वृक्ष भी क्या करे। हनुमान बहुत सावधानी के साथ लङ्का में दाखिल हुए और सीधे विभीषण के पास पहुच गए।

जो लोग रामायण सम्बन्धी सभी पात्रो का विस्तृत जीवन रामायण मे ही खोजना चाहते हैं, उन्हे इस सम्बन्ध में निराशा होनी ही चाहिए। रामायण ऐतिहासिक ग्रन्थ है जरूर परन्तु उसमें मुख्य रूप से एक ही महापुरुष के जीवन का इतिहास है। रामायण मे केवल रामचरित्र का वर्णन है और शेष पात्रो का केवल उतना जितने का सम्बन्ध रामचरित्र के साथ है। रामायण, रामायण है रावणायन, लक्ष्मणायन, हनुमानायण अथवा दशरथायण नही। रामायण एक महाकाव्य है और महाकाव्य का यह सर्वोपरि सिद्धात है कि उसमें केवल नायक और नायका के ही जन्म, विवाह आदि का वर्णन होना चाहिए। यही कारण है कि रामायण में हनुमान जी का विस्तृत जीवन नही। इस उद्देश्य के लिए तो कवि को एक पृथक ग्रन्थ हनुमानायण की ही रचना करनी चाहिए थी।

वेदज्ञ हनुमान को वानर, कपि इत्यादि शब्दो से सम्बोधन करने का भी एकमात्र यही कारण है। रामायण में जिस रूप में हनुमान ने काम किया है कवि ने महावीर के उसी वायु सैनापति Air-martial के रूप का वर्णन किया है—Hanuman in Ramayna is not described as man but he is described as Air-Martial.

वायुसेनापति को अपना कार्य सचालन करते समय अपने चहरे को सुरक्षित रखने के लिए जो face cover टोप पहनना पडता है उस अवस्था मे मनुष्य का जो रूप प्रतीत देता है कवि ने उसी रूप का वर्णन किया है। सन ४१,४२ में अग्रेजो ने भी तो हिटलर की विषैली गैस से बचने के लिए, चहरे पर निकाब पहनने शुरू कर दिए थे और उस निकाब के साथ वे भी तो पूरे हाथी से प्रतीत देते थे।

हनुमान सीधे विभीषण के पास पहुचे। विभीषण रावण का छोटा भाई था। रावण अपने छोटे भाई को पुत्रवत प्रेम करता था। विभीषण उसकी राज्य-सभा Executive council का प्रेजीडेंट था। रावण के सभी रहस्य विभीषण के पास थे। विभीषण को चाहिए नही था कि वह अपने बडे भाई के प्रति विश्वासघात करता परन्तु स्वार्थ मनुष्य को अन्धा कर देता है, स्वार्थी मनुष्य बुद्धिहीन बन जाता है। विभीषण चाहता था कि रावण मर जाए, उसका कुल नष्ट भ्रष्ट हो जाए ताकि लङ्का के राज्य का उत्तराधिकार विभीषण की सन्तान को प्राप्त हो सके।

हनुमानने विभीषण द्वारा रावणके सभी युद्ध रहस्यो War secrets को प्राप्त किया। और यह निश्चित हुआ कि हनुमान के लङ्का छोडने के शीघ्र पश्चात विभीषण भी राम की सेवा मे हाजिर हो। वैसे तो मीरजाफर तथा शिलादित्य की तरह विभीषण लङ्का मे रहता हुआ भी युद्ध का बिगुल बजते ही राम के पक्ष मे जा सकता था, परन्तु कुछ तो राम विभीषण को समझना चाहते थे और कुछ विभीषण भी लङ्का-विजय के पश्चात राम की योजनाओं से परिचित होना चाहता था। राम तो लङ्का तट पर ही विभीषण को मिलना स्वीकार कर लेते, परन्तु विभीषण तो समुद्र के उस पार ही राम से सौदा कर लेना चाहता था, राम का साथ देने की उसे बहुत बडी कीमत चाहिए था-वह कीमत थी लङ्का का साम्राज्य। विभीषण राम की सहायता उसी

अवस्था में करने को तैयार था, जब कि राम विभीषण को लङ्का का राज्य देना स्वीकार करें।

सम्पूर्ण योजना पर खूब सोच विचार होगया। हनुमान ने राम की ओर से विभीषण को लकाधिपति बनाने का वचन दिया। लका तक आने का वास्तविक उद्देश्य पूरा हुआ। परन्तु हनुमान सीता को भी मिल लेना चाहते थे, इसी उद्देश्य से वे ब्रह्ममुहूर्त मे अशोकवाटिका पहुचे। सीता और हनुमान का यह प्रथम साक्षात्कार था। यदि यह साक्षात्कार आर्यावर्त के ही तट पर होता तब तो साधारण बात थी, परन्तु परदेस में और विशेष करके शत्रु के प्रदेश में बहुत सावधानी की आवश्यकता थी। यद्यपि हनुमान के पास राम की अगूठी थी परन्तु अगूठी का पास होना कोई बहुत बडी बात नही। सारटीफिकेट चुराये भी जा सकते है और जाली भी बनाये जा सकते है। सीता ने हनुमान का नाम तो बहुत सुन रखा था, उसे इस बात का भी पता था कि हनुमान लङ्का में आयेगे, परन्तु यही व्यक्ति हनुमान है इस का निश्चय कुछ कठिन था। अत हनुमान ने सीता के आसपास टहलते हुए राम-कथा गानी शुरू की। सीता का हनुमान की ओर आकर्पित होना स्वभाविक ही था। हनुमान यही तो चाहते थे। वे चाहते थे कि सीता भी उनसे बात करने की इच्छा करे। हनुमान की मनोकामना पूर्ण हुई। सीता स्वय हनुमान से बात करने का आ बैठी और बोली—हे वानरोत्तम तू पराक्रमी है, समर्थ है, बुद्धिमान है जिस तुझ अकेले ने राक्षसों का स्थान दबाया है। क्या राम कुशलतापूवक तो है ? यदि राम कुशल है, तो क्यू बढे हुए प्रलयाग्नि के समान क्रोध से पृथिवी को नही जला देता है। सीता के वचन सुनकर हनुमान बोले—देवी ! मेरे लौट जाने पर यहा का विस्तृत समाचार पाते ही राम बडी सैना लेकर यहा पहुचेगे।

सीता यदि चाहती तो रावण की उस जेल से हनुमान के साथ भागकर राम के पास पहुच सकती थी। यदि राम द्वारा लका-दहन का

उद्देश्य केवल सीता की प्राप्ति ही था तो लंका तक पहुंचने के लिए समुद्र पार करने का उन्होंने जो कष्ट उठाया, उन 'घोरतम' यात्राओं को सहे बिना भी राम सीता को प्राप्त कर सकते थे। और यदि उन्होंने रावण को दड ही देना था, राम को यदि अपने अपमान का बदला ही लेना था तो सबसे अच्छा उपाय यही था कि सीता तो हनुमान के साथ राम के पास आ जाती और सीता को किष्किन्धा में सुरक्षित बिठा राम निश्चिन्त हो, रावण को दड देने के लिए जा सकते थे।

परन्तु सीता अच्छी तरह जानती थी कि रावण के वध तक उसे लका में ही रहना है। अनेक लोगों का यह विचार है कि सीता हनुमान के साथ जाना तो चाहती थी, हनुमान ने उसे अपने साथ ले जाना भी चाहा, परन्तु सीता ने कहा—हनुमान ! मैंने कभी पर पुरुष का स्पर्श नही किया, तुम्हारे साथ जाऊ कैसे ? सीता अगर जाना ही चाहती तो वह समुद्र तट तक ऐसे ही हनुमान के पीछे २ पैदल जा सकती थी जैसे वह अयोध्या से चलकर पचवटी तक राम के पीछे २ आई थी। पचवटी तक वह किसी की पीठ पर चढकर तो नहीं आई थी। समुद्र तट तक वह पैदल पहुच सकती थी और वहा से आगे उसी जल-किश्ती (Sub-marine) द्वारा वह वापिस राम के पास आ सकती थी। बाकी रही बात रावण के पहरेदारो की, तो जिस प्रकार हनुमान बगीचे मे दाखिल हुए थे वैसे ही वह बगीचे से बाहिर भी आ सकते थे।

सीता यदि चाहती तो उसके लिए कुछ भी असम्भव न था परन्तु उसने तो साफ कह दिया—हनुमान ! राक्षसो को वध करके, रावण को मारकर, और लङ्का को उलट-पुलट करके कब मुझे पति देखेगा।

राक्षसानां वधं कृत्वा सूदयित्वा च रावणम् ।
लंकामुन्मथितां कृत्वा कदा द्रक्ष्यतिमां पति ॥

विभीषण से मिल लिए, सीताजी का दर्शन भी हो गया। उस समय तक किसी भी राक्षस ने हनुमान को न देखा था। यदि हनुमान चाहते ब्रह्ममूहूर्त में राक्षसगणों के जागने से पहले पहले वह राम का

छोड़ सकते थे, परन्तु वह देखना चाहते थे रावण कितने पानी में है। वह जानना चाहते थे रावण ने कितनी तैयारी की है। वह राम के दूत का वल भी लका वालों को दिखाना चाहते थे। लङ्का वालों को मित्र राष्ट्र के सेनापति का रूप तो उन्होंने अनेक वार दिखाया था अव वह शत्रु राष्ट्र के सैनापति का रूप भी दिखा जाना चाहते थे। हनुमान का व्यक्तित्व इतना ऊचा था, उन्हे विश्वास था अन्त राष्ट्रीय कानून के अनुसार रावण शत्रुराष्ट्र के दूत को कुछ भी हाणी नही पहुचा सकता। इसा विश्वास पर उन्होने दिन निकलते ही युद्ध का बिगुल वजा दिया। जो भी सामने आया मार मिटाया। राक्षस-सैनापति प्रहस्त के पुत्र जम्बुमाली, सातमन्त्रीपुत्र,विरूपाक्ष यूपाक्ष, दुर्धर्ष, प्रघस, भासकर्ण प्रभृति सैनापति तया रावणपुत्र अक्ष सभी हनुमान द्वारा मार डाले गये। तत्पश्चात मेघनाद ('Field-Martial Indrajeet) आगे आए मेघनाद बहुत वहादुर था, वहादुर तो हनुमान भी थे परन्तु मुश्किल यह थी कि एक तो वह चारसौ मील का समुद्र पार करके आए, आते ही रात भर जागना पडा, पश्चात एक से एक बढिया वीर से टक्कर लेनी पडी, अन्त मे बराबर का सूरमा सामने आ खडा हुआ। उस थकी हुई अवस्था मे हनुमान मेघनाद का बहुत देर तक मुकावला न कर सके। मेघनाद उस अवस्था मे हनुमान के साथ जो चाहे व्यवहार करता, परन्तु उसकी आखो मे शर्म थी। हनुमान ने लका पर जो जो उपकार किये थे मेघनाद उन्हे भूला न था। मेघनाद अच्छी प्रकार जानता था, हनुमान का मारा जाना अन्त राष्ट्रीय कानून की दृष्टि से ठीक नही इसलिए उसने हनुमान को वाधकर रावण के सामने पेश कर दिया।

वहा वडी शानोशौकत से दरवार मे बैठे हुए रावण को हनुमान ने देखा, जिसके चारो ओर चार राक्षस बैठे है। तेज से भखते हुए उस राक्षस को देखकर उसके तेज से मोहित हुए हनुमान ने मन में सोचा— अहो रूप, अहो धैर्य, अहो दलेरी, अहो तेज, अहो राक्षसराज का सब

लक्षणो से युक्त होना। यह राक्षस पति तो इन्द्र सहित सुरलोक-का भी राजा होने योग्य है।

भ्राजमानं ततो दृष्ट्वा हनूमान्राक्षसेश्वरम्।
मनसा चिन्तयामास तेजसा तस्य मोहितः॥
अहोरूपमहो धैर्यमहो सत्त्वमहो द्युतिः।
अहो राक्षस राजस्य सर्व लक्षण युक्तता॥

प्रधानमन्त्री प्रहस्त ने रावण की आज्ञा से हनुमान के विरुद्ध लूट, मार, कत्ल का एक लम्बा चौडा चार्ज शीट पेश किया। फौजी अदालत ने हनुमान को सात मन्त्री पुत्रो, चार मन्त्रियो तथा अक्षयकुमार के कत्ल के अपराध मे मृत्यदण्ड की आज्ञा सुनाई। परन्तु उस सभा में एक ऐसा प्रभावशाली व्यक्ति भी विराजमान था, हनुमान को दिया गया मृत्युदण्ड जिसकी आशाओ पर पानी फेर सकता था। वह व्यक्ति था विभीषण, रावण की शासन सभा का प्रधान। वह रावण का छोटा भाई था, उसकी आवाज मे ताकत थी। हनुमान को दिये गए मृत्युदण्ड का उसने विरोध किया। इस दण्ड को उसने धर्म-विरुद्ध बताया—राजन्! इस वानर को मारना धर्म विरुद्ध है, लोक वर्ताव से निन्दित है, और तेरे असदृश है। भला हो चाहे बुरा यह दूसरो से हमे सौंपा गया है, दूसरों के लिए कहता हुआ पराधीन दूत वध के योग्य नही होता।

विभीषण की बात सबको माननी पडी। हनुमान को छोड दिया गया, परन्तु उसे हुक्म दिया गया कि जितनी जल्दी हो सके लका को छोड जाय। हनुमान के लिए लका मे कोई शेष कार्य भी न था। वह तत्काल स्वदेश की ओर चल पड़े।

: १० :

देशकुल-द्रोही

अनुजो रावणस्याहं तेन चास्म्यवमानितः।
भवन्तं सर्वभूतानाम् शरण्यं शरणं गतः॥

परित्यक्ता मया लंका मित्राणि धनानि च।
भवद्गतं हि मे राज्यं जीवितम् च सुखानि च ॥

हनुमान के चले जाने पर राक्षसो की एक महती सभा हुई। सब लोगो ने एक स्वर से युद्ध का अन्तिम निश्चय किया। War ! War !! War !!! परन्तु विभीषण ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। सीता को सन्मान सहित लौटा कर उसने सबको राम के साथ समझौता करने की सलाह दी। विभीषण के कायरतापूर्ण शब्दो को सुनकर तथा उसकी आन्तरिक भावनाओ को समझ मेघनाद को बहुत दुःख हुआ और उसने नम्रतापूर्वक चाचा को समझाया—हे तात ! आप हमारी उन्नति में बाधक न बनिये। यदि आप मे साहस नही तो आप आराम से घर बैठिये, भगवान् के नाम की माला जपिये। आप हमें बुरा बताते है हम बुरे ही सही, परन्तु इसका यह अर्थ कदापि नही कि आप हमारे शत्रुओ के साथ मिलकर हमारे कुल को आग लगादें। मेघनाद के ऐसे वचन सुन विभीषण को सुनाता हुआ रावण बोला—"शत्रु के साथ, क्रुद्ध हुए नाग के साथ बसे, पर अपने शत्रु के सेवी मित्र के साथ न बसे। एक दूसरे की विपत्तियो से सदा प्रसन्न होने वाले बैरी ढके हुए हृदय वाले ज्ञाति के लोग बडे भयानक होते है। कहावत है, कि पूर्वकाल पद्मवन में हाथियो ने हाथ में फास लिये मनुष्यो को देखकर श्लोक गाये थे, कि हमारे लिये न अग्नि, न दूसरे शस्त्र न फासे भयानक है किन्तु यह घोर स्वार्थ से प्रेरे हुए जाति के लोग हमारे लिये भय लाने वाले है। यह हमारे पकडने में उपाय बतलाएगे, इसमे सशय नही। सब भयो से जाति का भय हमे बडा डरावना प्रतीत होता है। गौओ मे दूध, स्त्रियो मे चचलता, ब्राह्मणो मे तप सम्भावित है, और ज्ञातियों मे भय सम्भावित है। सो हे सौम्य ! यह तुझे प्रिय नही हुआ है, जो कि मै लोक मे आहत हू, ऐश्वर्य से पूर्ण हू, और शत्रुओ के सिर पर पाव रखकर ठहरा हुआ हू। जैसे कमल के पत्तो पर पडी जल की बूदे श्लेषा को प्राप्त नही होत है, वैसे अनार्य्यो में सौहार्द। हे

विभीषण यदि और कोई इस समय ऐसा वाक्य कहता, तो वह जीता न रहता, तुझे तो धिक्कार है, हे कुल कलङ्क !

रावण अभी इतना ही कह पाया था कि विभीषण सभा स्थल से उठ खडा हुआ और चार अपने सहयोगी राक्षसों सहित उस सभा से प्रोटैस्ट के तौर पर वाक औऊट कर गया। रावण यदि आज कल की पश्चिमी सभ्यता को मानने वाला होता तत्काल विभीषण को गिरफ्तार करके युद्ध के अन्त तक उसे जेल में ही रखने का हुक्म दे देता। युद्ध के पश्चात उस पर मुकद्दमा चलाता और विभीषण पर शत्रु एजेण्ट होने का अपराध लगा उसे गोली से उड़वा देता। परन्तु रावण एक आदर्श भाई था। अपने छोटे भाई को वह मेघनाद के समान ही प्यार करता था। उसने विभीषण को कोई कष्ट नही दिया। समझाया उसने जरूर, समझाना उसका कर्त्तव्य भी था। परन्तु स्वार्थी विभीषण नही माना। वह राम के पास जाने के लिये आतुर था।

विभीषण राम के पास जाने लगा। रावण का दिल पिघल गया। भैया! तू समुद्र पार कैसे करेगा। रावण ने अपने हाथो उसे समुद्र पार जाने के लिये हवाई जहाज दिया—जाओ! भाई, तुम कही भी रहो, परमात्मा तुम्हे सुखी रखे। यदि मै लडाई मे मर भी गया तो मुझे इतना तो हौसला रहेगा कि लका का राज्य मेरेही भाई के पास है जाओ—शिवास्तेपन्थाना।—चा राक्षसो के साथ विभीषण राम की शरण मे उपस्थित हुआ। सुग्रीव को विभीषण के सम्बन्ध में सन्देह हुआ। वह राम से बोला—रावण का छोटा भाई विभीषण चार राक्षसो सहित आपकी शरण आया है। मै जानता हू रावण से भेजा हुआ, माया से ढका हुआ कुटिल बुद्धि से यह यहा आया है कि आपके विश्वस्त होने पर आप पर प्रहार करे। राम बोले—सुग्रीव! आपका विचार कुछ भी हो, परन्तु मित्र भाव से प्राप्त हुए को मै कदापि छोड़ नही सकता। सुग्रीव बोला—चाहे यह दुष्ट है अथवा अदुष्ट परन्तु ऐसे दु:ख में जो भाई को छोड़ सकता है उसके लिये कौन हो सकता है

जिसको यह न त्यागे। परन्तु राम विभीषण के आने का वास्तविक तत्त्व खूब समझते थे, उन्होने विभीषण को अपने सामने उपस्थित होने की आज्ञा दी।

राम से अभय दिये जाने पर झुका हुआ रावण का छोटा भाई चारो राक्षसो समेत पाओ पर आ गिरा और बोला—मै रावण का छोटा भाई हू उससे अपमानित हुआ हू। आप जो कि सब लोगों के शरण लेने योग्य है, उनकी शरण पडा हू। मैंने लङ्का, मित्र, धन, दौलत, भाई-बन्धु सब छोड दिये आपके अधीन मेरा राज्य जीवित और सुख हैं। उस समय विभीषण को सान्त्वना देते हुए राम बोले—मै पुत्र सहित रावण को और प्रहस्त को मार कर तुझे राजा बनाऊगा। रावण रसातल वा पाताल में प्रवेश कर जाए अथवा ब्रह्मा के पास चला जाए पर अब वह मुझ से जीता न छूटेगा। सुखदायी कर्मों वाले राम के वचन सुन विभीषण सर से वन्दना करके फिर कहने लगा—राक्षसो के वध मे और लङ्का के सघर्षण में मै प्राणो के अनुसार सहायता करूगा और सेना मे प्रविष्ट हूगा। उस समय प्रसन्न हुए राम लक्ष्मण से बोले—समुद्र से जल लाओ अभी विभीषण का राज्याभिषेक होगा। आज से विभीषण ही लङ्का के राजा माने जायेंगे। बोलो हिज एक्जालटैड हायनैस महाराजाधिराज राजराजेश्वर श्रीमान् लङ्काधिपति महाराज विभीषण की जय।

(११)

लंका दहन

तदद्भुतं राघव कर्म दुष्करं समीक्ष्य देवाः सह सिद्धचारणैः।
उपेत्य रामं सहसामहर्षिभिस्तमभ्यषिञ्चन्सुशुभैर्जलैः पृथक ॥

रामायण मे सबसे उत्तम चरित्र हनुमान का है और सबसे निकृष्ट विभीषण का। मैं विभीषण की तारीफ नही करता, क्योकि यदि मैं विभीषण की तारीफ करू मुझे जयसिंह, यशवन्तसिंह, जयचन्द और

मानसिह की भी तारीफ करनी पडेगी। विभीषण की अपेक्षा कुम्भकर्ण तथा मेघनाद का व्यक्तित्व कही ऊचा और उत्तम है। विभीषण के ही समान कुम्भकर्ण भी सीता-हरण सम्बन्धी रावण की नीति के पक्ष मे न था तथापि उसने देश तथा देश-बन्धुओ के प्रति विश्वासघात नही किया। रावण से मतभेद रखता हुआ भी वह अन्तकाल तक रावण के लिये लडा और स्वदेश के गौरव को उन्नत करने के लिये उसने अपने रक्त की अन्तिम बूद तक बहा दी। विभीषण के गुण गाना किसी भी देश-कुल द्रोही की पीठ ठोकना है। माना राम परमात्मा थे परन्तु स्वदेश, तथा स्वजाति का गौरव तो परमात्मासे भी बडा है। "मेरा देश ही मेरा ईश्वर है, मेरी जाति ही मेरा ईश्वर है" यही आदर्श देश मे सच्चे ईश्वर भक्त पैदा कर सकता है। मन्दिर मे बैठे माला फेरनेवाले, घटे और घड़ियाल बजानेवाले धर्म-ध्वजी ही ईश्वर भक्त नही, व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊचा उठकर स्वदेश और स्वजाति की मान-मर्यादा की रक्षा के लिये जो अपना जीवन होम देता है वही सच्चा ईश्वर भक्त है। मैं विभीषण की भी तारीफ करता यदि वह राम की सच्ची निःस्वार्थ भक्ति की भावना से प्रेरित होकर, सत्य और न्याय को विजयी बनाने के लिये राम की शरण मे आता। परतु वह तो लका का राजा बनने के लिये राम के पास आया था। राम से भी बढकर उसे अपना स्वार्थ प्यारा था। स्वार्थी का दीन क्या, स्वार्थी का ईमान क्या। स्वार्थी के गुणगान करना स्वार्थी लोगोका उत्साह बढाना है।

विभीषण को लङ्का के हिज मेजैस्टी घोषित कर राम समुद्र पार जाने को तैयार हुए। रावण इस बात को निश्चित रूप से जानता था कि राम समुद्र पार कर रहे है। यदि उस के मन में तिलमात्र भी अन्याय की भावना आ जाती वह समुद्र पार करती हुई बेखबर और बे तैयार (unprepared) वानर सेना पर आक्रमण कर देता। न्याय अथवा येन केन प्रकारेण यदि उसे युद्ध ही जीतना था तो उस के लिये यह उपाय बहुत ही सहज था कि वह लङ्कातट से उस पुल पर गोला-

वारी शुरू कर देता । परन्तु नही, रावण वीर था, योधा था यद्यपि वह अन्त में हार गया परन्तु वीरता के आदर्श को उसने नीचा कदापि नहीं होने दिया । समुद्र पार करती हुई राम की सेना को न तो उस ने रोका और न उस पर आक्रमण ही किया — "आओ ! जिस जमीन पर भी तुम उतरना चाहते हो उतर जावो । खूब तैयारी कर लो, जैसा दिल चाहे मोर्चा वना लो । खूब तैयार हो जाने पर जव तुम स्वय युद्धारम्भ का विगुल वजाओगे तभी मैं अपनी सेनाए तुम्हारे सामने लाऊगा" वीरत्व के इस आदर्श का रावण ने अन्त तक पालन किया ।

राम ने अपनी सेना लङ्का के तट पर उतार दी । रावण ने तब तक कोई वाधा नही डाली जब तक राम ने अपनी उतरी हुई सैना को तरतीव से खडा न कर लिया । तत्पश्चात रावण ने अपने दो गुप्तचरो शुक और सारन को राम का वल जानने के लिये भेजा । वानरो तथा राक्षसो मे उतना ही भिन्न भेद था जितना अग्रेजो तथा फ्रासीसियोंमें । अत केवल देखने मात्र से पहचान कठिन थी । यदि इन दोनो में कुछ भेद होता तो रावण के गुप्तचर काफी देरतक छिपे न रहसकते थे। परतु घर के भेदी ने ही भाडा फोड दिया । शुक और सारन दोनो राम के सामनेहाजिर किये गये। वे दोनो भयके मारे थर थर काप रहे थे। परन्तु राम हस कर यह वाक्य बोले — यदि सारा बल और हमारी स्थिति को देख लिया है, यथोक्त कर लिया है, तो यथेच्छ जाइए और यदि कुछ देखना रह गया हो, तो वह सारा देखलो, अथवा विभीषण ही तुम्हे सव कुछ दिखला देगा । पकडा जाने पर तुम्हे अपने जीवन के विषय मे डर नही होना चाहिए, क्यू कि शस्त्र छोडे हुए दूत वध के योग्य नही होते । रामद्वारा मुक्त किये गये वे दोनो राम की जय जय गाते अपनी सेना में लौट आए ।

अब राम युद्ध के लिए पूर्णतया तैयार थे, परन्तु अन्तिम क्षण तक उन्हे अन्तःराष्ट्रीय जगत मे अपनी स्थिति को ऊचा रखना था । हमें लड़ाई के लिये विवश किया गया, ससार को यह दिखाने के लिये राम

ने अगद को रावण के दरबार मे भेजा। परन्तु सुलह न होनी थी और न हुई और सच्च बात तो यह है कि राम सुलह चाहते भी न थे। युद्ध का बिगुल बजा। दस दिन के घोर सग्राम के पश्चात रावण की सत्ता छिन्न भिन्न हो गई।

युद्ध मे वैसे तो न जाने कितने मरे और कितने घायल हुए, परन्तु लक्ष्मण की मूर्छा का अत्यन्त महत्व दिया गया। इस सम्बन्ध मे तो कवि की अतिशयोक्ति यहा तक बढ गई कि हनुमान ने पर्वत उठा लिया। वास्तविकता इतनी ही है कि लक्ष्मण मेघनाद की गोली से जख्मी हुए। जिस विष में गोलिया बुझाई गयी थी, उस विष के प्रभाव से वह मूर्छित हो गये। परन्तु लक्ष्मण का यह सौभाग्य था कि राक्षस सेना का प्रधान चिकित्सक सुषैनवैद्य राम के पक्ष में आ चुका था। उस विष का उपचार वह अच्छी प्रकार जानता था। सुषैन ने हनुमान को गन्धमादन पर्वत से एक विशेष प्रकार की बूटी लाने को कहा। वह पर्वत लङ्का मे ही था, हिन्दुस्थान मे नही। वह बूटी कुछ इस प्रकार की थी कि उस का प्रयोग केवल सूर्य रश्मियो के अभाव मे ही किया जा सकता था, अत रात्री रात्री मे ही उस सञ्जीवनी बूटी का लाया जाना आवश्यक था। वायु सेनापति हनुमान हवाई जहाज में उस पर्वत पर पहुचे। वहा उन्होने देखा, अनेक प्रकार की बूटिया थी। इतना समय था नही कि लौट कर पूछने आते। अत बुद्धि से काम लेते हुए उन्होने यही उचित समझा कि सब प्रकार की बूटिया ले जाये। जब वे बूटियाँ लेकर आए सुषैन ने हस कर कहा — वाह हनुमान जी! आप तो सचमुच समूचा पर्वत ही उठा कर ले आए।

गन्धमादन पर्वत का आर्यावर्त की उत्तरी सीमा पर होना, हनुमान का वहा जाना। भरत के तीर द्वारा उनका गिराया जाना, पश्चात भरत के तीर की शक्ति से ही उनका फिर लङ्का में पहुचना यह किसी ऐसे थर्ड क्लास कवि की कल्पना है, जिस का उद्देश्य महज भरत को संसार के नजरों में गिराना था। क्या यह कभी हो सकता था कि भरत

हनुमान को मिले, सीता-हरण तथा लक्ष्मण-मूर्छा की बात वह भरत को बताए और भरत जैसा भाई अपने दिल को ऐसा पत्थर का बनाले कि अपने मरते हुए भाई को देखने की इच्छा तक न करे। जो हनुमान लाखोमन भारा पर्वत उठा सकते थे, क्या वह भरत को उस पर्वत पर बिठा कर लङ्का नही पहुचा सकते थे। राम के वियोग में जिस भरत के लिए एक २ क्षण वर्ष भर का हो रहा था। राजपाट को छोड जो भरत नन्दीग्राम मे तपस्या करता हुआ राम की राह में आखे बिछाये बैठा था। कितने आश्चर्य की बात है, लक्ष्मण की मूर्छा के सम्बन्ध में सब कुछ जानकर भी वह अपने भाई को देखने की इच्छा तक न कर सका।

युद्ध सम्बन्धी और कोई घटना विशेष रूप से उल्लेखनीय नही। युद्ध का अन्त राम के पक्ष मे होना ही था। अपने ही भाई के देश-द्रोह तथा जाति-द्रोह के कारण रावण को पराजय का मुह देखना पडा। परन्तु रावण यद्यपि अन्त मे हार गया, परन्तु वीरों के आदर्श को उसने कदापि नीचे नही होने दिया। रावण अपनी जान से गया, अपने पुत्र, भाई, सखा, मित्र, सहयोगी सब को एक २ करके उस ने गिरते देखा, यदि वह चाहता, यदि वह बुराई पर आ जाता तो राम की साता के साथ जो चाहे व्यवहार कर जाता। वह अपने देश का राजा था, कोई शक्ति उसे रोक न सकती थी। परन्तु वह उस जमानेका आदमी था जिस जमाने के शैतान भी आजकल के इन्सानो से बदरजहा बहतर थे। वह अपनी जान से गया, परन्तु राम की अमानत में उसने कोई ख्यानत नही की। इतने आदर्शवान महापुरुष के पीछे न जाने ससार क्यो हाथ धोकर पड गया हैं। शायद इसलिये कि वह आखिर में हार गया अथवा इसलिये कि जिस महापुरुष ने रामायण का इतिहास लिखा वह रावण की पारटी का आदमी नही था।

---

(४)
रामकथा पर एक विहङ्गम दृष्टि

धन्यायोध्या दशरथ नृपस्सा च माता च धन्या।
धन्योवंशो रघुकुलभवो यत्र रामावतारः ॥
धन्या वाणी कविवर मुखे रामनाम प्रपन्ना।
धन्यो लोके प्रतिदिनमसौ रामनाम शृणोति ॥

भगवान राम परमात्मा के चौदह कला सम्पूर्ण अवतार माने जाते है, परन्तु उनमें दो कलाए कौन-सी कम रह गई यह लाख कोशिश करने पर भी हम समझ न सके। हम तो जिस दृष्टिकोण से भी राम को देखते है हमे तो वह सर्वाङ्ग रूपेण शुद्ध बुद्ध पुरुषोत्तम ही प्रतीत देते है। राम का यह परम सौभाग्य था कि उन्हे माता बहुत ही अच्छी मिली। आज यदि किसी का बच्चा दस मील पर भी जाता है, मा कहती है बेटा! जाते ही चिट्ठी लिखना, तार देना, परन्तु कौशल्या का पुत्र चौदह वर्ष जङ्गल मे रहा, न चिट्ठी न पत्री। धन्य है वह माता जिसने अपने प्यारे देश पर अपने वात्सल्य प्रेम को न्योछावर कर दिया। उनका पुत्र किस अमर सन्देश को परिपूर्ण करने बनो को जा रहा है माता कौशल्या इसे खूब अच्छी तरह जानती थी।

माता कौशल्या के समान ही माता सुमित्रा का त्याग भी परम प्रशसनीय है। सुमित्रा के सम्बन्ध मे अनेक लोगो की यह धारणा है कि उन्होने सबसे अधिक चतुराई से काम लिया। उनके दो पुत्र थे लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न, परन्तु राज्य मे सुमित्रा का तथा उसकी सन्तान का किसी प्रकार भी उत्तराधिकार न हो सकता था। मनु प्रणीत धर्मशास्त्र के अनुसार उत्तराधिकार कौशल्या की सन्तान को था और दशरथ द्वारा दिये गये वरों के फलस्वरूप राज्य पर कैकेयी के पुत्र का अधिकार था। महाराज तथा प्रधान मन्त्री मे भीतर ही भीतर सघर्ष चल रहा था। प्रधान मन्त्री राम को बनवास भेजना चाहते थे और महाराज राम को राजतिलक देना चाहते थे। दोनो मे जीत किसकी होगी यह अन्तकाल

तक अनिश्चित-सा था। सुमित्रा ने एक पुत्र भरत के साथ लगा दिया और दूसरा राम के साथ। राजा चाहे राम बने चाहे भरत, सुमित्रा के दोनो हाथों मे लड्डू थे। परन्तु सुमित्रा के बारे में ऐसी कल्पना करना उस देवी के महत्तम त्याग का अपमान करना है। भरत के साथ शत्रुघ्न को भेजा दशरथ ने और दशरथ की प्रतिज्ञा के अनुसार लक्ष्मण का राम के साथ जाना अवश्यम्भावी था। कौशल्या के समान सुमित्रा का त्याग भी परम प्रशंसनीय है।

उर्मिला, माण्डवी तथा श्रुतकीर्ति के सम्बन्ध मे न तो वाल्मीकि में ही विशेष वर्णन मिलता है और न ही तुलसी रामायण मे। यदि यह सच है कि राम के विवाह के साथ-साथ लक्ष्मण का विवाह भी उर्मिला के साथ हो गया तो नि सन्देह उर्मिला देवी ने अपने जीवन को सच्चे अर्थो मे सार्थक किया। सदाचार की दृष्टि मे हमारा आर्यावर्त कितना ऊंचा था यह इन्ही कतिपय उदाहरणो मे देखा जा सकता है। विवाह के पश्चात भी लक्ष्मण ब्रह्मचारी ही रहे। राम और सीता यद्यपि तेरह वर्ष बनो मे साथ साथ रहे विवाह के पश्चात भी राजमहल के सभी ऐश्वर्य उनके उपभोग के लिये थे, उन्हे कमी किस बात की थी, तथापि इन सभी ऐश्वर्यों के बीच रहते हुए भी वह अपने आदर्श से डावाडोल नही हुए। विवाह के पश्चात भी राम ने तब तक सन्तान की इच्छा नही की जब तक उन्होने लङ्का-दिग्विजय का अपना जीवनोद्देश्य पूरा न कर लिया। विवाह के पश्चात भी राम ने सयम का पूर्णतया पालन किया एक तो इसलिये क्योकि वह सब ओरसे निश्चिन्त होकर लङ्का तक आर्यत्व की पताका फहराना चाहते थे, और दूसरे इसलिये क्योकि वह गर्भावस्था में सीता को रावण की जेल मे भेजना नही चाहते थे। अविवाहित अवस्था में ब्रह्मचारी बहुत बन जाते है, परन्तु विवाह के पश्चात जो पुरुष सयम का पालन करते है सच्चे ब्रह्मचारी तो वही है।

उर्मिला का तो रामायण मे कोई वर्णन नही मिलता परन्तु साता तो रामायण की आत्मा है। मानो रामायण की सत्ता को छिन्न-भिन्न

करने के लिए ही परमात्मा ने सीता को धरती पर जन्म दिया था। सीता के सम्बन्ध मे अनेक लोगो का यह विचार है कि वह धरती से पैदा हुई थी। वास्तव मे हम सब की जननी धरती ही है। यह हमारी धरती ही भारत माता कहलाती है। सीता भारत माता की एक आदर्श पुत्री थी। जिस माता के गर्भ से सीता का जन्म हुआ उस देवी का नाम धरणी था। सीता के पिता जनक बडे ही ज्ञानी, जीवन्मुक्त राजा थे। इसी कारण इन्हे विदेह और सीता को वैदेही भी कहा गया है। जनक किसी व्यक्ति विशेष का नाम नही, रावण ही के समान यह भी एक गद्दी का नाम है। सीता के पिता का नाम सीरध्वज जनक था, महाराज जनक के छोटे भाई का नाम कुशध्वज जनक था।

सीता के सम्बन्ध मे एक बहुत ही मिथ्या कथानक सर्वसाधारण मे प्रचलित है। लोग कहते है कि राम ने धोबी-धोबन के कहने मात्र से सीता को जङ्गल मे निकाल दिया। यह कहानी उन लोगो के दिमाग की उपज है जिन्हे न तो राम से प्रेम है, और न ही रामायण से। हम लोग इतना भी तो नही सोचते, जब राम ने लङ्का मे ही सीता की अग्नि-परीक्षा कर ली थी, तो एक बार लडके को फस्ट डिवीजन में पास करके कुछ ही दिन बाद उसे न केवल फेल ही कर देना बल्कि स्कूल से निकाल बाहिर करना कहा का इन्साफ है। बहुत सोच-विचार के पश्चात जज महोदय ने जब अपराधी को बरी कर दिया अगले ही दिन किसी गलतफहमी के आधार पर उसी निर्दोष प्राणी को घर से पकड फासी पर लटका देने का क्या मतलब है। यदि न्यायाधीश अपने पूर्व निर्णय मे कोई त्रुटि समझते है, उन्हे अधिकार है वह अपने फैसले पर फिर से गौर करें परन्तु उस अवस्था मे भी अपराधी को सफाई का एक और अवसर देना जरूरी है। माना कि राम प्रजा के बहुत प्रिय थे। यह भी माना कि प्रजा की आवाजको सुनने के लिए वह हर समय तैयार थे, यह भी निर्विवाद सत्य है कि राम प्रजा की भावनाओ की कदर करनेवाले थे, परन्तु प्रजा की भावनाये भी तो प्रजा के कष्टों के सम्बन्ध

मे ही होनी चाहिए ? प्रजा की भावनाओं का यह अर्थ कदापि नही कि दुकान के फट्टो पर अथवा चौपाल में बेकार बैठे लोग व्यर्थ मे ही एक निर्दोष व्यक्ति पर ख्वाहमख्वाह लाछन लगायें।

परन्तु फिर भी श्रीराम को यदि प्रजा की प्रत्येक झूठी सच्ची भावनाओ का ध्यान रखना ही था—उन्हे चाहिये था वह सीता के प्रश्न को मन्त्री मण्डल के अथवा विशेष अदालत (Special Tribunal) के हवाले कर देते। राम साफ साफ कह देते मेरी दृष्टि मे सीता बिल्कुल निर्दोष है। परन्तु यह धोबी धोबन सीता के सम्बन्ध में कुछ सन्देह प्रगट करते है। प्रजा की भावनाओ का आदर करना मेरा परम धर्म है, इस लिये मैं सीता के प्रश्न को निष्पक्ष विचारको के सामने उपस्थित करता हू। वे जो भी निर्णय देगे मुझे स्वीकार होगा। सीता के प्रश्न पर पुन विचार किया जाता। विभीषण, मन्दोदरी, सुषेन वैद्य, हनुमान, अगद, त्रिजटा, प्रभृति मौके के गवाहो को सीता के पक्ष में न्यायाधीश के सामने उपस्थित किया जाता। जिन ऋषियो के सामने लङ्का में ही सीता की अग्नि परीक्षा हुई थी उन्हें भी बुलाया जाता और धोबी-धोबन को भी पूछा जाता वे कौनसी दूरबीन लगाए घर में बैठे बैठे अशोकवाटिका तथा रावण के हर्म्य की सभी लीलाए देख रहे थे। यदि अदालत पूरे विचार के पश्चात धोबी-धोबन के सदेह को ही सत्य सिद्ध करती, उस अवस्था में राम सीता के साथ जो चाहे व्यवहार करते, और यदि सीता ही निर्दोष सिद्ध होती तो धोबी-धोबन को अदालती फैसले का अपमान करनेके अपराधमें कडेसे कडा दण्ड दिया जाता। प्रजा की भावनाओ का ध्यान रखने का यह अर्थ कदापि नही कि कुछ एक लुच्चे लफगों की बातो मे आकर हम अपनी सती-साध्वी देवी को घर से धक्का दे दे।

वास्तव मे सीता के दूसरे वनवास को लोगों ने बिल्कुल गल्त समझा है। यदि वनवास का अर्थ जंगल मे बसे हुए ऋषियो के तपोवनों में जाकर निवास करना है तब तो यह सत्य है कि सीता

अपनी सन्तान के लालन-पालन के लिये राजमहल को छोड़ ऋषियों के तपोवन मे रही, परन्तु यदि वनवास का अर्थ घर वालो से लड़ झगड कर कही भाग जाना अथवा घर वालों द्वारा धक्के दे दे कर घर से बाहिर निकाल देना है तो यह बात शत प्रतिशत निराधार है। अब प्रश्न केवल इतना ही है कि सीता ऋषियो के तपोबन मे जाकर रहा क्यो ? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिये सर्व प्रथम वैदिक सभ्यता को समझना अत्यावश्यक है। राजमहल के सस्कार अच्छे नही होते। राम अपनी सन्तान पर उत्तम सस्कारो का प्रभाव डालना चाहते थे। वैदिक सभ्यता का यह सिद्धान्त है कि गर्भावस्था मे ही सन्तान के सब सस्कार पक्के हो जाते है। माता जो भी खाती है, जो भी देखती है अथवा जो कुछ भा पढती या सुनती है सन्तान पर उसका सीधा प्रभाव पडता है, इसी लिये वैदिक सभ्यता के सोलह सस्कारो मे गर्भाधान भी एक प्रमुख सस्कार है। इसी लिये यह कहा गया है कि माता को अच्छे विचार रखने चाहियें, सुन्दर स्थानो का दर्शन करना चाहिये, तथा उठते बैठते अच्छे अच्छे सुन्दर चित्रो को देखते रहना चाहिये। राम ने अपनी सतान को ऋषियो के सस्कार में रग देने के लिये सीता को वाल्मीकि के आश्रम में उसी प्रकार रखा जैसे पुत्रिया प्रसव के लिये पिता के घर में रहती है। वाल्मीकि ऋषि राष्ट्र के पिता थे। राम ने सीता को उनके हवाले करते हुए कहा—ऋषे! आप कहते थे मेरे पिता ने बार बार मागने पर भी मुझे नही दिया, मै अपनी सन्तान को बिना मागे ही आपको देता हू। मेरे पिता ने मेरे पैदा होने के बहुत पीछे मुझे आपके पास रखा मै अपनी सन्तान को पैदा होने से पहले ही आपकी छत्रछाया मे भेजता हू। जैसे भी आप चाहे मेरी सन्तान को बना सकते है और सचमुच राम की सन्तान राम से भी योग्यतर निकली। दुख केवल इसी बात का है कि वाल्मीकि रामायण के समान हमारे पास लव-कुश की वीर गाथाओ का कोई इतिहास नही। परन्तु जो कुछ थोडा बहुत किम्वदन्ती के रूप में हमारे

सामने है उससे भी इतना तो सिद्ध है ही कि अकेले लव ने बाहुबल से राम की भारी सैना तथा उसके सभी योधाश्रों को रोके रखा।

सीता को बाल्मीकि आश्रम में रखने का एक दूसरा कारण भी था, श्रौर सम्भवतया वही कारण प्रमुख था। राम के पिता ककयी की सन्तान को अयोध्या का राज देनेकी प्रतिज्ञा कर चुके थे। भरत के बहुत आग्रह पर राम ने स्वय राजा बनना स्वीकार किया अवश्य, परन्तु अपने पश्चात वह श्रयोध्या के राज को भरत की सन्तान के हवाले कर देना चाहते थे। यदि राम श्रपनी सन्तान को श्रयोध्या मे ही रखते, उन्हे इस बात का भय था। शायद राज्य के लिये उनकी तथा भरत की सन्तान मे कोई झगडा खडा हो जाये। नि सन्देह राम तथा भरत में बहुत स्नेह था परन्तु यदि दो भाईयो मे स्नेह है तो यह कोई पक्की बात नही कि उनकी सन्तान मे भी वैसा ही प्रेम हो। सर्व प्रथम तो इसी बात मे सन्देह है कि योग्य पिता का सन्तान भी अवश्य योग्य ही हो। गान्धी, तिलक श्रौर लाजपत की सन्तानो को कौन नही जानता ?

ताकि भरत की सन्तान निष्कण्टक राज प्राप्त करसके,रामने श्रपनी सन्तान को सर्वथा अयोध्या से पृथक रखने का निश्चय किया ताकि ससर्ग दोष से उनमे राज का मोह ममता जागृत ही न हो। श्राज भी ससार इस बात को श्रच्छी प्रकार जानता है कि लव ने लाहौर बसाया और कुश ने कसूर। श्रयोध्या का राज भरत की सतान को दिया गया, लक्ष्मण की सन्तान को मुलतान तथा मियावाली का इलाका मिला। शत्रुघ्न की सन्तान को दिल्ली, मथुरा और राम ने अपनी सन्तान को दिया मध्य पजाब, श्राज कल के जमाने का खालसिस्तान।

सीता जिन दिनो बाल्मीकि के तपोवन मे थी, उन्ही दिनो ऋषि ने रामायण की रचना की। रामायण के सम्बन्ध मे विश्वस्त जानकारी सीता ही से प्राप्त की जा सकती थी। ऋषि ने जिस ग्रन्थ की रचना की थी उसका नाम "पौलस्त्य वध" "The end of Ravana"

था और रामायण नामक ग्रन्थ का यही नाम उचित भी है। रामायण का ठीक नाम रामायण उसी अवस्था मे हो सकता था जब कि रामायण में सम्पूर्ण राम-चरित्र का वर्णन होता। परन्तु ऐसी बात तो है नही। यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो रामायण में रामजीवन के एक अंश का ही वर्णन है। लगभग २४ वर्ष की अवस्था मे राम ने ताड़का का वध किया, परन्तु कृष्ण-लीला के समान राम की बाल-लीला का रामायण मे कही वर्णन नही मिलता। राम जन्म के पश्चात शीघ्र ही विश्वामित्र ऋषि अयोध्या मे आ धमकते है। फिर विवाह के पश्चात बनवास के दिन तक राम ने क्या किया इस बात का भी कही कोई वर्णन नही मिलता। बनवास के चौदह वर्षों मे भी केवल चौदहवे वर्ष का ही विस्तृत वर्णन मिलता है। चित्रकूट से चलकर पञ्चवटी तक का वर्णन नाममात्र को है। पुनश्च लङ्का से लौट कर राम ने जो ३० वर्ष राज्य किया उस का विस्तृत वर्णन भी कही नही मिलता। इन सब बातो का उसी अवस्था मे लिखा जाना उचित था यदि आदि-कवि अपने ग्रन्थ को रामायण के नाम से लिखते। उन के ग्रन्थ का तत्व रामचरित्र के केवल उसी हिस्से का वर्णन था जिसका सम्बन्ध रावण वध से है। In Ramayna as we find the epic even to-day, it is impossible to trace the full history of Rama'scareer, instead, only that portion of Rama's life is described that is connected with the annihilation of Ravana the descendant of Maharshi Pulastya.

ऋषि वाल्मीकि ने अपने ग्रन्थ मे रावण का नाम बडे ही सन्मान के साथ लिया है। रावण के सम्बन्ध मे जो सर्वत्र बुरी भावना फैली है वह मध्य कालीन युग की एक उपज है। उस समय इसी बात की आवश्यकता थी। उन दिनो पठानो का सर्वत्र जोर था। भगवान के जन्मस्थान को म्लेच्छो ने अपना कब्रिस्तान बना लिया था। फतहपुर

को सुखमय बना अनेक पर्वतों का आग बुझा, अनेक नद-नदियों को भरपूर बना स्वय बिलकुल खाली हो जाता है, और अपनी उस निर्धनता का ही अपनी दौलत समझता है, उन कर्मयोगियो की अभिलाषा उस पुष्प की अभिलाषा होती है जिसका चित्रण एक भारतीय आत्मा ने कितनी सुन्दरता के साथ किया था—

चाह नहीं मैं सुर बाला के बालों में गूंथा जाऊं :
चाह नहीं प्रेमी माला में बिन्ध प्यारी को ललचाऊं।
चाह नहीं सम्राटों के शव पर चढ़कर गौरव पाऊं
चाह नहीं मै महादेव पर चढ़ूं भाग्य पर इतराऊं
मुझे तोड़ लेना बनमाली उस पथ पै देना तू फैंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ पर जावें वीर अनेक।

तुलसीदास के राम मे तथा वाल्मीकि के राम में केवल भावना मात्र का अन्तर है, तुलसी के राम साक्षात विष्णुरूपलीलाधारी परमपुरुष है आदि कवि के राम ऐतिहासिक-महापुरुष है। तुलसी के रावण ने राम से केवल इस लिये वैर बाधा ताकि वह उस लीला पुरुषोत्तम साकार परम ब्रह्म परमात्मा के कर कमलो द्वारा इस नारकी देह से छूट जाये और जन्ममरण के बन्धन से मोक्ष प्राप्त कर सके, परन्तु आदि कवि का रावण वह वीर योधा है जो स्वदेश तथा स्वाभिमान की रक्षा के लिये अन्तिम क्षण तक लड़ा, अपनी आन बाण शान को जिसने अशमात्र भी नीचा नही होने दिया।

रामायण के सभी पात्रो का जीवन पाठको के सामने एक से एक उत्तम आदर्श उपस्थित करता है। परन्तु रामायण मे केवल गृहस्थ का ही आदर्श ढूढना और उसी मे सन्तोष करके बैठ जाना रामायण के रचयिता, तथा स्वय राम के साथ अन्याय करना है। लोग कहते है, रामायण को इसलिये पढना चाहिये, क्यूंकि इस सदग्रन्थ के पठन पाठन से देश मे भरत जैसे भाई, सीता जैसी नारिया, राम जैसे पुत्र पैदा हो, परन्तु अच्छे पुत्र अच्छी पुत्रिया, अच्छे भाई तो रामायण के

पहले भी इस देश में पैदा होते रहे। रामायण पीछे लिखी गई राम, सीता, भरत पहले हुए। राम रामायण पढे बिना ही अच्छे पुत्र बन गये, हम रामायण पढ कर भी कुछ न बन सके। वास्तव में हिन्दू के घर में पैदा हुआ प्रत्येक बालक आदर्श-पुत्र होता है, प्रत्येक देवी आदर्श पत्नी होती है हम स्वय अपने लच्छनो से, अपने बुरे सस्कारो से अपनी सन्तान को तथा अपने घर बार को बिगाड लेते है। रामायण हमारा राष्ट्रीय महाकाव्य है। यदि हम लोग रामायण के तत्व को समझते आज अपने ही देश में हमे दुर्गति के दिन न देखने पडते। हम तो आराम से बैठ राम नाम की माला ही जपते रहे और विदेशियो द्वारा अपने घर वार को लुटते हुए अपनी आखो देखते रहे।

राम चरित्र मे राजनीति का उल्लेख कुछ एक भद्रपुरुषो को अच्छा प्रतीत नही देता। ऐसे लोग शायद बुद्धूपने तथा दब्बूपने को ही धर्म समझे बैठे है। वे इस बात को भूल जाते है कि गुलामो का कुछ भी धर्म नही होता। धर्म उन्ही का होता है जो स्वभुजवल से अपने धर्म की रक्षा कर सकते है। जिन लोगो के धर्म की रक्षा के लिये विधर्मी पुलिस और विदेशी सेनाओ की आवश्यकता है उनके धर्म की अवस्था मृत्यु शैया पर पडे उस रोगी की सी होती है जिसे केवल इन्जैक्शनो के सहारे पर ही कुछ देर तक जीवित रखने की चेष्ठा की जा रही हो। स्वाधीनता ही स्वधर्म रक्षा का सर्वप्रथम सिद्धान्त है। जो राष्ट्र इम सिद्धान्त की रक्षा करता है वास्तव मे उन्ही का धर्म सुरक्षित है। आजादी सब से वडा धर्म है, गुलामी सब से भयकर पाप है।

राम ने वाली को मारने में, तथा विभीषण को अपने पक्ष में लाने में जिस मनोवृत्ति का प्रदर्शन किया कुछेक निकम्मे लोगो की दृष्टि में कुछ अब तक भले ही वह शोभनीय न हो परन्तु एक वहुत बडे पुण्य के लिये छोटा सा पाप कोई बुरा नही। वाली का राज्य वाली के ही वश में रहा, लङ्का का राज्य रावण के ही भाई के पास रहा परन्तु इन दो व्यक्तियो को खत्म कर देने पर आर्यावर्त के करोडो नर नारियो के

जानमाल की राम ने रक्षा की। यदि एक व्यक्ति के नष्ट कर देने से एक राष्ट्र की रक्षा हो सकती है तो निःसन्देह राष्ट्र उस व्यक्ति से बहुत बडा है।

आज इस देश को उस राम की आवश्यकता नही जो एक हिरण तक का निशाना नही कर सकता, जो सीता के वियोग में आसू बहाता हुआ जगल के पशुओ, पक्षियो, चट्टानो और वृक्षो तक से सीता का पता पूछता फिरता है, भाई के मूछित हो जाने पर जो केवल हनुमान ही की सहायता पर आशा लगाये बैठा है, धोबी धोबन के अनर्गल प्रलाप से प्रभावित झूठी वाह वाह के लिये निर्दोष सीता को धोके और फरेब से जगल मे निकाल देता है। आज देश को उस धनुर्धारी राम की आवश्यकता है जो एक ही वाण से पर्वतो के वक्ष.स्थल को छेद सकता है। जिस के धनुष हाथ मे लेते ही सहस्रो मील दूर बैठे निशाचरो के दिल दहल उठते है, इन्द्र जिस राम का किंकर है, वरुण जिस का सेवक है, मरुत जिस का अनुचर है, पर्वत जिस को दूर से आते देख रासते से एक तरफ हट जाता है।

आज भी इस देश के घर २ मे रामायण का पाठ होता है, आज प्रत्येक स्थान पर राम-लीलाए होती है, आज भी लाखो भारतीय नर नारी रामायण को श्रद्धा से सुनते है तथा रामलीला को देख अपने को परम भाग्यशाली समझते है। जिस मार्ग पर चलते हुए राम ने बन-यात्रा की थी उसी मार्ग का अनुसरण करते हुए लाखो नरनारी आज भी अपना जन्म सफल मानते है। यह भी परम पिता परमात्मा की हम पददलित्त लोगो पर महती अनुकम्पा है। शायद आज का अनुसरण कल का अनुकरण वन सके, सम्भव है राम के लाखो भगतो मे से एकाध भी राम के वास्तविक स्वरूप को समझ उन्ही की धर्मनीति का अनुकरण करता हुआ लङ्काशायर रूपी अशोकवाटिका मे वन्दनी स्वाधीनता सीता की रक्षा कर सके——

———

(५)

कृष्ण चरित्र

(१) बाल कृष्ण ।

अकुण्ठं सर्व्वं कार्य्येषु धर्म्मकार्य्यार्थमुद्यतम् ।
वैकुण्ठस्य च यद्रूपं तस्मै कार्य्यात्मने नमः ॥

रामायण काल में आर्यावर्त एक और अखण्ड था, कृष्णयुग में आर्यावर्त भारतवर्ष बन चुका था। उसकी एकता खण्ड-खण्ड हो चुकी थी। जितने नगर थे उतने ही राजा थे। सबसे बड़ा राजा जरासन्ध था, दूसरे नम्बर पर था पाञ्चाल, तीसरे नम्बर पर हस्तिनापुर, चौथे स्थान पर शिशुपाल। जरासन्ध के शरीर मे विदेशी रक्त था और उसके हृदय मे भारत-सम्राट बनने की तीव्र लालसा थी, इसी उद्देश्य से उसने राजा कालयवन की सहायता प्राप्त की। शिशुपाल जरासन्ध का ऑनरेरी कमाण्डर-इन-चीफ था। दूसरी तीसरी शक्ति आपस में कभी एक न हो सकती थी। दोनो के राज्य की सीमायें आपस में मिलती थी। अत इन दोनो के बीच सदैव ही खटपट रहती थी। जरासन्ध और शिशुपाल की मिली जुली ताकत का सामना करने की किसी में हिम्मत न थी। जरासन्ध भारत का एक मात्र डिक्टेटर बनना चाहता था। पूर्वी भारत को तो मगध मे बैठे २ उसने दबा लिया, उत्तरी तथा पश्चिमोत्तरी भारत को दबाने के लिये उसने मथुरा के युवराज को दामाद बनाया।

मथुरा के राज्य पर कस का कोई अधिकार न था, राज्य का वास्तविक उत्तराधिकारी देवकी का पुत्र था। अपने श्वसुर की सैन्य-

शक्ति का बल प्राप्त कर कस ने मथुरा के राज्य पर कब्जा जमा लिया, वसुदेव देवकी पर उसने कडी निगरानी बिठा दी। स्वार्थ मनुष्य को अन्धा कर देता है। अपने राज्य को अपने ही कुल मे सुरक्षित रखने के लिये देवकी की भावी सन्तान को नष्ट कर देने का कस ने दृढ़ निश्चय कर लिया। ऐसी परिस्थिति मे भाद्रपद बदी अष्टमी को उसी मथुरा नगरी मे योगेश्वर भगवान का प्रकाश हुआ। परन्तु प्रजा तो इस बात पर तुली हुई थी कि उसने हर हालत मे देवकी-पुत्र की रक्षा करनी ही है। वास्तव मे देवकी-पुत्र की रक्षा करने से प्रजा की रक्षा की जा सकती थी। दोहते के अभाव मे भतीजा ही राज्य का अधिकारी है। देवका-पुत्र की यदि रक्षा की जा सकती तो कस के लिये राजा बन रहने का कोई बहाना न था अत प्रजा की ओर से इस बात का प्रबन्ध किया गया कि देवकी-पुत्र को जन्मते ही किसी सुरक्षित स्थान पर पहुचा दिया जाय।

कस-राज की राजधानी मथुरा से केवल पाच मील के फासले पर गोकुल मे बाल-कृष्ण खूब फूलने फलने लगे। उज्जैन में सान्दीपनि ऋषि के गुरुकुल में बाल-कृष्ण ने विद्याध्ययन किया। केवल चौसठ दिन के अल्प समय मे भगवान ने वेद वेदाग, धर्मशास्त्र, धनुर्वेद तथा युद्ध सम्बन्धी सभी ज्ञान मे पूर्णता प्राप्त करली।

प्रजा नेताओ ने कॅस के विरुद्ध अक्रूर के हाथ कृष्ण को मथुरा पधारने का निमत्रण भेजा। कृष्ण-बलराम कतिपय बाल-गोपालों के साथ मथुरा पहुचे। अपने हृदय सम्राट का प्रजा ने दिल खोलकर स्वागत किया। अपने मुक्तिदाता को अपने बीच मे देखते ही प्रजा ने कस के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। वह विद्रह इतना जबरदस्त था कि पुलिस और फौज तक ने हथियार उठाने से इकार कर दिया। राजा भी तभी तक राजा है जब तक प्रजा साथ है, प्रजा साथ नही तो राजा काहे का। कुछ एक घनिष्ठ मित्रो ने व्यक्तिगत रूप से कस को बचाने की जरूर कोशिश की, परन्तु सब निष्फल।

(२) कौरव-पाण्डव।

युधिष्ठिरो धर्ममयो महाद्रुमः स्कन्धोऽर्जुनो भीमसेनोऽस्यशाखाः।
माद्रीसुतौ पुष्पफले समृद्धे मूलं कृष्णो ब्रह्म च ब्राह्मणाच॥

कृष्ण-जीवन के साथ पाडवो तथा कौरवो का अटूट सम्बन्ध है। हस्तिनापुर की कहानी लिखे बिना कृष्णजीवन अधूरा ही है। कृष्ण डिक्टेटरशाही के विरुद्ध थे। वह प्रजातन्त्र के पक्षमे थे, परन्तु उनका प्रजातन्त्र सिन्ध और बगाल की टाईप का प्रजातन्त्र न था। प्रत्येक व्यक्ति को वोट का अधिकार सुनने मे तो बडा लुभावना प्रतीत देता है, परन्तु इन लुभावने शब्दो का भयकर परिणाम, जाइए नोवाखाली और सक्खर मे जाकर देख लीजिये। कृष्ण-जीवन का उद्देश्य आचार तथा योग्यता के आधार पर बना हुआ एक और अखण्ड सार्वभौम प्रजातन्त्र स्थापित करना था और इस भारतीय प्रजातन्त्र का प्रधान केन्द्र वह हस्तिनापुर में रखना चाहते थे, और कौरव कुल के योग्यतम व्यक्ति को राष्ट्रपति बनाना चाहते थे।

हस्तिनापुर की स्थापना महाराजा हस्ति ने की थी। पाडवो के जन्म से लगभग २ सौ वर्ष पूर्व इसी नगरी मे महाराज दुष्यन्त का निवास था। कौरव और पाण्डव इन्ही दुष्यन्त महाराज के वशज थे। कृष्ण के समय हस्तिनापुर की आन्तरिक अवस्था बहुत गिर चुकी थी। वैसे तो भीष्मपितामह, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य कौरव राज्य के सभा स्तम्भ खूब मजबूती के साथ इस राज्य को सभाले हुए थे, परन्तु वास्तविक शासन सत्ता शकुनि के ही हाथो मे थी। दुर्योधन के मामले में यदि शकुनि का अडगा न होता तो सम्भव था कृष्ण अर्जुन के स्थान पर दुर्योधन को ही अखड भारत का राष्ट्रपति बना देते, परन्तु शकुनि के रहते २ दुर्योधन को उठाना दूसरे शब्दो मे शकुनि के हाथो को और भी सुदृढ करना था। सार्वभौम प्रजातन्त्र का सुख स्वप्न पूरा होता देखने के लिये जरासन्ध, शिशुपाल तथा शकुनि की सत्ता का नष्ट

किया जाना अत्यावश्यक था। इसी उद्देश्य को दृष्टि मे रखते हुए कृष्ण ने अर्जुन को उठाने का निश्चय किया।

उन दिनो अर्जुन की ख्याति दिग्दिगन्त मे व्याप्त हो रही थी। आचार्य द्रोण के सर्व श्रेष्ठ शिष्य की अस्त्र विद्या का चमत्कार ससार अर्जुन द्वारा द्रुपद राजा के बन्दी बनाए जाते समय देख चुका था। कृष्ण उस समय द्वारका मे थे। पाण्डव शकुनी के षडयन्त्र का शिकार बन चुके थे। ससार उन्हे लाक्षागृह मे भस्मीभूत ही समझता था, परन्तु प्रधान मन्त्री विदुर की बुद्धिमत्ता से माता समेत पाचों भाई सुरक्षित गगा पार पहुचा दिये गये थे। इस रहस्य को ससार मे केवल तीन ही व्यक्ति जानते थे, व्यास, विदुर तथा कृष्ण। द्वारका मे बैठे २ कृष्ण ने पाडवों को शक्तिशाली बनाने की एक योजना तैयार की। भारत की दूसरे दर्जे की शक्ति के साथ पाण्डवो का सम्बन्ध स्थापित कराने का उन्होने सकल्प किया।

अर्जुन के साथ द्रोपदी के विवाह का प्रबन्ध कृष्ण ने ही किया था। अर्जुन को धर्मपुत्र के रूप में प्राप्त करने की लालसा द्रुपद राजा के दिल में कृष्ण ने ही जागृत की थी। द्रुपद महाराज अर्जुन की प्रतिभा को अपनी आंखो देख चुके थे। उनकी भी हार्दिक इच्छा थी कि अर्जुन ही द्रोपदी को पति रूप मे प्राप्त हो। स्वयवर की शर्त वर को खोजने के लिए न थी, वह तो केवल अर्जुन को खोजने के लिए ही थी। उस शर्त को कर्ण वा अर्जुन केवल दो ही व्यक्ति पूरी कर सकते थे। यह पहले ही निश्चित हो चुका था कि कर्ण को बिठा दिया जाय।

द्रोपदी के पाच पति होने का आधार भी तारा-सुग्रीव के समान लोगो की बेसमझी का ही फल है। क्यूकि कृष्ण महाराज ने स्वयवर के समय पाडवो का उत्तराधिकार द्रौपदी के पुत्र को देने का वचन दिया था, इस नियम के अनुसार द्रोपदी को पटरानी माना गया। कानूनन अधिकार युधिष्ठिर का सन्तान का था, अर्जुन के वश मे उत्तराधिकार चलाने के लिए कृष्ण को एक विशेष आर्डीनैंस का निर्माण करना पडा।

द्रोपदा को पाचो पाडवो की पटरानी के स्थान पर लोगो ने पाचों पाडवो की रानी कहना शुरू कर दिया।

: ३ :

पांडव-दिग्विजय

वेद वेदागं विज्ञानं बलं चाप्यधिकं तथा।
नृणां लोके हि कोऽन्योऽस्ति विशिष्टः केशवादृते॥

पाडवो का सम्बन्ध एक शक्तिशाली राजा की पुत्री के साथ हो जाने से तथा कृष्ण के महान व्यक्तित्व के प्रभाव से दुर्योधन ने पाडवों को अपने राज्य का कुछ भाग देना स्वीकार कर लिया। अत दिल्ली से लेकर मथरा तक का प्रदेश उसने पाडवो के हवाले कर दिया। उद्यमी पाडवो ने भयानक जगलो से आच्छादित इस प्रदेश पर इन्द्रप्रस्थ के सुन्दर नगर की रचना की। लगभग तीस वर्ष राज्य कर लेने के पश्चात कृष्ण ने पाडवो द्वारा राजसूय करवाने का निश्चय किया। राजसूय में सफल हो जाने वाला राजा ससार के सभी राजाओ का सिरमौर माना जाता है। परन्तु ऐसा ही राजसूय करने का एक दूसरा दावेदार भी था—जरासन्ध। उसके रहते रहते युधिष्ठिर द्वारा राजसूय कुछ अर्थ न रखता था। परन्तु जरासन्ध को समाप्त कैसे किया जाय। राम ही के समान कृष्ण ने भी नीति का आश्रय लिया। भीम-अर्जुन को साथ ले, स्नातक वेष में वह गिरिव्रज पहुचे, जरासन्ध के अतिथि वने। भीम-अर्जुन के सम्वन्ध में जरासन्ध का परिचय करवाते हुए कृष्ण ने कहा यह दोनो स्नातक मौनव्रत धारण किये है। आज अर्द्धरात्री के समय इनका मौन भग होगा। ऐसे तपस्वी स्नातको के साथ मौन भग होते ही वार्तालाप करना जरासन्ध ने अपना सौभाग्य समझा। और जब अर्द्धरात्री के समय वह अकेला इन तपस्वी स्नातको से वार्तालाप करने आया भीम ने उसे पकड कर जान से मार डाला।

अब पाडवो द्वारा ससार की दिग्विजय आरम्भ हुई। सहदेव दक्षिण

दिशा मे गये, नकुल ने हरयाना प्रान्त, मालवा, सिन्ध, गुजरात, तथा रजस्थान को सर किया, भीम ने सयुक्त प्रान्त-बिहार, बगाल तथा वर्मा की दिग्विजय की, अर्जुन, सहारनपुर-देहरादून होते तिब्बत के मार्ग से चीन पहुचा। वहा से मध्य एशिया से होते हुए ईरान तथा ईराक के रास्ते वह काकेशिया तक पहुचा। भूमडल मे अपने वैभव का डका बजा इन्द्रप्रस्थ मे पाडवो ने राजसूय का श्रीगणेश किया। उस यज्ञ मे ससार के सभी राजा लोग आए। धर्मराज युधिष्ठिर स्वय हस्तिनापुर पधारे और दुर्योधन-शकुनि एण्ड कम्पनी की मिन्नतें खुशामदे कर उन्हे आदर-पूर्वक इन्द्रप्रस्थ ले गये।

राजसूय यज्ञ मे सबसे प्रमुख कार्य बाहिर से आए हुए राजाओ को साक्षात्कार (Interview) देना था। इस मुख्य स्थान पर कौरव दल के कायदे आजम को सुशोभित किया गया। अन्य प्रमुख स्थान भी कौरव-मुखियों को ही दिये गये। यज्ञ का श्रीगणेश हुआ। परन्तु प्रश्न यह था कि प्रथम अर्घ्य किसे दिया जाय। कृष्ण का नाम प्रस्तुत करते हुए पितामह बोले—

"वृष्णिवन्शी कृष्ण ही भूमण्डल पर सब से अधिक पूजनीय है, क्योंकि इन सब राजा आदिकों मे कृष्ण ही तेज, बल और पराक्रम से इस प्रकार देदीप्यमान है जैसे ग्रह नक्षत्रादिकों के मध्य भास्कर प्रतीत होता है, देखो हमारी यह सभा भी कृष्ण जी के प्रताप से ऐसी प्रकाशित और आह्लादित हुई है जैसे अन्धकार-मय स्थान सूर्य से प्रकाशित हो जाता है। यह महाबाहु अच्युत कृष्ण केवल हम लोगों के ही परम पूजनीय नही किन्तु यह तीनों लोकों के पूज्य है। मैं ने बहुत से मान-वृद्ध महात्माओं की सङ्गति की हैं जो महात्मा मुझे मिले उन सब के मुख से मै ने इस गुण सम्पन्न महाबुद्धिमान कृष्ण के जन्म से लगा कर अब तक के बड़े २ उत्कृष्ट गुण और कर्म जो सज्जन समाज मे परम आदरणीय है अनेक बार श्रवण किये हैं। दान, सरलता, विज्ञान

पराक्रम, लज्जा, कीर्ति, उत्कृष्ट बुद्धि, नम्रता, लक्ष्मी, धैर्य, सन्तोष, पुष्टि यह सब गुण कृष्ण में स्वाभाविक है। हे राजा लोगों यह कृष्ण ही संसार का भूषण, आचार्य, पिता, गुरु, माननीय, ऋत्विज, गुरु द्वारा विवाह किये जाने योग्य स्नातक, राज वा लोक प्रिय आदि सब कुछ यही है और इसी लिये जितेन्द्रीय तथा अच्युत कृष्ण का यहां पूजन किया गया है सो आप लोगों को यह कार्य स्वीकार करना चाहिये।

शिशुपाल ने भीष्म के उस प्रस्ताव का विरोध करते हुए न केवल कृष्ण पर ही हमले किये बल्कि पितामह को भी धर रगड़ा। भीष्म को भी उसने बहुत बुरा भला कहा। परन्तु शिशुपाल जैसे कृष्ण-द्रोही तक ने भगवान योगेश्वर पर बाल-लीला सम्बन्धी कोई लांछन नहीं लगाया। कृष्ण की बाल-लीलाओं का सम्बन्ध भीतरी शरीर के साथ है, यह एक आध्यात्मिक विषय है। हम "गीता की भूमिका"—"महाभारत के सूत्रधार" Hidnu Mythology पुस्तकों में कृष्ण की बाल-लीला पर पूरा पूरा प्रकाश डाल चुके हैं अतः उन्हीं बातों को यहां दोहराना ठीक न होगा।

: ४ :

योगेश्वर कृष्ण

एकोऽपि समरं पार्थं पृथिवीम निर्दहेच्छरैः ।
आत्मभिर्महितो भूत्वा न जाने किं करिष्यति ॥

राजसूय के प्रसंग पर दुर्योधन से पाण्डवों का वैभव सहन न हो सका। धर्मराज युधिष्ठिर के सरल स्वभाव का उपयोग करते हुए उसने इन्द्रप्रस्थ के राज्य को हथियाने के लिये षड्यन्त्र रचाया। परन्तु उसका यह षड्यन्त्र इसी अवस्था में सफल हो सकता था जब कि कृष्ण महाराज इन्द्रप्रस्थ में न होते। कृष्ण को इन्द्रप्रस्थ से निकालने के लिये उसने एक उपाय सोचा। शाल्व राजा को उसने द्वारका पर आक्रमण

के लिये उकसाया। हवाई आक्रमण का समाचार पाते ही कृष्ण द्वारका की ओर भागे। उनकी अनुपस्थिति से लाभ उठाते हुये दुर्योधन ने धर्मराज पर डोरे डालने शुरू किये। जिस प्रकार बीसवी शताब्दि के धर्मराज ने अपना सब कुछ स्वय ही जिन्ना के हवाले कर दिया, और गाधी महाराज के चेले चाटे बाते तो बडी-बडी बनाते थे, परन्तु वे भी आख़िर जिन्ना की ही चौखट पर नाक रगडने लगे। हिन्दू-मुसलमानो में लडाई न हो, ससार हमे एक स्थान पर बैठा देखे केवल इसी निकम्मी तथा निरर्थक भावना के वशीभूत हो, काग्रेसी महापुरुषो ने अपना बना बनाया साम्राज्य अपने हाथो नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। परन्तु दुर्योधन तो फिर भी न माना। पाडवो को यह शौक था कि ससार के सामने कौरव कुल की एकता का प्रदर्शन कर सके किन्तु दुर्योधन के सिर पर पाडवों की इस दुर्बलता का लाभ उठाते हुये साम्राज्य विस्तार की ही धुन सवार थी। पाडव तो प्रत्येक अवस्था में हमारे साथ चिमटे ही रहेगे, हमें नुकसान पहुचाने के लिए कर्मणा तो क्या मनसा और वाचा भी कुछ न करगे अत. कौरवो ने मौके से खूब फायदा उठाया। उनके उपद्रव हद से ज्यादा बढ गये, बदले की भावना पाडवो मे न थी। जब भी दुर्योधन ने कोई नया अधिकार प्राप्त करना चाहा झट उसने कही न कही उपद्रव खड़ा कर दिया। उसका परिणाम वही निकला जो आज कल निकल रहा है। नवाखाली, कलकत्ता तथा बम्बई के उपद्रवो का पुरस्कार स्वरूप लीग को मिली हिन्दुओ के बराबर पाच सीटे। परन्तु लीग को आसाम भी चाहिये था इसके लिये उन्होने रचाया एक नया हत्याकाण्ड हजारा, एबटाबाद। काग्रेस ने ६ दिसम्बर की घोषणा स्वीकार कर ली, लीग वाले फिर भी अकडखा ही बने रहे। निश्चय ही आजकल के धर्मराज और उनके अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव आप तो बनवास मे जायेंगे ही साथ में आसाम, बगाल, सिन्ध, फ्रन्टियर तथा पजाब के हिन्दुओ को भी दर-दर का भिकारी बनाये बिना दम न लेंगे।

पाडवो ने न केवल अपने लिये ही राज त्यागा। वल्कि उस राज्य पर उन्होने अपने उत्तराधिकारियो का दावा भी त्याग दिया। क्योंकि द्रोपदी की सतान ने ही इन्द्रप्रस्थ का उत्तराधिकार प्राप्त करना था। इसलिये कवि ने लिखा कि पाडवो ने न केवल अपना राज्य ही हारा, न केवल उन्होने अपने आपको हारा वल्कि द्रोपदी को भी हार दिया।

अपने महात्मापन के वशीभूत हो धर्मराज युधिष्ठर ने कृष्ण के परिश्रम पर पानी फेर दिया। कृष्ण उन दिनो शाल्वराजा के आक्रमण से द्वारिका की रक्षा करने मे लगे थे। हस्तिनापुर मे जो भी राजनीतिक दाव पेच खेले गये उनं सवका पता कृष्ण को उस समय लगा जव पाडव वनवास मे जा चुके थे। इस अवस्था में कृष्ण पाडवो की कुछ भी सहायता करने मे असमर्थ थे। जव स्वय धर्मराज को ही राज्य का कोई प्रलोभन न था उस अवस्था मे कृष्ण क्या कर सकते थे। पाडवो को धक्के दे दे कर तो किसी ने निकाला न था, स्वेच्छा से ही पाडवो ने राज्य का परित्याग किया था। दुर्योधन के अन्याय के विरुद्ध द्रोपदी के थोडे से प्रोटैस्ट ने पाडवो के आजन्म कारावास के दण्ड को १२ वर्ष में वदल दिया। यदि पाचो पाडव दुर्योधन के उस अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाते तो निश्चय ही अन्याय द्वारा जाता हुआ उनका का राज उन्हे वापिस मिल सकता था। परन्तु जव लेने वाला ही अपनी वस्तु को छोड भागा तो दिलवाने वाला क्या करे।

परन्तु कृष्ण के सामने पांडवो के तेरहवें वर्ष की समस्या अवश्य थी। पाडव जैसे दिग्विजयी सूरमाओ का एक वर्ष तक कही भी छिप कर रहना असम्भव था, जव कि कौरव साम्राज्य की सारी मशिनरी पाडवो का पता लगाने मे जी तोड कर यत्न कर रही हो। अत कृष्ण ने पाडवो को विराट राजा के पास रखने का निश्चय किया। इसमें कृष्ण को दो वातो का आराम था। एक तो विराट का इलाका कौरवों के इलाके के विलकुल साथ लगा हुआ था। अतः विलकुल पास में दुर्योधन अधिक छानवीन न करता, वह समझता पाडव निश्चय ही

बहुत दूर चले गये होगे। दूसरी बात यह थी कि विराट कौरवों का शत्रु था अत. उसकी सैन्य शक्ति दुर्योधन के गुप्तचरों को निशक्त बना सकती थी। परन्तु विराट राजा के पास पाडवो को रखते हुये भी प्रजा की ओर से कृष्ण को चिन्ता अवश्य थी। यदि प्रजा मे से पाडवों को किसी ने पहचान लिया तो ? यदि राज के किसी बडे अफसर ने ही पाडवों के वहा होने की खबर दुर्योधन तक पहुचा दी तो ? कृष्ण ने इस बात का प्रबन्ध किया कि भरे दरबार मे पाडव साधारण वेश मे विराट राज के सामने उपस्थित हो और सब के सामने उन्हे नौकरी पर रख लिया जाय, ताकि पीछे उन्हे कोई देखे भी तो उनके बारे में सन्देह न करे। यदि विराट राज चुपचाप उन्हे अपने पास रख लेते तो सन्देह वाली होती। पाण्डवो को महकमे भी ऐसे दिये गये ताकि वे लोग भीतर बैठ अपना थोडा बहुत काम करते रहे। प्रजा के साथ अधिक सम्पर्क मे न आने पावे।

तेरहवा वर्ष इस प्रकार सुखपूर्वक व्यतीत हो गया। अब चिन्ता थी भविष्य की। धर्मराज अब भी सुलह करने के ही पक्ष में थे। यह जानते हुए भी कि सुलह कदापि नही होगी, केवल धर्मराज की इच्छा को पूरा करने के लिये कृष्ण हस्तिनापुर जाने को तैयार हुये। परन्तु वह राम भरोसे बैठ कर ससार का तमाशा देखने वाले राजनीतिज्ञ नही थे। दुर्योधन की शठता को वह खूब समझते थे। अतः उन्होने अपने प्रस्थान से पूर्व एक हजार सिपाही कृतवर्मा की कमान में हस्तिनापुर भेज दिये।

कौरव सरदारो ने वृकस्थल के स्थान पर कृष्ण का स्वागत किया। दुर्योधन ने कृष्ण को अपनी शानोशौकत दिखाई। धृतराष्ट्र ने बहुमूल्य वस्तुए कृष्ण की भेंट कर उन्हे कौरव पक्षमे लाने की विफल चेष्टा की। कृष्ण के सन्धी प्रस्ताव पर विचार करने के लिये एक महती सभा का आयोजन किया गया। ससार के लगभग सभी राजा ससार की किस्मत का फैसला सुनने के लिये उस सभामे उपस्थित थे। तत्पश्चात राजकान्ति-

से देदीप्यमान कृष्ण के साथ सारे ससार में महावीर, सिह के समान पराक्रमी शत्रु विजयी युवा यादव वीर रथ घेर कर चल दिये। पाचसौ हाथी, एक हजार रथ उनके पीछे चले। विदुर तथा भीष्मादि कौरव मुखियोसे घिरे भगवान ने सभा भवन मे प्रवेश किया। कृष्ण के स्वागत मे सभी राजा लोगखडे हो गये। विदुर ने ,पुनः सबको बैठने का आदेश किया। तदनन्तर ग्रीष्मकाल के अनन्तर वर्षाकल के आरम्भ मे गरजते हुए, मेघ के तुल्य गर्जते हुए श्री कृष्ण, सारी सभा को सुनाकर एव राजा धृतराष्ट्र की ओर मुख करके कहने लगे।

कौरव और पाण्डवों में सन्धि हो जावे और वीरों का भावी विनाश रुक जावे, मैं इसी अभिलापा की पूर्ति के लिए यहां आया हूँ। हे राजन्! इसके अतिरिक्त आप से कहने योग्य अन्य कोई कल्याणकारी वचन नहीं है। हे अरिमर्दन! इस विपय मे जो कुछ जानना चाहिए वह सब कुछ आप जानते हो। आजकल यह कुरुकुल सब राजकुलों मे श्रेष्ठ माना जाता है। यह कुल वेद शास्त्र के अनुसार चलने वाला सदाचार से सम्पन्न है तथा इसमे अन्य गुण इकट्ठे हो रहे हैं। दया, अनुग्रह, करुणा, उदारता, सरलता, क्षमा, सत्य आदि गुण केवल कौरवों में ही दिखाई देते हैं। हे राजन! इस प्रकार के विशाल गुणों से युक्त यह कुल होने पर आपके निमित्त से इसमे किसी उपर्युक्त गुणो के विपरीत गुण का उदय नहीं होना चाहिए। हे कुरुसत्तम आप कुरुवंश मे श्रेष्ठ और इसके धारक हो। हे तात! जब कुछ कुरुवंशो अपने आन्तरिक और वाह्य राजाओं के साथ मिथ्या आचरण करने लगे हैं। दुर्योधनआदि तेरे पुत्र, धर्म और नीति की उपेक्षा करके नीच मनुष्य की भाति आचरण करते हैं। हे पुरुर्षभ! आपके पुत्र, बड़े असभ्य, मर्यादा हीन, और लोभ के वरवश हो रहे हैं। इनका अपने धर्म पूर्वक आचरण करने वाले भाइयों के साथ तो बड़ा ही अनुचित वर्ताव है। जो सब

कुछ आप जानते हैं। हे कुरुराज यह महाघोर विपत्ति कौरवों से खड़ी हो रही है। यदि आपने इसकी उपेक्षा की तो यह पृथ्वी भर का नाश कर डालेगी। हे भारत! यदि तुम कुल का नाश नहीं करना चाहते हो, तो अब भी सन्धि हो सकती है। मेरी सम्मति में अब भी सन्धि होना कठिन नहीं है। यह शान्ति स्थापित करना आपके और मेरे आधीन है। हे विशामपते! तुम अपने पुत्रों को संभालो, मैं पाण्डवों को रोक दूंगा। तुम्हारे पुत्रों को तुम्हारी आज्ञा का पालन करना चाहिए। यदि ये लोग तुम्हारी आज्ञा के अनुसार चलेंगे, तो इनका बड़ा उपकार होगा। महावली पाण्डवों से सुरक्षित आपको देवों के सहित इन्द्र भी नहीं सह सकता है। फिर अन्य साधारण राजाओं की तो शक्ति ही क्या है। यदि युद्ध ठन गया तो बड़ा भारी विनाश होगा। हे राजन! इस प्रकार के दोनों ओर के विनाश में आप किस धर्म को सिद्ध देख रहे हो। अब तो आप ऐसा करो जिस से आप युद्ध मे सारे कौरव और पाण्डव तथा महारथियों से मारे हुए महारथी और क्षीण हुए दोनों ओर के वीरों को न देख सके। यहां सारी पृथिवी के राजा इकट्ठे हुए हैं। यदि इनको क्रोध आ गया, तो यह सारी पृथिवी का नाश कर सकते हैं। हे राजन! आप इस भूलोक की रक्षा कीजिये। इस सारी प्रजा का नाश न होवे। ये सारे राजा एक दूसरे से मिल भेट कर तथा साथ २ भोजन पान करके सुन्दर वस्त्र, माला, आभूषण आदि सत्कार पाकर और क्रोध तथा वैर को छोड़कर सुख पूर्वक अपने २ स्थानों को जावे।

आपको जो प्रेम पाण्डवों पर पूर्वकाल में था वही प्रेम, इस आयुनाशकारी युद्ध के समय मे होना चाहिए। हे राजन, पाण्डव तो बालक, पिता विहीन, आप द्वारा ही पाले पोषे गये हैं। अब भी आप इन पाण्डवों को पुत्रों के समान पालन करो। हे राजन!

आपको प्रणाम पूर्वक प्रसन्न करके पाण्डवों ने कहा है। कि हम ने आपकी आज्ञा से ही अपने अनुयायियों के साथ यह सब कुछ दुःख भोगा है। हे जनेश्वर ! इस समय पाण्डवों का राज्य उन को प्रदान कर दो। इसके अतिरिक्त और क्या कहना उचित है। अब जो महिपाल इस सभा मे बैठे हैं, वे इसका विवेचन करके कहें कि मैंने यह उचित कहा है या अनुचित कहा है। हे भारत ! मैं तो तुम्हारा और पाण्डव दोनों का कल्याण चाहता हूँ। अब धर्म, धन और सुख से प्रजा को नियुक्त करके नष्ट न कीजिए। अपने स्वार्थ को अर्थ और अनर्थ को स्वार्थ मानने वाले, लालच में फंसे अपने पुत्रों को आप किसी प्रकार रोकें। हे राजन ! पाण्डव आपकी सेवा के लिए भी तैयार हैं और युद्ध के लिए भी सन्नद्ध हैं। अब आपको जिसमें अपना हित दिखाई दे सो करें।

: ५ :

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते॥

सुलह न होनी थी, न होनी चाहिये थी, न हो सकती थी, न कृष्ण सुलह चाहते थे और न ही वे वहा सुलह कराने गये थे। वे तो केवल प्रोपैगंडा की दृष्टि से ही हस्तिनापुर गये थे। उन्हे अपने मिशन में पूरी सफलता प्राप्त हुई। उनके इस प्रयत्न का इतना फल जरूर निकला कि संसार की दृष्टि मे पांडवो का नैतिक पक्ष बहुत प्रबल हो गया, भीष्म के जीवित रहते कर्ण ने युद्ध से तटस्थ रहना स्वीकार किया, संसार पर कृष्ण ने अच्छी प्रकार प्रकट कर दिया कि दुर्योधन के पक्ष का समर्थन अन्याय, अत्याचार के पक्ष का समर्थन है।

युद्ध का बिगुल बजा, दोनो सेनायें आमने-सामने आई। एक ओर

के महारथी थे भीष्म, द्रोण, शल्य, विकर्ण, सोमदत्त, भूरिश्रवा दूसरी ओर थे धृष्टद्युम्न, विराट, काशीराज, कुन्ती भोज, युधामन्यु, सात्यकी, धृष्टकेतु, चेकितान। कौरव सेना के सेनापति थे भीष्म, कृष्ण ने अपनी सेना का सेनापति बनाया धृष्टद्युम्न को। कृष्ण अच्छी प्रकार जानते थे कि पाण्डवो मे से यदि किसी को सेनापति बना दिया, वह हथियार तो अवश्य ही डालेगा तथापि कृष्ण यह न चाहते थे कि अर्जुन प्रधान सेनापति की हैसियत मे हथियार डाले। इससे पाडव सेना की स्थिति ऐसी विषम हो जाती जिसे सम्भालना असम्भव ही था।

दोनो सेनाए ज्योही युद्ध के लिये आमने-सामने आई त्योही अर्जुन ने हथियार रख दिये। वह बोला—कृष्ण! युद्ध करने की इच्छा से इकट्ठे हुए इन स्वजन स्नेहियो को देखकर मेरे गात्र शिथिल हो रहे है मुह सूख रहा है, शरीर काप रहा है और रोये खडे हो रहे है, हाथ से गाडीव छूट रहा है, त्वचा जलती है। मुझसे खडा नही रहा जाता, क्योकि मेरा दिमाग चक्कर-सा खा रहा है। उन्हे मारकर मै जीना नही चाहता, न मुझे राज्य चाहिये, न सुख, जिनके लिए यह ऐश्वर्य चाहिये वे तो जीवन और धन की आशा छोडकर युद्ध के लिए खडे है।

उसे ऐसी अवस्था में देख कृष्ण बोले—अर्जुन! श्रेष्ठ पुरुषों के अयोग्य, स्वर्ग से विमुख करनेवाला और अपयश देनेवाला यह मोह तुझे इस समय कहां से आ गया? तू शोक न करने योग्य का शोक करता है, और पण्डिताई के बोल बोलता है। परन्तु पण्डित मृत और जीवितों का शोक नहीं करते। असत् का अस्तित्व नहीं है और सत् का नाश नहीं है। इन दोनों का निर्णय ज्ञानियों ने जाना है। जिससे यह अखिल व्याप्त है, उसे तू अविनाशी जान। इस अव्यय का नाश करने मे कोई समर्थ नहीं है अथवा जो तू इसे नित्य जन्मने और मरनेवाला माने तो भी, तुझे शोक करना उचित नहीं क्योंकि जन्मे हुये के लिये मृत्यु और मरे हुये के लिये जन्म अनिवार्य है। इसलिये जो

अनिवार्य है उसका शोक करना उचित नहीं। स्वधर्म को समझ कर भी तुझे हिचकिचाना उचित नहीं, क्योंकि धर्मयुद्ध की अपेक्षा क्षत्रियों के लिये और कुछ अधिक श्रेयस्कर नहीं हो सकता। हे पार्थ! यों अपने आप प्राप्त हुआ और मानो स्वर्ग द्वार खुल गया हो, ऐसा युद्ध तो भाग्यशाली क्षत्रियों को ही मिलता है। यदि तू यह धर्म-प्राप्त युद्ध न करेगा तो स्वधर्म और कीर्ति को खोकर पाप बटोरेगा। सब लोग तेरी निन्दा किया करेंगे और सम्मानित आदमियों के लिये अपकीर्ति मरण से भी बुरी है। जिन महारथियों से तूने मान पाया है, वे ही तुझे भय के कारण रण से भागा मानेंगे और तुझे तुच्छ समझेंगे। जो तू मारा जायगा तो तुझे स्वर्ग मिलेगा। जो तू जीतेगा तो पृथ्वी भोगेगा। इसलिये हे कौन्तेय! लड़ने का निश्चय करके तू खड़ा हो। सुख और दुःख, लाभ और हानि, जय और पराजय समान समझ-कर युद्ध के लिए तैयार हो। ऐसा करने से तुझे पाप नहीं लगेगा।

कर्म मे ही तुझे अधिकार है, उससे उत्पन्न होनेवाले अनेक फलों में कदापि नहीं। आसक्ति त्याग कर, योगस्थ होकर तू कर्म कर। हे पार्थ! जब मनुष्य मन मे उठती हुई सभी कामनाओं का त्याग करता है और आत्मा द्वारा ही आत्मा में सन्तुष्ट रहता है, तब वह स्थितिप्रज्ञ कहलाता है।

वास्तव में कोई एक क्षण भर भी कर्म किये बिना नहीं रह सकता। प्रकृति से उत्पन्न हुये गुण परवश पड़े प्रत्येक मनुष्य से कर्म कराते हैं। जो मनुष्य कर्म करनेवाली इन्द्रियों को रोकता है, परन्तु उन इन्द्रियों के विषयों का चिन्तन मन से करता है, वह मूढात्मा मिथ्याचारी कहलाता है। जो जो आचरण उत्तम पुरुष करते हैं, उसका अनुकरण दूसरे लोग करते हैं। वे जिसे प्रमाण बनाते हैं, उनका लोग अनुसरण करते हैं। सब कर्म प्रकृति के

गुणों द्वारा किये हुये होते है। अहंकार से मूढ़ बना हुआ मनुष्य 'मै कर्ता हूं' ऐसा मानता है।

जिस प्रकार धुये से आग, मैल से दर्पण ढका रहता है, उसी प्रकार कामादि रूप शत्रु से यह ज्ञान ढका रहता है। हे कौन्तेय! तृप्त न किया जा सकने वाला यह काम रूप अग्नि नित्य का शत्रु है। उससे ज्ञानी का ज्ञान ढका रहता है। इन्द्रियां मन और बुद्धि—इस शत्रु के निवास स्थान हैं। इनके द्वारा ज्ञान को ढक कर यह शत्रु देहधारी को बेसुध कर देता है।

जिसने कर्मफल का त्याग किया है, जो सदा सन्तुष्ट रहता है, जिसे किसीका आश्रय नहीं है,वह कर्म मे अच्छी तरह लगा रहने पर भी कुछ नहीं करता, जो आशारहित है, जिस का मन अपने वश में है, जिसने सारा संग्रह छोड़ दिया है और जिसका शरीर मात्र ही कर्म करता है, वह करते हुए भी दोषी नहीं होता। जिस ने योग साधा है, जिसने हृदय को विशुद्ध किया है, जिसने मन और इन्द्रियों को जीता है, और जो भूत मात्र को अपने जैसा ही समझता है, ऐसा मनुष्य कर्म करते हुए भी उससे अलिप्त रहता है, जो मनुष्य कर्मों को ब्रह्मार्पण करके आसक्ति छोड़ कर आचरण करता है वह पाप से उसी प्रकार अलिप्त रहता है जैसे पानी में रहने वाला कमल।

आत्मा से मनुष्य आत्मा का उद्धार करे, उसकी अधोगति न करे। आत्मा ही आत्मा का बन्धु है; और आत्मा ही आत्मा का शत्रु है। उसी का आत्मा बन्धु है जिसने अपने बल से मन को जीता है; जिसने आत्मा को जीता नहीं वह अपने ही साथ शत्रु का सा बर्ताव करता है। काम, क्रोध और लोभ—आत्मा का नाश करने वाले नरक का यह त्रिविध द्वार है। इस लिए मनुष्य को इन तीनों का त्याग करना चाहिये। जिसमें अहंकार की भावना नहीं है, जिसकी बुद्धि मलीन नहीं है वह इस

जगत को मारते हुए भी नहीं मारता, न बन्धन मे पड़ता है। अहंकार के वश होकर "मैं युद्ध नहीं करूंगा।" ऐसा तू मानता हो तो यह तेरा निश्चय मिथ्या है। तेरा स्वभाव ही तुझे उस ओर बलात्कार से घसीट ले जायगा। अत यदि युद्ध न भी करेगा तो भी न ही तू और न ही यह सभी लोग सदैव अमर रहेंगे। पका फल अपने आप गिर जायगा, अत' तू किसी के जीवन की, जय पराजय की चिन्ता न करता हुआ युद्ध कर।

भीषम

कृष्ण के शब्द काम कर गये। अर्जुन के गाण्डीव उठाते ही युद्ध की आग भडक उठी। भीष्म पर कृष्ण ने बहुत दया की जो उन्हे दस दिन लडने दिया। कृष्ण चाहते तो पहले ही दिन भीष्म को समाप्त कर देते, परन्तु उन्हे कर्ण को काफी देर तक मैदान से हटाये रखना था और कर्ण ने कसम खाई थी कि भीष्म के जीते जी वह अस्त्र नही उठाएगा। समस्त कौरव सेना में कृष्ण को एक मात्र कर्ण का ही ध्यान था परन्तु भीष्म को कब तक जिन्दा रहने दिया जाता। जीत उसी की होती है जो लडाई को जल्दी से जल्दी खत्म कर देता है। दसवे दिन भीष्म को इतना जख्मी कर दिया गया आखिर उन्हे युद्ध-स्थल से हट जाना पडा।

द्रोण

द्रोण ने रणक्षेत्र मे उतरते ही अधर्म युद्ध का सूत्रपात किया। कृष्ण तथा अर्जुन की अनुपस्थिति मे उन्होने धोके मे शस्त्र रहित अभिमन्यु का वध कर दिया। पुत्र की मृत्यु का समाचार पाते ही अर्जुन ने चौबीस घटे के अन्दर-अन्दर जयद्रथ को समाप्त कर देने की प्रतिज्ञा की। उस दिन मोर्चा बहुत कडा था। कौरवो ने जयद्रथ को छिपा लिया। कृष्ण ने उस दिन अपने योगबल का चमत्कार दिखाया। सूर्यास्त से पूर्व ही एक प्रकार की गैस द्वारा उन्होने सूर्य को अस्त हुआ सा बना दिया। सूर्य

को अस्त हुआ समझ जयद्रथ बाहिर निकला। जयद्रथ को देखते ही अर्जुन ने उसे वहीं ढेर कर दिया। उसी रात द्रोणाचार्य को भी समाप्त कर दिया गया। द्रोणाचार्य ने पुत्र सन्ताप से पीडित अर्जुन को मारने का षडयन्त्र रचाया था, उसी उपाय का प्रयोग उसपर किया गया। अश्वत्थामा की मृत्यु की खबर उडाकर आचार्य के मन को डावाडोल कर दिया गया, उसी क्षण उस पर दशो दिशाओ से आक्रमण हुआ।

कर्ण

कर्ण के लिये कृष्ण के पास विशेष प्रकार की पीत रश्मि Yellow Ray थी। कर्ण का रथ सामने आते ही पीत रश्मि का उसे सामना करना पड़ा। उसका रथ गतिहीन होगया। उसी अवस्था मे कृष्ण द्वारा प्रेरित अर्जुन ने कर्ण पर जोरदार धावा किया और उसे वहीं ढेर कर दिया। लडाई भी कर्ण तक ही थी, कर्ण के मरते ही दुर्योधन की आशा निराशा मे वदल गई। वह युद्ध के मैदान से भाग निकला, परन्तु थोडी ही दूर वह घेर लिया गया और भीम द्वारा समाप्त कर दिया गया।

उपसंहार

युद्ध के अठारहवे दिन कृष्ण को आगे कर पाडवो ने हस्तिनापुर मे विजेता के रूप मे प्रवेश किया। कृष्ण का मनोरथ पूरा हुआ। अपनी ही जिन्दगी मे उन्होने पाडवो को विश्व-सम्राट के रूप मे देख लिया। खण्ड-खण्ड भारत को एक ओर अखण्ड बनाने के लिये जो उन्होने कुरु-क्षेत्र रूपी भट्टी तैयारी की थी उसमे से एक और अखड भारत निकला जिसके एक मात्र राष्ट्रपति पाण्डव ही थे। कृष्ण के चमत्कार ने भार-तीय स्वाधीनता की रक्षा की, यदि कृष्ण ने महाभारत न रचाया होता तो आज से पाच हजार वर्ष पूर्व ही भारत विदेशियो का गुलाम बन गया होता।

: ५ :

भारत के लाल

भगवान बुद्ध

प्रजा सुखे सुखं राज्य', प्रजानां च हिते हितम् ।
नात्म प्रियं हितं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं हितम् ।।

महाभारत का बडा सग्राम केवल १८ दिन मे समाप्त हो गया । योगेश्वर भगवान ने खण्ड-खण्ड भारत को एक और अखण्ड बनाने के लिये कुरुक्षेत्र में जो भट्टी गर्म की थी उसका बहुत सुन्दर फल निकला । जरासन्ध का बढता हुआ प्रभाव नष्ट हो गया । देश में सर्वत्र सुख शान्ति स्थापित हुई । महाभारत के पश्चात् महात्मा बुद्ध तक का इतिहास मिलना नितान्त असम्भव है । इतिहास सम्बन्धी भारतीय दृष्टिकोण है किसी देश की किसी विशेष समय मे दार्शनिक, सामाजिक आध्यात्मिक स्थिति का अध्ययन परन्तु इतिहास सम्बन्धी पश्चिमी दृष्टिकोण है केवल दो परस्पर विरोधी लुटेरो की आपस मे मार काट । महाभारत युद्ध के पश्चात् शताब्दियो तक ही नही बल्कि सहस्राब्दियो तक बिल्कुल अमन रहा । यह युग हमारे दार्शनिक विकास का युग था । परन्तु जिस प्रकार अग्नि के साथ धुआ भी अवश्य ही होता है दार्शनिकता के साथ ही साथ धर्म और ईश्वर के नाम पर अत्याचार होने लगे, वर्ण व्यवस्था की आड में एक पुरुष दूसरे को अपने से नीच समझने लगा, यज्ञ के पवित्र नाम पर पशुओ की बलि

दी जाने लगी उस समय मानवता का त्राण करने के लिये आज से लगभग २५०० वर्ष पहिले इस पवित्र भूमि पर उस महापुरुष का जन्म हुआ, जिसे आज तक एक तिहाई मनुष्य जाति ईश्वर मान कर पूजती है। दुखी और सतप्त ससार को दु,खसागर से पार कर देने के लिये इस महान् पुरुष ने अपने वैभवशाली राज्य को छोडा। सत्य ज्ञान की खोज मे अपना सर्वस्व त्याग वोधि वृक्ष के नीचे घोर तपस्या की। अन्त में बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ और उस ज्ञान के प्रकाश से बुद्ध ने ससार के अन्धविश्वास की कालिमा को छिन्न भिन्न कर दिया—
"हे भिक्षुओ! अब तुम लोग जाओ और वहुतो के कुशल के लिए, ससार की दया के निमित्त, देवताओ और मनुष्यो की भलाई कल्याण और कुशल के लिए भ्रमण करो। तुम मे से कोई भी एक मार्ग से न जाओ। हे भिक्षुओ! तुम लोग उस सिद्धान्त का प्रचार करो जो कि आदि मे उत्तम है। मध्य मे उत्तम है और अन्त मे उत्तम है सम्पन्न, पूर्ण और पवित्र जीवन का प्रचार करो।" बुद्ध भगवान के इस दिव्य सन्देश को प्राप्त कर बुद्ध भिक्षु ससार के कोने२ मे फैल गये।

जिस समय भगवान् देवनाथ पण्डित के बाग मे विश्राम कर रहे थे, उस समय एक ब्राह्मण उनके समीप कुछ प्रश्न करने के लिये उपस्थित हुआ। ब्राह्मण ने पहिला प्रश्न किया, 'भगवन्! ससार में सबसे अधिक तीव्र खड्ग कौनसी है, सबसे अधिक घातक विष कौनसा है, सबसे अधिक दाहक अग्नि कौन है और सबसे अधिक अन्धियारी रात कौन है? भगवान् ने उत्तर दिया, 'क्रोध पूर्वक कहा हुआ एक शब्द सबसे अधिक तीव्र कृपाण है, लोभ सबसे अधिक घातक विष है, तृष्णा सबसे प्रबल अग्नि है और अज्ञान से बढकर अन्धकार कहीं नहीं।'

ब्रा०—'सबसे अधिक लाभ का भागी कौन व्यक्ति है; सबसे अधिक हानि किसे होती है, सबसे उत्तम अक्षय कवच कौनसा है और सबसे अधिक बलवान् शस्त्र कौनसा है?'

बुद्ध—'सबसे अधिक लाभ का भागी वह व्यक्ति है जो दूसरों की सहायता करता है, सबसे अधिक हानि वह उठाता है जो बिना कुछ दिये लेता है, सबसे उत्तम कवच—जिस पर किसी शस्त्र का प्रभाव नहीं पड सकता-सतोष है और सबसे अधिक बलवान् शस्त्र आत्मिक ज्ञान है।'

ब्रा०—'सबसे भयङ्कर चोर कौन है, सबसे अमूल्य धन क्या है और सबसे अधिक सुरक्षित कोष कौनसा है?'

बुद्ध—'कुविचार सबसे भयङ्कर चोर है, परोपकार सबसे अमूल्य धन है और आत्मिक शान्ति से अधिक सुरक्षित दूसरी निधि नही।'

ब्रा०—'ससार मे अनन्त सुख का कारण क्या है, दुःख किस वस्तु से होता है, सबसे भयङ्कर यात्रा क्या है और सबसे बडा आनन्द क्या है?'

बुद्ध०—'भलाई सुख का मूल है, बुराई से दुःख होता है, अपवित्र आत्मा सबसे भयङ्कर यात्रा है और मुक्ति सबसे बडा सुख है।'

ब्रा०—'ससार मे भयङ्कर नाश का कारण क्या है, मित्रता का नाश कैसे होता है, सबसे दारुण व्याधि कौनसी है और सबसे अच्छा वैद्य कौन है?'

बुद्ध—अज्ञान नाश का कारण है स्वार्थ से मित्रता का नाश होता है, घृणा सबसे दारुण रोग है और सबसे उत्तम वैद्य बुद्ध है।'

ब्राह्मण ने कहा—'भगवान्! अब केवल एक प्रश्न शेष है, वह कौनसी वस्तु है जिसे अग्नि नही जला सकती, वायु नही सुखा सकता, जल नही गला सकता और कोई शस्त्र काट नही सकता?'

भगवान ने उत्तर दिया—'धर्म और सत्कर्मो के फल को कोई वस्तु ससार मे नाश नही कर सकती।'

ब्राह्मण भगवान् के उत्तरो से आत्मिकशाति का लाभ कर कृत्यकृत्य हो चला गया।

सम्राट चन्द्रगुप्त

अम्भोधीनां तमालप्रभव किसलयश्यामवेलावनानाम् ॥
आपारेभ्यश्चतुर्णा चटुलतिमिकुलात्तो भितान्तर्जलानाम्
मालेवाज्ञा सपुष्पा नतनृपति शतैरुत्थते या शिरोभिः ।
सा मय्येव सखलन्ती प्रथयति विनायलङ्कृतं ते प्रभुत्वम्

जिन दिनो मगध पर जरासन्ध वशी नन्दो का प्रभाव था, उधर सिकन्दर की सेनाये मार धाड करती हुई भारतीय सीमा की ओर बढती हुई आ रही थी। अखण्ड भारतीय सत्ता भिन्न-भिन्न खण्डो मे वटी थी—अग, मगध, काशी, कौशल, उज्जैन, मल्ल,चेदी वत्स,कुरु, पाचाल शूरसेन, मत्स्य, अस्मक, अवन्ति, गान्धार, काम्बोज जिनमे प्रमुख थे। अत. कोई एक शक्ति न थी जिसके रूप मे निखिल भारतीय सत्ता एक होकर शत्रु का सामना करती है। ऐसे अवसर पर चन्द्रगुप्त का जन्म हुआ, इस वीर ने आकर सारे भारतमे एक साम्राज्य की स्थापना की। सर्व प्रथम तो सिकन्दर द्वारा लिये गये 'प्रदेशो को स्वाधीन किया। फिर मगध के विस्तृत राज्य को अपने अधीन करके सारे भारत को राजनीतिक दृष्टि से भी एक कर दिया। इस वडे भारी काम मे उसका सहायक चाणक्य था। वास्तव मे सब कुछ करने वाला चाणक्य ही था।

३२५ ई० पू० मे सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया। अनेक अजेय दुर्गो को जीतता हुआ वह अटक से १६ मील उत्तर की ओर उद्धारापुर के समीप सिन्धु नदी के इस-पार उतरा। सिन्ध नदीके पूर्व में वसे हुए अनेक नृपतियो ने सिकन्दर की अधीनता स्वीकार कर ली। इन क्षुद्र नरेशो मे तक्षशिला के राजा आम्भी का नाम विशेष ध्यान देने योग्य है। आर्यावर्त के इस कुपुत्र ने अपने पडोसी प्रसिद्ध राजा पोरस के पराजय के निमित्त सिकन्दर को सब प्रकार की सहायता दी। वडी धूमधाम से उसका स्वागत किया। इसी सहायता से उत्तेजित होकर सिकन्दर का यह हौसला हुआ कि वह जेहलम के इस पार महाराजा

पुरु को अपनी अधीनता स्वीकार करने का सन्देश भेजा।

पुरु महाराज मध्य पंजाब के राजा थे। उनकी नस-नाड़ियों में लव और कुश का खून बहता था। वह उस अपमान को सह न सके, उन्होंने सिकन्दर को कहला भेजा—"मैं जेहलम के किनारे उपहार से नहीं, प्रत्युत अपनी तलवार से तुम्हारा स्वागत करूंगा। १२०००० पैदल और १५००० घुडसवारों सहित सिकन्दर आगे बढा इसके अतिरिक्त तक्ष-शिला के सहायक राजा की सेना भी इसके साथ थी। पुरु महाराज के पास केवल २०००० पैदल और २००० घुडसवार थे। युद्ध आरम्भ हुआ। भारतीय योद्धाओ ने वह वीरता दिखाई कि विश्वविजेता सिकन्दर के एक दम होश उड गये। भारतीय सेनाओ ने यवनो मे उनके अधिपति को अपने व्यक्तिगत शत्रु के रूपमे मागा, उत्तेजित हो सिकन्दर आगे बढा परन्तु प्रथम युद्ध मे ही उसका घोडा मारा गया। सिकन्दर सिर के बल पृथ्वी पर आ गिरा। आर्य वीर भागते हुए, प्रार्थना करते हुए, घायल अथवा शस्त्रहीन शत्रु पर प्रहार नही करते, इसलियें उस दिन सिकन्दर को प्राण दान मिला। पुरु महा-राज के विरुद्ध युद्ध मे सिकन्दर के अधिकाश घुड सवार मारे गये। इस कारण उसकी सेना शोक से व्यथित हो कुत्तो के समान दैन्य स्वर मे रोने लगी। सैनिको ने अपने हाथो से हथियारो को फेंक और सिकन्दर का त्याग कर शत्रु की ओर जाना चाहा। जब सिकन्दर को, जो स्वय ही बडी विपत्ति मे था, यह विदित हुआ तो वह युद्ध को रोकने का आज्ञा देकर इस प्रकार प्रलाप करने लगा,—ओ भारतीय राजा पोरस मुझे क्षमा कर, मै तेरे शौर्य और बल को पहिचान गया हू। अब विपत्ति नही सही जाती, मेरा हृदय पूर्ण व्यथित है। इस समय मै अपने जीवन को अन्त करने की इच्छा करता हू, परन्तु मै यह नही चाहता कि समस्त लोग जो मेरे साथ है बरबाद हो, क्योकि मै ही वह व्यक्ति हू जो उन्हे यहा मौत के मुख मे लाया हू, एक राजा के लिये किसी प्रकार भी उपयुक्त नही है कि वह अपने सैनिको को मृत्यु के मुख में ढकेल दे।

भारतीय राजा सदैव ही शत्रुओ पर विश्वास करते रहे है। तक्ष-शिला के राजा के भाई के हाथ सिकन्दर ने सुलह का सन्देश भेजा। सिकन्दर का भाग्य प्रबल था। इधर सुलह की बाते चल रही थी तो उधर सिकन्दर हमला करने की घात मे था। रात्री की घनघोर वर्षा मे उसने कैम्प से १६मील उत्तर की ओर एक अच्छे स्थान मे नदी को पार कर लिया। यद्यपि पुरुराज की सेना अचेत पडी सोरही थी,उस अवस्था मे भी भारतीय सेना ने शत्रु सेना का खूब मुकाविला किया।

यद्यपि सिकन्दर राजनीतिज्ञ था, परन्तु उस समय के भारतीय भी भीरू न थे। केवल फूट से इस देश की अधोगति हुई है। सिकन्दर के आक्रमण मे भी जो थोडा बहुत भारत को पराभव का मुह देखना पडा, केवल फूट ही के कारण, फिर भी जिस वीरता और पराक्रम के साथ स्थान-स्थान पर भारतीयो ने सिकन्दर का मुकाबला किया, वह सचमुच आश्चर्य जनक है बाज के समान तेज चलने वाले सिकन्दर को हिन्दुकुश से सन्धि तक केवल दस मास लगे, पर सिन्ध से व्यास तक १९ मास लग गये।

इस स्थान पर हमे सर्वप्रथम नवयुवक चन्द्रगुप्त के दर्शन होते हैं। चन्द्रगुप्त भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश का निवासी था। कोई समय था कि चन्द्रगुप्त सिकन्दर का परममित्र था। चन्द्रगुप्त बहुत वीर साहसी था। यवनो के बीच मे रहते हुए उसने अपने ही ढग से वह काम किया जो यवन सेना के अन्दर भारतीय शक्ति का एक भय पैदा कर दिया। सिकन्दर को इस बात का पता लगा, उसने चन्द्रगुप्त की गिरफ्तारी का हुक्म दे दिया परन्तु नवयुवक चन्द्रगुप्त बचकर भाग निकला। यात्रा मे थककर वह लेट गया। इस समय एक भयानक सिह आया, और चन्द्रगुप्त के पसीने को चाटने लगा। वह चन्द्रगुप्त को विना किसी प्रकार की हानि पहुचाये लौट गया। इस अपूर्व घटना से चन्द्रगुप्त को बड़ी आशा हुई। वह महत्वाकाक्षी हो गया। उसने देश-भक्तो का एक दल तैयार किया और जब सिकन्दर व्यास से वापिस लौट रहा था

उसकी सेना को इस प्रकार परेशान किया कि यवन दल में त्राहि-त्राहि मच गया। सिकन्दर के भारत से लौटने के एक वर्ष बाद विजित प्रदेशों में विद्रोह आरम्भ हुआ। प्रसिद्ध तक्षशिला विश्वविद्यालय इस विद्रोह का केन्द्र था। यहा चाणक्य नाम का एक ब्राह्मण रहता था, जो दण्ड-नीति, कूट विद्या और सैन्यशास्त्र में पारगत था। चाणक्य की सहायता से चन्द्रगुप्त ने इन घृणित यूनानी लोगो को निकालकर बाहर करने का सौभाग्य प्राप्त किया।

सम्राट अशोक

यदा मया शत्रुगणान्निहत्य प्राप्ता समुद्रा भरणा सशैला।
एकतपत्रा पृथिवी तदा मे प्रीतिर्न सा या स्थविरं निरीक्ष्य॥
त्वद्दर्शनान्मे द्विगुण. प्रसारः सञ्जायतेऽस्मिन् वरशासना प्रं।
त्वद्दर्शनाच्चैव परेऽपि शुद्धया दृष्टो मयाद्य प्रतिम. स्वयम्भूः॥

जब राजा अशोक ने राजगद्दी प्रप्त की, तब वह बहुतक्रूर और अत्याचारी था। एक बार उसके अमात्यो ने उसका आज्ञा का पालन न किया, अशोक को बहुत क्रोध आया। क्रोध में उसने अपनी तलवार को म्यान से खीचकर पाच सौ आदमियो का सिर धड से अलग कर दिया। एक और दिन की बात है, उसके अन्त पुर की स्त्रियो ने, जोकि कुरूप होने के कारण उस पर हसा करती थी, एक अशोक वृक्ष के पत्तो को तोड लिया। नाम साम्य के कारण अशोक इस वृक्ष से बहुत प्रेम करता था। अशोक को बहुत क्रोध आया, उसने उन पाच सौ स्त्रियो को जाते जी आग मे जला दिया। जब अमात्यो ने देखा कि राजा इस प्रकार अत्याचार कर रहा है। तो उन्होने उससे प्रार्थना की कि आप अपने हाथो को इस प्रकार अपवित्र न कीजिये। क्यो नही आप अप-राधियों को दण्ड देने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त कर लेते? राजा ने ऐसा ही किया। चण्डीगिरीक नाम का एक व्यक्ति इस काम के लिए नियुक्त किया गया। वह बहुत ही क्रूर था। इसी कार्य के

लिये एक जेलखाना बनाया गया। इसका बाह्य रूप बहुत ही उत्तम और दर्शनीय था। लोग देखते हा मोहित हो जाते थे और सोचते थे कि अन्दर चल कर भी देखे, परन्तु राजा की आज्ञा थी कि जो भी व्यक्ति इस जेल मे पहुच जाये उसको जीता न छोडा जाय।

जो कोई जेलखाने मे जाता बचकर न लौटता। एक बार बाल पण्डित नाम का एक भिक्षु इस जेलखाने मे चला गया। जेल मे आते ही वधघातक ने उसे पकड लिया। भिक्षु को मोहलत दी गई। परन्तु सातवे दिन के समाप्त होते ही भिक्षु को एक जलती भट्टी मे डाल दिया गया। परन्तु वह घातक उसको भट्टी मे डालकर जब नीचे देखने लगा, तो उसने एक बहुत ही विचित्र दृश्य देखा। बाल पण्डित एक कमल पर बैठा हुआ है, चारो ओर ज्वालाये उठ रही है, परन्तु उसका कुछ नही बिगाड सकती। इस चमत्कार की सूचना राजा को दी गई, वह देखने के लिए आया और अपनी आखो से बाल पण्डित के प्रताप को देखकर आश्चर्यित रह गया। भिक्षु ने उसे उपदेश दिया इस चमत्कार और भिक्षु के उपदेश को सुन कर वह बहुत प्रभावित हुआ और क्रूरता छोडकर बौद्ध धर्म का अनुयाया बन गया। जेलखाना तोड दिया गया और वध्य घातक को जीते जी आग मे जला दिया गया।

जब राजा अशोक नरक-गृह को नष्ट कर चुका तो उसे उपगुप्त नाम का एक प्रसिद्ध अर्हत मिला। इस अर्हत ने धीरे-धीरे अशोक पर अपना प्रभाव जमाना शुरू किया और उसे बौद्ध धर्म का अनुयायी बना लिया। राजा ने अर्हत को सम्बोधन करके कहा—'पूर्व जन्म मे मैने जो पुण्य संचित किया है, उसके लिए धन्यवाद! मैने राज्याधिकार को तो प्राप्त किया है, पर अपने दोषो के कारण बुद्ध भगवान का मिलकर उनका अनुयायी बनने का सौभाग्य मुझे प्राप्त नही हुआ। इसलिए अब मेरी इच्छा है कि मै स्तूपो का निर्माण कर भगवान बुद्ध के अवशेषो का सम्मान करू।

अशोक ने अपनी समस्त शक्ति को इसी महान ध्येय पर केन्द्रित

किया। प्रत्येक समय दिन हो या रात्रि प्रजा अपनी शिकायतें सुनाने के लिये उसके निकट पहुच सकती थी। वह ब्राह्मणो और श्रमणो से भेंट करता था। अपनी प्रजा से मिलकर उनसे उनकी भलाई के बारे में प्रश्न करता था। अनेक धर्म महामात्यो की नियुक्ति की,जो उसके नैतिक धर्म का समस्त सम्प्रदायो मे प्रचार करते थे। अशोक की धर्म शिक्षा मे शिष्टता, सौजन्य और सेवा भाव कूट-कूट कर भरे थे। उसने सर्वोत्कृष्ट नैतिक सत्य को ससार के सामने रखा, जैसाकि उसने लोगो को बताया कि भीषणता, क्रोध, निर्दयता, अभिमान और द्वप पापो का मूल है। उसका कहना था कि कोई मनुष्य वह कितना ही बडा क्यो न हो, परन्तु जब तक उसमे सयम, विचार सम्बन्धी पवित्रता, कृतज्ञता दृढ़ता आदि गुण नही तबतक वह नीच है। वह निरन्तर लोगो को इस बात का ध्यान दिलाता था कि अच्छे काम करने की प्रवृत्ति सदा ही उनके हृदय मे बलवती रहनी चाहिए। वह दया भाव पर सबसे अधिक जोर देता था उसका यह दयाभाव केवल मनष्यो पर ही नहीं पशु-पक्षियो पर भी था।

अशोक के धर्म-लेख:—

"माता और पिता की सेवा करनी चाहिये। प्राणो का आदर दृढता के साथ करना चाहिये। धर्म के इन गुणो का प्रचार करना चाहिये, इसी प्रकार विद्यार्थी को आचार्य की सेवा करनी चाहिए और अपने जाति भाइयो के प्रति उचित बर्ताव करना चाहिए। यही प्राचीन धर्म की रीति है। इससे आयु बढती है और इसी के अनुसार मनुष्यो को चलना चाहिए।"

"माता पिता की सेवा करना तथा मित्र, परिचित स्वजातीय, ब्राह्मण और श्रमण को दान करना अच्छा है। थोडा व्यय करना और थोडा सञ्चय करना अच्छा है। धर्म करना अच्छा है पर धर्म क्या है? धर्म यही है कि पाप से दूर रहे, बहुत से अच्छे काम करे। दया, दान, सत्य और शौच का पालन करे।"

"मनुष्य को यह देखना चाहिए कि चडना, निष्ठुरता, क्रोध, अभिमान और ईर्ष्या—ये सब पाप के कारण हैं। और उसे अपने मन में सोचना चाहिये कि 'इन सब बातो के कारण से मेरी निन्दा न हो।' इस बात की ओर विशेष करके ध्यान देना चाहिये कि इस मार्ग से मुझे इस लोक मे सुख मिलेगा और इस दूसरे मार्ग मे मेरा परलोक बनेगा।"

"लाग विपत्ति काल मे, पुत्र के विवाह मे, कन्या के विवाह मे, सन्तान की उत्पत्ति मे, परदेश जाने के समय और इसी तरह के दूसरे अवसरो पर अनेक प्रकार के दूसरे मगलाचार करते है। ऐसे अवसरो पर स्त्रिया अनेक प्रकार के क्षुद्र और निरर्थक मगलाचार करती है। मगलाचार अवश्य करना चाहिये, किन्तु इस प्रकार के मगलाचार प्राय: अल्प फल देने वाले होते है। धर्म का जो मगलाचार है वह महा फल देने वाला है। इस ससार के जो मगलाचार है वे सदिग्घ है, अर्थात् उनसे अभीष्ट कार्य सिद्ध भी हो सकता है और नही भी हो सकता। सम्भव है कि उनसे केवल ऐहिक फल मिले। किन्तु धर्म के मगलाचार काल से परिच्छिन्न नही है। यदि इस लोक में उनसे अभीष्ट कार्य की सिद्धि न हो, तो परलोक में अनन्त पुण्य होता है। यदि इस लोक में अभीष्ट कार्य सिद्ध हो गया, तो दोनो लाभ हुए अर्थात् यहा भी कार्य-सिद्ध हुआ और परलोक मे भी अनन्त पुण्य प्राप्त हुआ।"

"इस प्रकार सर्वत्र जो विजय हुई है, वह विजय वास्तव मे सर्वत्र आनन्द देनेवाली है। धर्म विजय मे जो आनन्द मिलता है, वह बहुत प्रगाढ आनन्द है······यह लेख इसलिये लिखा गया कि मेरे पुत्र और पौत्र जो हो, वे नया देश विजय करना अपना कर्तव्य न समझे। यदि कभी वे नया देश विजय करने मे प्रवृत्त हो, तो उन्हे शान्ति और नम्रता से काम लेना चाहिये और धर्म-विजय को ही यथार्थ विजय समझना चाहिये। उससे लोक और परलोक दोनो जगह सुख लाभ होता है।

"प्रत्येक पक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या व पूर्णिमा तथा पुष्य और पुनर्वसु नक्षत्र के दिन, और प्रत्येक चार-चार महीने के त्यौहारो के

दिन बैल को न दागना चाहिये । तथा बकरा, भेडा, सुअर और इसी तरह के दूसरे प्राणियो को, जो दागे जाते है न दागना चाहिये ।"

"गाभिन या दूध पिलाती हुई बकरी, भेडो, सुअरी, तथा इनके बच्चो को, जो छ महीने तक के हो, न मारना चाहिये, जीवित प्राणियो के साथ भूसी को न जलाना चाहिये । अनर्थ करने के लिये या प्राणियों की हिसा के लिये वन मे आग न लगाना चाहिये । प्रति चार चार महीनो की तीन ऋतुओ की तीन पूर्णमासियो के दिन, पौष मास की पूर्णमासी के दिन, चतुर्दशी, अमावस्या और प्रतिपदा के दिन तथा प्रत्येक उपवास के दिन मछली न मारनी चाहिये और न बेचनी चाहिये । इन सब दिनो मे हाथियो के वन मे तथा तालावो मे कोई भी दूसरे प्रकार के प्राणी न मारे जाने चाहिये ।"

सम्राट विक्रमादित्य

विक्रमादित्य का अर्थ है सूर्य समान शक्ति वाला और सचमुच सम्राट विक्रमादित्य सूर्य ही के समान शक्तिशाली थे । इन्ही के नाम से आज विक्रमी सम्वत् प्रचलित है । शाका लोगो ने देश पर जो भीषण प्रहार किया था महाराज ने उसका मुह तोड जवाब दिया, उन्हे ऐसा खदेडा कि आज शाका लोगो का इस धरती पर कही नाम तक न रहा। विक्रमादित्य की राजधानी उज्जैन में थी । सम्राट विक्रम का शासन कितना स्मृद्धशाली था महाकवि कालीदास रचित ग्रन्थोका एक २ अक्षर यह बता रहा है । वास्तव मे वह युग भारत का स्वर्ण युग Golden Age ही नही बल्कि यो कहना चाहिये कि वह रत्न युग Diamond age थी । रघुवश मे कवि कालिदास ने एक प्रकार से इन्ही महाराज विक्रम के पराक्रम का गुण गान किया है ।

सम्राट हर्ष वर्धन

महाकवि वाण ने अपने ग्रन्थ हर्ष-चरित्र में सम्राट हर्ष का वर्णन लिखा है, हर्ष के समय हूणो ने भारत पर बडे जोर का आक्रमण किया।

हूण एक गृह-विहीन लोग थे और मध्य एशिया के निवासी थे, जीविका की खोज मे इन लोगो ने इधर-उधर हाथ-पैर मारने शुरू किये। बड़ी भारी शक्ति के साथ इन लागो ने भारत पर आक्रमण किया, महाराज हर्ष ने उन हूणो को सिन्धु नदी के परे ही पछाड दिया। इन्ही महाराज हर्ष के सम्बन्ध मे वाण लिखता है। हूण हरन केशरी, सिन्धुराज-ज्वरो, गूर्जर प्रजागर: गान्धार राज गन्धद्वीप कूट हस्ति ज्वरो।" अर्थात, वह हर्ष हूण रूपी मृग के लिये सिंह था, सिन्धु देश के राजा के लिए ज्वर था, गूजर की निद्रा को भग करनेवाला था, गान्धार राजा रूपी सुगन्धित गज के लिए कूट हस्ति ज्वर के समान था। चीनी यात्री ह्यूनसाग ने हर्ष के समय भारत की यात्रा की, उसने उस समय को स्वर्ण युग के नाम से लिखा है।

महाराणा प्रताप

अकवर के चरणों पै जब सर धर बैठे थे सभी दलेर।
एक तेरा ही सर ऊंचा था ओ, हल्दीघाटी के शेर॥

सम्राट हर्षवर्द्धन के समय से ही विदेशियो ने हिन्दुस्तान की पवित्र भूमि पर पाव अडाने शुरू कर दिये थे। यद्यपि हर्ष ने उन्हे भगा दिया परन्तु फिर भी समय के प्रभाव से जो हमारे भीतर दुर्बलताये आगई थी उन्होने अपना दुष्परिणाम तो अवश्य ही प्रकाश मे लाना था। परिणाम यह हुआ कि भारत के पश्चिमी तट पर अर्बी सौदागरो ने पाव जमाने शुरू कर दिये। इस्लाम का सैनिक रूप भले ही आठवी शताब्दी के अन्त मे कासिम के रूप मे प्रगट हुआ हो, परन्तु कासिम के पहले ही गुजरात काठियावाड तथा मालाबार के तट पर इस्लाम ने पाव जमाने शुरू कर दिये थे।

इतिहास मे भारत पर सर्वप्रथम गजनवी आक्रमण मुहम्मद बिन-कासिम का है। महाराज दाहर सेना समेत तैयार थे, परन्तु दुर्भाग्य यह कि उस दिन शनिवार था। ज्योतिषियो ने कहा—आज का दिन

विजय-यात्रा के लिए शुभ नही। उधर शत्रु बढा चला आ रहा था। आखिर शनि की स्वर्ण प्रतिमा को घोडे के पीछे बाध कर अपशकुन को इष्ट में बदलने का यत्न किया गया, परन्तु ज्योतिषियों ने सेना के दिल तो पहले ही तोड दिये थे। उधर पुजारियो ने राजधानी के मंदिर की पताका अपने हाथो गिरा दी, दाहर के भाई ने साधुवेला पर किश्ती का पुल बाध कासिम की सेना को पार कर दिया।

सुबुक्तगीन के समय तक यह गजनवी सत्ता मुलतान तथा लाहौर तक फैल चुकी थी। महमूद तो सोमनाथ तक बढ गया। पृथ्वीराज ने गजनवी सत्ता को नष्ट-भ्रष्ट कर देने के लिए विपुल प्रयास किया, किन्तु अपने ही बन्धुओ के द्रोह के परिणाम स्वरूप सम्राट पृथ्वीराज भी रावण के हाथो भगाई जा रही सीता की रक्षा न कर सका। गजनवी लोग अब यही जमकर रहने लगे। इन्द्रप्रस्थ को उन्होने अपना राजधानी बनाया, यमुना स्तम्भ का नाम उन्होने कुतबमीनार में बदल दिया। यद्यपि कुछ एक राजपूत राजा म्लेच्छो की सत्ता को छिन्न-भिन्न करने के लिए समय समय पर शक्ति भर प्रयास करते रहे, परन्तु किसी सगठन के अभाव में उन्हे सफलता प्राप्त न हो सकी। राणा सग्राम ने भी बाबर के साथ टक्कर लेकर भारतीय स्वाधीनता की पुन: प्राप्ति का एक अन्तिम प्रयत्न कर देखा, परन्तु अपने ही सेनापति शिलादित्य के विश्वास घात के कारण सग्रामसिह को सफलता प्राप्त न हो सकी।

भारत में चारो ओर जिधर भी देखो अकबर की ही दुन्दुभी गूज रही थी, राजपूतो की कमर टूट चुकी थी। निराश होकर कुछ एक राजपूत तो मुगलो से सहयोग तक करने लगे थे, अनेक राजपूतो ने तो अपनी बहन बेटिया तक अकबर के राजमहल में डाल दी थी, इस समय जब कि हिन्दुत्व का गौरव क्षीण हो रहा था, उस परम पिता परमात्मा ने राणा प्रताप की ज्योति का उदय किया। राणा को यद्यपि अन्तिम विजय प्राप्त नही हुई, परन्तु उनके तप, त्याग तथा आत्म-बलिदान का प्रकाश आज भी हम हिन्दुओ के लिए एक आशा-प्रदीप है। प्रताप

की गौरव-गाथा आज धर्म के लिए प्राण तक न्योछावर करने का हमे सन्देश देता है। प्रताप जब तक जिया शान से जिया, राजपूती आन को उसने कदापि झुकने नही दिया, आज भी प्रताप की आत्मा हमे संदेश दे रही है, जब तक जिओ शान के साथ जिओ। आजादी की घास गुलामी की खीर से कही अच्छी है। आजादी का एक दिन गुलामी के सौ वर्ष से कही बहतर है।

छत्रपति शिवाजी महाराज

भूषण भनत दिल्लीपति दिल धक धक।
सुनि सुनि धाक शिवराज मरदाने की॥

मानसिंह, टोडरमल, बीरबल, भगवानदास सरीखे हिन्दू सूरमाओं के भुजवल के पुण्यप्रताप से मुगल-राज खूब फूला फला। औरंगजेब मे आठ मे से सात हिस्से हिन्दुओं का रक्त था, इसीलिए वह हिन्दुओ का कट्टर शत्रु था, उस समय जब कि भारत वसुन्धरा औरंगजेब के अत्याचारो से काप उठी थी, जब कि धरती पर फिर से वही कंस वाली लीलाए होने लगी, पुत्रों द्वारा माता पिता का घात होने लगा; भाईओ द्वारा बहनो का अपमान होने लगा, स्वय अपनी सन्तान के हाथो माता पिता की दुर्गति होने लगी, गौ ब्राह्मण का जीवन संकट पूर्ण होने लगा. देवी देवताओ को खण्ड-खण्ड किया जाने लगा उस समय उस परम कृपालु परमात्मा ने अपने भगतो की रक्षा करने के लिए माता जीजाबाई की गोद मे कृष्ण रूपी शिवाजी को भेजा।

जयसिंह तथा यशवन्तसिंह जैसे देशद्रोहियो ने औरंगजेब के सेवक के रूप मे शिवाजी की सत्ता को तोडने का बहुत यत्न किया, परन्तु समर्थ रामदास का आशीर्वाद शिवाजी के साथ था, फिर भला भारत-माता के उस लाल का कौन क्या बिगाड़ सकता था।

औरंगजेब ने जयसिंह को भेजा—"जाओ शिवाजी को जीवित गिरफ्तार करके मेरे सामने लाओ" बूढा मारीच औरंगजेब की इस

मनोकामना को पूरा करने के लिए पूना आया। शिवाजी महाराज स्वयं दूत के रूप में जयसिंह की सेवा मे उपस्थित हुए और बोले--

"वह हिन्दु-राजतिलक जो क्षत्रियकुलावतंस सनातन-धर्म-रक्षक हैं उनको इस समय म्लेच्छो का दास देख कर मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है।" जयसिंह का मुखमडल लाल हो गया। शिवाजी ने उसे देख कर भी अनदेखा कर दिया और गम्भीर स्वर से कहने लगे--

"जिन्होने उदयपुराधीश राणा प्रतापसिंह के वंश मे जन्म लिया हो, जिनकी सुख्याति से राजस्थान परिपूर्ण हो रहा हो, अम्बर राज्य छत्र जिनके सिर पर विराजमान हो रहा हो, राज स्थान की वीर प्रस्विनी भूमि पर जिनका पराक्रम देख औरंगजेब भी भयभीत हुआ हो, ऐसे हिन्दू धर्म के स्तम्भ को, जिसके लिये ग्राम ग्राम मन्दिर मन्दिर मे जय मनाया जाता हो, मुसल्मानो की ओर से हिन्दुओ से लडना क्या अभिप्राय रखता है? क्षत्रिय कुलावतंस! क्या आपका यह उद्योग हिन्दुओ की स्वतन्त्रता के लिए है? यह समस्त विजय पताका क्या हिन्दुओ के स्वराज्य की उडी है। महाराज! आप विवेचना करे' मैं कुछ नही जानता।"

जयसिंह सिर नीचे किये रह गये। 'शिवाजी बोले, आप राजपूत है, महाराष्ट्रगण भी राजपूतपुत्र है। पिता पुत्र का युद्ध सम्भव नही। स्वय भवानी ने इस युद्ध का निषेध किया है। राजपूतो का गौरव एकमात्र आज तक भारतवर्ष का गौरव रहा है। राजपूत-यशोगीत हमारे यहा की स्त्रिया अभी तक गाती है। राजपूतो ही के आदर्श पर हम लोग अपने लडको को शिक्षा देते है। क्षत्रियकुल तिलक! राजपूतो के शोणित से हमारे खडग रंजित होने के प्रथम ही महाराष्ट्रो का नाम लुप्त हो जायगा। राज्य को छोड छाड कर हम लोग फिर वही हल चलाना सीखेगे, महाराज! परन्तु हमसे आपसे युद्ध न होगा।

जयसिंह ने आख उठा कर धीरे धीरे कहा 'छत्रपति! तुम्हारी कथन प्रणाली बडी रोचक है। किन्तु मै दिल्लीश्वर के आधीन हू।

महाराष्ट्रों मे युद्ध जरूर करूगा। ऐसा प्रण करके ही मैं चला हू।

"मैं महाराष्ट्रो से युद्ध अवश्य करूगा" अम्बराधीश के ऐसे वचन सुनकर शिवाजी बोले—"फिर इस प्रकार तो शत शत स्वधर्मियो का नाश होगा। हिन्दू हिन्दुओ के सर काटेंगे, ब्राह्मण ब्राह्मणो के हृदय मे तलवार भोकेंगे और क्षत्रिय क्षत्रियो के शरीर से रक्तपात करके म्लेच्छो की विजय कीर्ति विस्तारित करने का पुण्य कर्म करेंग"

"आप हिन्दुओ मे श्रेष्ठ है। क्या हिन्दु गौरव साधन मे आपको सन्देह होना चाहिये। हिन्दु धर्म की जय प्राप्ति के लिये आपके हृदय में भले ही इच्छा होगी—शिवाजी की आकाक्षा भी कोई दूसरी नही। मुसलमानो के शासन का ध्वस, स्थान स्थान पर देवालय स्थापन, हिन्दु शास्त्रो की आलोचना, ब्राह्मणो को आश्रय दान, और गौवत्सादि की रक्षा करना ही हिन्दु जाति का गौरव साधन है और यही भारत-वर्ष की स्वाधीनता का मूल मत्र है। यदि इन विषयो मे आप शिवाजी को सहायता देने से विमुख है, तो अपने ही हाथो से इन कार्यो का सम्पादन कीजिये। आप इस देश का राजत्व स्वीकार कीजिये, यवनों को परास्त कर डालिये और हिन्दु-स्वाधीनता पुन स्थापित कीजिये आप अगीकार करे तो अभी दुर्गद्वार खोल दिये जावे। प्रजा कर देगी और शिवाजी की अपेक्षा आपको वह सहस्र गुणा बलवान दूरदर्शी और उपयुक्त समझेगी और शिवाजी भी सन्तुष्ट चित्त से आपका एक सैनिक बनकर मुसलमानो के ध्वस साधन मे दत्त चित्त होगा।"

"जिस दिल्लीश्वर ने हिन्दू-गण का नाम काफर रख छोड़ा है और सर्वत्र जजिया जारी किया है क्या उसके यह कार्य भद्रोचित है? देश-देश में जो वह हिन्दू मन्दिरो और देवालयो का अपमान करता है क्या वह भद्रोचित है? काशी जैसी पवित्र नगरी में विश्वनाथ के मन्दिर को भग कर के उसके पलस्तर से मसजिद बनवाना क्या भद्रोचित है?"

"महाराज मैं बाल्यकाल ही से आपके गौरव गीत गाकर बड़ा आनन्द पाता था। आज उसी प्रकार आप को देखता हू कि वह गीत

मिथ्या न था। जगत मे सत्य और धर्म का यदि कोई आश्रय है तो वह राजपूत का शरीर है। परन्तु क्या ऐसा राजपूत कभी यवनो की अाधीनता स्वीकार कर सकता है ?"

क्या महाराज जयसिह वास्तव मे औरगजेव के सेनापति है ?- जयसिह बोले---'शिवाजी जब मैने दिल्लीश्वर का सेनापति होना स्वीकार किया था तभी कार्य साधन के प्रति सत्यदान किया था। इस समय हमारा गौरव स्वाधीनता नही है किन्तु सत्य का पालन ही गौरव है। राजपूतो का वचन ही सन्धि पत्र है। अनेक सन्धि पत्रो का लघन किया जाता है परन्तु राजपूतो का वचन कभी उलघनीय नही होता। कपट नीति से अथवा छल से सत्य को त्याग कर विजय पाना गर्हित कार्य है।

शिवाजी---क्या सबके साथ सभी अवसरो पर सत्य पालन करना चाहिये ? जो हमारे देश का शत्रु है, और जो हमारे धर्म के विरुद्ध आचरण करता है उसके साथ भला सत्य सम्बन्ध कैसा ! क्या हिन्दू धर्म की उन्नति की चेष्टा करता गर्हित कार्य है ? हिन्दुओ को भाई समझ कर उनकी सहायता करना क्या गर्हित कार्य है।

... .

जयसिह की मनोभावना जानते हुए भी शिवाजी ने दिल्ली जाना स्वीकार किया। जिस प्रकार दुर्योधन ने भरी सभा में कृष्ण को बन्दी बना लेने का यत्न किया था, उसी प्रकार औरगजेव ने भी शिवाजी को अपने घर पर बुला कर कैद कर लिया अथवा यो कहना अच्छा होगा कि औरगजेव की नीचता का प्रदर्शन करने के लिए तथा राजपूतो की आखे खोल देने के लिए शिवाजी ने अपने को कुछ दिन औरगजेव के कारागृह मे रखना देश के लिये हितकर समझा। कृष्ण ही के समान शिवाजी अपनी मुक्ति का प्रबन्ध तो पहले ही कर गये थे, कृतवर्मा के समान रघुनाथ हवालदार ने शिवाजी को आगरा के किले से भगाने का प्रबन्ध किया। एक मिठाई के टोकरे में बैठ शिवाजी किले से बाहिर निकले। कुछ मास तक मथुरा, वृन्दावन,

अयोध्या, जगन्नाथ की यात्रा करते हुए वह पूना पहुचे। पूना पहुचते ही शिवाजी ने अपने को एक मात्र भारत सम्राट घोषित किया। द्रुपद राजा की नगरी मे पाडवों को प्रगट हुआ देख स्वय पापी दुर्योधन ने जिस प्रकार अपने हाथो पाण्डवो को उनका अधिकार दिया था उसी प्रकार औरगजेब ने स्वेच्छापूर्वक शिवाजी को अपने ही समान भारत सम्राट की उपाधि से समलकृत किया।

गुरुगोविन्दसिंहजी

यही देई आज्ञा तुरक गहि खाऊं।
गऊ घातक दोख जग में मिटाऊं॥

सोलहवी शताब्दि के महामुनि अगस्त्य ने अपने तपोबल से दक्षिण दिशा को राक्षसों के अत्याचारो से सुरक्षित कर दिया, परन्तु उत्तर-पश्चिम मे तो निशाचरो के उत्पात बेहद बढ गये। जनता मे एक भय पैदा हो रहा था, उस भय को मिटाने के लिये गुरु तेग बहादुर आगे बढे, उन्होने अपने आप को बलिदान के लिए पेश किया। औरगजेब ने गुरुदेव को अनेक प्रलोभनो द्वारा अपने ध्येय से डिगाने का प्रयत्न किया, परन्तु सब बेकार। गुरु तेग का बलिदान हो गया। दिल्ली के चादनी चौक में फव्वारे के पास आज भी उस परम तेजस्वी के बलिदान की ज्योति जगमगा रही है। उनके पुत्र गुरु गोविन्दसिह जी ने अपने पूज्य पिता के मिशन को पूरा करने की शपथ ग्रहण की। गुरुदेव ने पजाब के बच्चे-बच्चे को सिंह बना दिया और ससार ने देखा वही पजाब के सिह न केवल अपने घर मे ही स्वतन्त्र हो गये अपितु वे तो काबुल-गान्धार तक पहुचे। आज भी पठान मातायें हरीसिह नलवा का नाम लेकर अपनी सन्तान को भयभीत कर देती है।

गुरु गोविन्द के पश्चात उनके पवित्र मिशन को वन्दा वैरागी ने पूरा करने के लिए पूरा-पूरा उद्योग किया। वैरागी के व्यक्तित्व मे एक प्रकार का जादू था। उसका नाम सुनते ही म्लेच्छ-सेना में हाहाकार

मच जाता। कुछ समय तक तो ऐसा ही प्रतीत देने लगा था कि भारत पर म्लेच्छो का नही वैरागी का राज्य है। परन्तु भारत माता के भाग्य मे पराधीनता ही लिखी थी। जिस काम को फर्रुख सैर की तलवार न कर सकी वह काम स्वय सिखो ने ही कर दिया। स्वय सिखो में ही एक ऐसा दल पैदा हो गया जो वैरागी को सिखो का दुश्मन तथा उसकी आज्ञाओ को गुरुगोविन्द सिह के सन्देश के विरुद्ध समझने लगा। आखिर इस बात का फैसले करने के लिये अमृतसर में बडा भारी इकट्ठ हुआ, परन्तु इस बात का निर्णय बहुत अजीब ढग से किया गया। कागज के दो टुकडे पानी पर तैराये गये उनमे से एक वैरागी के नाम का था, देश का दुर्भाग्य वैरागी के नाम का कागज डूब गया। वास्तव मे वह समूची जाति का ही भाग्य डूबा था।

राजपूतो के आत्म-त्याग ने, महाराष्ट्र नृसिहो के तप-तेज ने, खालसा तुत्माओ के पवित्र बलिदान ने, शस्यश्यामला भारत वसुन्धरा के वक्ष-स्थल पर जमे हुए मरुस्थल के वृक्ष को उखाडकर फेंक दिया। अपने ही सपूतो के पावन-प्रताप से माता के बन्धन कट गये, गान्धार की पश्चिमी सीमा से लेकर चटगाव की पूर्वी सीमा तक, आसाम से सिन्ध तक, कैलाश से धनुष कोटि तक फिर से रामराज्य की स्थापना हुई। गगा की तरगो मे फिर से अमृत की धारा बहने लगी। हिमालय आकाश तक सर ऊचा किये फिर स्वातन्त्र्य के गीत गाने लगा। काशी, गया, हरिद्वार, पण्ढरपुर के देवस्थानो मे फिर से घटे घडियाल बजने लगे। देवभूमि पर फिर से अनेक प्रकार के यज्ञानुष्ठान होने लगे। शताब्दियो तक अलाह अकबर के नारो से विषैला हुआ भारत का कण-कण हर-हर महादेव के जयकारो से शुद्ध और पवित्र हो गया।

सुभाष-दिग्विजय

शुभ सुख चैन की वर्षा बरसे, भारत भाग है जागा।
पंजाब, सिन्ध, गुजरात, मराठा, द्राविड, उत्कल, बंगा ॥
चंचल सागर, बिन्ध्य हिमालय, नीला, जमना, गंगा।
तेरे नित गुण गायें, तुझ से जीवन पायें ॥
सब तन पावे आशा।
सूरज बनकर जग में चमके, भारत नाम सुभागा।
सब के दिल मे प्रीत बसाये तेरी मीठी बानी ॥
हर सूबे के रहने वाले, हर मज़हब के प्राणी।
सब भेद और फरक मिटाके, सब गोद मे तेरी आके ॥
गूंथे प्रेम की माला।
सूरज बनकर जग में चमके, भारत नाम सुभागा।
सुबह सबेरे पंख पखेरू तेरे ही गुन गाये ॥
बास भरी भरपूर हवाये, जीवन मे ऋतु लाये।
सब मिलकर हिन्द पुकारे, जय आजाद हिन्द के नारे ॥
प्यारा देश हमारा।
सूरज बनकर जग मे चमके, भारत नाम सुभागा।

: १ :

आदि पर्व

मातृभूमि भारत वसुन्धरा के जिन बहादुर सपूतो ने, देवी स्वाधीनता के जिन अनन्य पुजारियो ने, शताब्दियो से ही गुलामी की बेड़ियों

मे जकडी हुई भारत-माता को आजाद करने का व्रत लेकर, अपने अपूर्व तप त्याग, सराहनीय सेवा, साहस और त्याग और बलिदान से नव्य-भव्य स्वतन्त्र भारतीय राष्ट्र की आधार शिला को मजबूत बनाया उनमे नेता जी सुभाषचन्द्र बोस का नाम बहुत ऊचा है। देवी बगाली ने एक से एक बढिया देशभक्तो, विद्वानो, दार्शनिको को उत्पन्न कर भारतमाता के मस्तक को ससार मे उज्वल किया है। नि सन्देह बगाल को वर्तमान राष्ट्रीयता का जन्मदाता कहा जा सकता है। क्रान्तिकारी आन्दोलन के श्री गणेश का श्रेय भी बगाल ही को है। बग-भग से लेकर आज दिन तक जितने देश-भक्त, वैज्ञानिक, साहित्यिक, बगाल ने पैदा किये, उतने भारत के अन्य किसी भी प्रान्त ने पैदा नही किये। इस प्रान्त के जितने नवयुवको ने हसते-हसते मातृवेदी पर प्राण-विसर्जन किये है अन्य किसी प्रान्त के उतने नही। खुदीरामबोस, कन्हैयालाल दत्त, बकमचन्द्र चट्टोपाध्याय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, रमेशचन्द्रदत्त अरविन्द घोष, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, पी सी राय, देशबन्धु दास, देशप्रिय सैनगुप्ता के नाम कौन नही जानता। सुभाषचन्द्र बोस को भारतमाता की भेंट चढाने का गौरव भी इसी बगाल को है।

लक्ष्मण के समान यती-सती रहते हुए पग-पग पर काम रूपी शत्रु को पछाडते हुए ससार के सभी एश्वर्यो के बीच मे भी जो कमल के समान रहे, राम के समान भारत का राष्ट्रपतित्व प्राप्त करके भी स्वय ही जिन्होने इस राज्य को छोड लकेश्वर के नाश करने को सप्तसिन्धु पार की यात्रा की, हनुमान के समान जिन्होने सेवा को ही मेवा का पुरुस्कार समझा, भरत के समान सभी एश्वर्यों का प्राप्त करके भी नन्दी ग्राम मे निरन्तर तपस्या मे ही मग्न रहे। साधारण से बी ए एम ए. तुच्छ से नौकरी के लिए मारे मारे फिरते है। न जाने इस नौकरी के लिए भीतर ही भीतर वे क्या कुछ करने को तैयार हो जाते है इसी कारण तो विदेशी लोग हम से घृणा करते है, इसीलिए तो वे हमें कुली कहकर पुकारते है। राम और कृष्ण का देश, कर्ण और भीष्म का

देश, गौतम और कणाद का देश आज तुच्छ से विदेशियों द्वारा पद दलित हो रहा है। आई सी एस के प्रलोभन को ठुकरा कर जिस शूरवीर ने मातृभूमि की आन वान शान को ऊचा किया, दीन हीन देश को गौरव पथ पर चला कर ससार के उन्नत राष्ट्रो के सामने उन्नत मस्तक हो खडे होने योग्य बनाया वह भारतमाता का लाल सुभाषचन्द्र वोस ही तो था।

यद्यपि यह आवश्यक नही कि महापुरुषो का वालपन भी महान ही हो, परन्तु वालक सुभाष ने अपने वालपन मे ही महानता के उस स्थान को प्राप्त कर लिया था जिसे हम जैसे साधारण लोग शायद दस जन्मो के निरन्तर सघर्ष के पश्चात भी प्राप्त न कर सकते हो। बालक सुभाष का शरीर बालपन से ही आत्मगौरव स्वाभिमान, विनय, साधना, ईश्वर विश्वास, जन-सेवा का मूर्तिमान मन्दिर बन चुका था।

उडीसा प्रान्त की राजधानी कटक मे रायबहादुर जानकी बाबू के यहा २३ जनवरी १८९७ को सुभाष का जन्म हुआ। आप की माता प्रभादेवी एक आदर्श हिन्दू रमणी थी। भगवान राम का चरित्र वर्णन करते समय जिस प्रकार हम रामजन्म के अगले ही पृष्ठ पर ऋषि विश्वामित्र की कथा ले बैठते है सुभाष चरित्र का बखान करते समय भी हम १८९७ से एक दम १९१९ मे पहुच जाते है। केवल २२, २३ वर्ष की ही अवस्था में हम नवयुवक सुभाष को देवर्षि गान्धी के स्वराज्य यज्ञ की रक्षा के लिए वही काम करते देखते है जो काम यती सती लक्ष्मण ने विश्वामित्र के यज्ञ को सम्पूर्ण करने मे किया था।

वैसे तो जन्म से ही सुभाष की प्रकृति साधुआना थी, परन्तु १९१४ मे स्वामी विवेकानन्द के दर्शनो ने उनके जीवन मे उथल पुथल मचा दी। उस वर्ष कलकत्ते मे राम कृष्ण मिशन का उत्सव हो रहा था। नवयुवक सुभाष ने रग मच पर उस तेजस्वी मूर्ति को देखा। उस समय मंच पर से बोलते हुए स्वामी विवेकानन्द ने कहा—कौन है जो

युगो-युगो से उठती हुई भारत की पुकार को सुनेगा ? कौन है जो अपनी माता के आसू पोछेगा ? मेरी आशा युवको पर केन्द्रित है। अय भारत के वीर नौजवान ! हिमालय की चट्टाने तुझे साधना की रीति सिखाने के लिए पुकार रही है।" अगले ही दिन सुभाष हिमालय की श्वेत हिमाच्छादित चट्टानो की ओर साधना के पथ पर चल दिये। निरन्तर कई मास तक तरुण-सुभाष हिमालय की कन्दराओ मे सत्य की खोज मे फिरते रहे। उन्होने कठोर तपस्या की, आखिर एक ओर से आवाज आई, भारत के लाल ! तेरा शरीर, तेरा नही है भारतमाता का है। जिस सत्य की खोज में तू इतनी दूर यहा आया है यह सत्य तेरे ही भीतर है, दिव्य चक्षुओ द्वारा उसे खोज, वह तो तेरे मानस में ही अन्तर्निहित है। नर नारायण मे ही तुम्हे नारायण के दर्शन होगे। सेवा का मार्ग है।"

सुभाष यदि आई सी एस बने तो इस में सुभाष का कुछ भी गौरव नही बढा, अलवत्ता सुभाष को प्राप्त कर आई सी एस की डिग्री महारानी अवश्य भाग्य शालिनी बन गई। सुभाष को आई. सी एस बनने का कोई शौक न था। केवल यह दिखलाने के लिए कि विद्या एव बुद्धि में भारतीय अग्रेजो से किसी भी प्रकार कम नही है सुभाष इग्लैंड जाकर इस परीक्षा में बैठने को तैयार हो गये थे। केवल आठ महीने की तैयारी मे सुभाष I. C S मे सर्वश्रेष्ठ सफल हुए। परन्तु वह तो केवल अग्रेजकी हेकडी तोडने के लिये ही आई सी एस बने थे जिन लोगो की सेवा का उन्होने व्रत लिया था, उन्ही लोगो पर वे हकूमत कैसे करते—हाकिमो का-सा तकव्वर, गरूर, अभिमान, पाषाण का-सा हृदय वह कहा से लाते। आई. सी एस परीक्षा मे सफल हो जाने का समाचार पाते ही आपने भाई को पत्र लिखा—"आपको यह सुनकर दुख होगा कि मैंने आई सी. एस की परीक्षा पास की। अब उपाय ही क्या है ? अगले ही वर्ष

उन्होने आई सी एस से त्याग पत्र दे दिया। आपके त्याग पत्र पर टीका-टिप्पणी करते हुये स्टेटसमैन ने लिखा था—

असहयोग—आन्दोलन के आह्वान से प्रेरित होकर श्री सुभाषचन्द्र बोस ने आई. सी. एस. के पद से स्तीफा दे दिया है। ब्रिटिश मन्त्री मण्डल से एक असाधारण शक्ति सम्पन्न और उज्ज्वल भविष्यत् वाला एक विशिष्ट व्यक्ति खो गया और कांग्रेस के मन्त्रि-मण्डल में शामिल हो गया।

१९२१ मे असहयोग आन्दोलन अपने पूरे जोरो पर था। फिरगियो के होश गुम थे। वे नही जानते थे गान्धी के सत्याग्रही अस्त्र का कैसे सामना करे। हिन्दू और मुसलमान भी उन दिनो एक थे। अली वन्धू गान्धी बाबा के लैफ्ट-राईट बने हुए थे। उसी वर्ष वेजवाडा काग्रेस में एक करोड स्वयसेवक तथा दो करोड रुपया तिलक स्वराज्य फड के नाम से एकत्रित करने का सकल्प किया गया। देश भर मे यह काम जोर शोर से शुरू हुआ। बगाल के बेताज बादशाह देशबन्धु चितरजन-दास के ज्येष्ठ राजकुमार सुभाष ने बगाल का नेतृत्व अपने हाथ में लिया। सुभाष ने स्वयसेवको का सगठन किया। सुभाष इस सगठन के कमाण्डर थे। सरकार को सुभाष का यह साहस असह्य था। सुभाष की सस्था गैर कानूनी घोषित की गई। दिसम्बर १९२१ मे सुभाष छ महीने के लिये जेल भेज दिये गये। लगभग तीन वर्ष बाद फिर उन्हे परीक्षा की अग्नि मे कूदना पडा। अक्टूबर सन २४ मे सुभाष १८१८ के रैगूलेशन नम्बर ३ के अन्तर्गत गिरफ्तार करके माडले भेज दिये गये।

माडले की जेल भारतीय देश भक्तो के लिये मानो साक्षात कृष्ण मन्दिर है। लाला लाजपतराय तथा भगवान तिलक ने इसी माडले जेल मे अपने गीतामृत का ससार को रसास्वादन कराया था। इसी कृष्ण मन्दिर मे सुभाष को पूरे तीन वर्ष तक रहना पडा।

माडले के कारवास ने सुभाष के शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव डाला। वह बहुत कमजोर हो गये, सरकार की ओर से सुभाष के सामने रिहाई

की यह शर्त रखी गई कि वह किसी भी भारत की वन्दरगाह पर ठहर नहीं सकते उन्हे सीधे योरोप जाना होगा। स्वाभिमान के उस देवता ने सरकार के उस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। उन्ही दिनों माडले से सुभाष ने अपने भाई के पास पत्र भेजा जिसमें उन्होने लिखा—

"पुलिस कर्मचारियो की हरकतो का मैं शिकार वन चुका हूं। मै यूरोप में कितना ही स्वाधीन एव शान्तिपूर्वक क्यो न रहू, पर ये पुलिस कर्मचारी गलत रिपोर्ट भारत मरकार के पास भेजे विना नहीं ठहरेंगे। मेरे कुछ नही कहने पर भी यह लोग मुझे भीषण षडयन्त्रकारी समझेंगे। उनकी यह रिपोर्ट की जानकारी मुझे नही हो सकेगी। दूसरे समय मेरे स्पष्टीकरण या वक्तव्य की कोई कीमत नही रहेगी। अस्तु ! यह निश्चित है कि १९२९ के प्रारम्भ होने के पूर्व ही ये मुझे वोलशेविक नेता साबित कर मेरा भारत लौटना चिरकाल के लिए स्थगित कर देंगे।

सरकार का प्रस्ताव है कि ढाई तीन साल तक विदेश मे और रहू। फिर भी वहा जाने के पूर्व परिजनो से मिलने की कोई सुविधा नहीं रहेगी। यह हमारे लिये भी कष्टदायक है, पर जो लोग मुझे प्यार करते है उनके लिए तो अधिकतर कष्ट कष्टदायक है। पूर्व देशीय लोग किस प्रकार अपने आत्मीयजनो से प्रेम पाश में बधे रहते हैं, इसका अनुमान पाश्चात्य देशी लोग नही लगा सकते, पश्चिमीय देशवासियो ने समझा है कि मेरी शादी तो हुई नही है, और मेरा किसी से भी प्रेम या सदिच्छा नही है।

सरकार की शर्तों के विषय में मैने जो कुछ लिखा है, उससे मेरा मत स्पष्ट व्यक्त है। अच्छी शर्तों की प्राप्ति के लिए मै चाल चल रहा हूं, ऐसा कुछ समालोचको ने लिखा है, पर इस विचार से मैं अत्यन्त दुखित हू। एक आदर्श के ऊपर ही तो मेरी नीव है। मेरा जीवन इतना प्रिय नही है, जिसके लिए मैं चालाकी चलू। दैहिक और वैषयिक सुखो की माप से जीवन की सफलता तथा निस्सारता को माप

नहीं की जा सकती। हमारा युद्ध दैहिक और वैषयिक सुख की प्राप्ति के लिए नही है। सेन्टपाल ने सत्य ही कहा है—हमारा रक्तमांस के विरुद्ध युद्ध नहीं हैं। पृथ्वी में फैले हुए अन्धकार के प्रति मेरा संघर्ष है। उच्चपदाधिकारियों के अन्याय युक्त कर्मों के विरुद्ध मेरा संघर्ष है। स्वाधीनता और सत्य ही हमारा आदर्श है और इसकी प्राप्ति में शरीर भले ही विनष्ट हो जाय, पर हम लोगो की विजय सुनिश्चित हैं।

हमें जेल में दैहिक कष्ट की अपेक्षा मानसिक कष्ट ज्यादा है। जिस जेल में अत्याचार या अपमान जितना ही कम है, उस जेल में बन्दी जीवन उतना ही सुखप्रद है। इन सब बातो पर जेल के अधिकारी कुछ भी ख्याल नही करते। इन सब आघातो और यातनाओ के कारण मानव हृदय आघातकारियों के प्रति और भी क्षुब्ध हो जाता है, किन्तु कुछ दिनों के बाद हम लोग अपने पार्थिव अस्तित्व को भूल जाते हैं और समझते हैं कि हमारा जीवन एक आदर्श पर निर्भर है। जेल-अधिकारियों के घात-प्रतिघात हमारे उस आत्मा को जगा देते हैं। उन्हीं सब विचारों के चिन्तन प्रवाह मे हम लोग जेल के अन्दर आनन्दित रहते है।

"मैं अनिश्चित काल के लिये विदेश में रहने की अपेक्षा भारत की जेल में ही तिल तिल करके मर जाना पसन्द करूंगा। सरकार का क्या भरोसा है कि वह कब तक मुझे निर्वासन में रखे।"

"स्वतन्त्रता का अमूल्य कोष प्राप्त करने के लिये तो हमें व्यक्तिगत और सामुदायिक दोनों तरह से कष्ट उठाना होगा ईश्वर को धन्यवाद है कि मेरे हृदय में शान्ति है। मैं ऐसी किसी भी आपत्ति का शांतिपूर्वक सामना करने को समर्थ हूं, जो मेरे भाग्य में लिखी होगी। मैं समझता हूं कि मै अपने राष्ट्र के अतीत काल के पापों का अपने ढंग से प्रायश्चित्त कर रहा हूं और इस

का मुझे सन्तोष है। हमारे विचार अमर हैं, वे राष्ट्र के स्मृति पटल से नहीं उतर सकते। हमारे सुन्दर स्वप्नों की विरासत आने वाली पीढ़ियों को मिल जायगी—यही विश्वास और आशा है, जो मुझे इस दण्ड काल में सदा सहारा देंगे।"

सुभाष माडले की जेल में थे जब कि देशबन्धु दास का देहावसान हो गया, अपने गुरुदेव के देहान्त का सुभाष को बहुत दुख हुआ। उसी जेल से अपने मित्र को पत्र में उन्होने लिखा—

'बहुतो का कहना है कि मै अन्ध भक्त की तरह देशबन्धु का अनुसरण करता हू, किन्तु मै तो उनका प्रधान शिष्य होते हुए भी, सबसे अधिक उनसे झगडता था। सैकडो विषय ऐसे आते थे, जिन पर मैं उनसे झगड जाया करता था, किन्तु मुझे मालूम था कि कितना ही मै क्यो न झगडा करू, उनके प्रति मेरी भक्ति और निष्ठा अटूट रहेगी और उनका आशीर्वाद मुझे प्राप्त रहेगा। लेकिन शोक एवं दुख है कि राग करने का, अभिमान करने की जगह भी आज नष्ट हो गयी।"

"बहुतो का यह अनुमान है कि देशबन्धु की स्वदेश सेवा व्रत का अर्थ केवल मातृ-भूमि के चरणो मे अपना सर्वस्व अर्पण कर देना ही था, किन्तु मै जानता हू उनका उद्देश्य इससे भी अधिक महत्वपूर्ण और ऊचा था। १९२१ की धर पकड से उन्होने यह निश्चय कर लिया था कि वे परिवार के प्रत्येक सदस्य को जेल भेजेगे और उसके बाद वे खुद जायेंगे, अपने लडके को बिना जेल भेजे दूसरे लडको को जेल भेजना अनुचित है। मैने उन्हे कहा, पुरुषो के जीते जी स्त्रियो को जेल जाने की क्या आवश्यकता है। इस पर उन्होने कहा, यह हमारा हुक्म है। इसका पालन करना ही होगा।"

२५ मई १९२७ को सरकार ने सुभाष को जेल से मुक्त कर दिया। अपने हृदय-सम्राट को अपने बीच में प्राप्त कर बगाल का हृदय कमल खिल गया। देश भर में आपकी जेल मुक्ति पर हर्ष प्रकट किया गया

और मन्दिरों एव सभाओ मे आपकी मगल कामना के लिये प्रभु से प्रार्थना की गई। देश की भावनाओं का आभार मग्न हुए सुभाष ने लिखा—२५ अक्टूबर १९२४ को जब मैं माडले जेल में मरणासन्न था, तब देशवासियो ने जो सामूहिक प्रार्थना की थी वह मुझे अभी तक याद है। दो वर्ष की जेल यात्रा के बाद भी देशवासियो ने जिस उत्साह, उल्लास एव आनन्द से मुझे अपनाया, उसे मैं कभी भूल नही सकता। मैं अहर्निश भगवान से यही प्रार्थना करता हू कि भगवन्, देशवासियों की जो श्रद्धा, विश्वास एव प्रेम मेरे प्रति है, उसके एक अंश का भी वास्तविक अधिकारी मुझे बना दो। आजकल चारो ओर नवयुग का निर्माण हो रहा है। पूजनीय देशबन्धु की मृत्यु के बाद हमारे सामने अन्धकार ही अवकार था। अब वह अन्धकार धीरे धीरे नष्ट हो रहा है। भारत माँ की पुकार होते ही हम सभी लोग, एकाग्र चित्त हो, पुन कार्यक्षेत्र मे अवतीर्ण हो जाँय, यही भगवान से हमारी एकमात्र प्रार्थना है।

: २ :

सभा पर्व

अग्रेज हिन्दुस्तान को कुछ देना तो चाहता नही, कभी-कभी चालीस करोड आदमियो की आखो मे धूल झोकने के लिए वह कमिशनो का प्रपञ्च अवश्य रचा करता है। सन २७ मे उसने सायमन कमिशन को हिन्दुस्तान भेजा। देश ने एक स्वर से इस कमिशन के वहिष्कार का निश्चय किया। ३ फरवरी १९२८ को साइमन बम्बई पहुचा। उस दिन सम्पूर्ण देश मे हडताल रही। छात्रो तथा नवयुवको के प्राण, सुभाष ने देश का नेतृत्व किया। कारागर से मुक्त हुए अधिक देर न हुई थी, परन्तु सुभाष को अपने स्वास्थ्य की चिन्ता कहा, उन्हे तो दिन रात अपने प्राणो से प्यारी भारतमाता की ही चिन्ता थी। उसी समय स्वाधीनता का सन्देश लेकर वह घर से निकल पडे और देश के कण कण को

उन्होने अपने सजीवन सन्देश से प्रतिध्वनित कर दिया। पटना में बोलते समय उन्होने कहा—"हमारे देश की आज ऐसी अवस्था है कि बीमार रहने से हमारा काम नही चल सकता।" 'डेली मेल' लन्दन के बम्बई-सम्वाददाता ने इस पर लिखा—"गरमदल के युवक नेता श्री सुभाषचन्द्र बोस ने जो अस्वस्थ होने के कारण रिहा किये गए थे। इतना शीघ्र स्वास्थ्य लाभ कर लिया है कि सम्भवत वह महात्मा गाधी का स्थान ले लेंगे।"

१९१८ के दिसम्बर में कलकत्ते मे काग्रेस का ४४ वा अधिवेशन था। सुभाष ने महावीर हनुमान का पद ग्रहण किया। सभापति थे प० मोतीलाल नेहरू। यह काग्रेस अपनी शान में निराली ही थी। २४ घोडो की गाडी पर राजर्षि नेहरू का जुलूस जा रहा था, उस समय सबसे आकर्षक दृश्य, जो दर्शक को अपनी ओर आकर्षित करता था वह थी सेनापति सुभाषचन्द्र बोस की शानदार मूर्ति। सुभाष का हसता हुआ गोरा और गोल मुख उस सैनिक वेष में कैसा प्रिय लगता था।

अधिवेशन पर गाधी जी ने औपनिवेशिक स्वराज्य का प्रस्ताव उपस्थित किया। प्रस्ताव का विरोध करते हुए सुभाष बाबू ने कहा—"इस प्रस्ताव का यही अर्थ है कि यदि ब्रिटिश सरकार नेहरू कमेटी द्वारा रचित शासन-प्रणाली को ३१ दिसम्बर को या इसके पूर्व मान ले, तो काग्रेस औपनिवेशिक स्वराज्य स्वीकार कर ले और यही उसका अन्तिम लक्ष्य हो जाय, पर हम भारतीय इसे स्वीकार नही करेंगे। हम लोग तो स्वाधीनता चाहते है। भविष्यत की स्वाधीनता ही मेरा आदर्श नही है—वर्त्तमान में ही पूर्ण स्वाधीनता हमारा लक्ष्य है। काग्रेस के मद्रास अधिवेशन में पूर्ण स्वाधीनता ही हमारा लक्ष्य है यह स्वीकार हो चुका है। काग्रेस अपने सिद्धात पर अटल रह निश्चय करती है कि अगरेजो से विना सम्पूर्ण सम्बन्ध विच्छिन्न किये भारत को पूर्ण स्वाधीनता मिल नही सकती। ... राजनीति में हम लोगो के पतन का क्या कारण है ? इसकी क मात्र जिम्मेदारी हम लोगो की वर्त्तमान

मनोवृत्ति पर ही है। इस दास मनोवृति को हम लोग जितना जल्द बदल सकेंगे, उतना ही जल्द हम लोग स्वाधीनता के आदर्श की प्राप्ति करेंगे। हम वतला देना चाहते है कि हम लोग हाथ पैर तोडकर वैठना नही चाहते। हम लोग अपने पैरो पर खडे होगे और अपना कार्यक्रम बनायेगे। आप लोग इसे निश्चय ही मानिए कि बगाल के राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रगति ने पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति का ज्ञान हम सबको दिया है। उस पूर्ण स्वतन्त्रता का अर्थ हम लोगो ने औपनिवेशिक स्वराज्य कभी नही समझा था। अपने देश के सैकड़ों शहीदों के आत्म-त्याग से और कवियो की पवित्र वाणियो से हम लोगो ने स्वाधीनता का यही अर्थ अभी तक समझा है। हम लोगो ने औपनिवेशिक स्वराज्य को स्वीकार करने की वात स्वप्न मे भी नही विचारी थी। आज नवयुवकों की बाते ही माननी चाहिये, क्योकि इन्ही पर देश का भविष्यत अवलम्बित है।"

१९२८ का पूरा वर्ष बीत गया, परन्तु सरकार के कानो पर जू तक न रेंगी। १९२९ मे अपनी पूर्व प्रतिज्ञानुसार भारत पुत्र रावी के तट पर इकट्ठे हुए और उन्होंने स्वाधीनता देवी की आराधना की। स्वाधीनता की देवी ने राष्ट्रपति जवाहर को पति रूप मे प्राप्त किया। २६ जनवरी को स्वाधीनता देवी का पाणिग्रहण-उत्सव जवाहर के साथ वडी धूमधाम से मनाया जाना था, तीन दिन पहले सरकार ने सुभाष को ९ महीने के लिये जेल भेज दिया। सुभाष के जेल चले जाने के पश्चात गाधी बाबा का वह डाडी मार्च हुआ जिसकी याद यावत्चन्द्र दिवाकरौ भारत पुत्रो के हृदय पटल पर बनी रहेगी।

गाधी-इरविन पैक्ट का सुभाष ने जबरदस्त विरोध किया। परन्तु अनेक बार ऐसा देखा गया है कि आल इंडिया कांग्रेस कमेटी के अनेक सदस्य गाधीजी की नीति के दिल से विरोधी होते हुए भी केवल गांधी जी के महान व्यक्तित्व का मान करते हुए ही उनके प्रस्ताव का पक्ष लेते हैं। गाधीजी ने अपने व्यक्तित्व के बल पर प्रस्ताव पास करवा लिया,

परन्तु अन्त में सुभाष की ही बात सत्य सिद्ध हुई। गाधीजी लन्दन से न केवल ठनठनगोपाल ही लौटे, बल्कि भारत के तट पर कदम रखते ही गाधी महाराज गिरफ्तार कर लिये गये। देश भर में विलिगडन बहादुर के आर्डिनेंन्सो का दौर दौरा चला।

सुभाष सुभाषितम्

नेताजी द्वारा समय समय पर दिये गये भाषणों से कुछ एक विवरण

"मेरी दृष्टि में तो भारतीय सभ्यता एक महानदी के समान है जो काल तटो के बीच न जाने कबसे प्रवाहित हो रही है और बीच-बीच में जा विभिन्न सस्कृतियो की छोटी-बडी धाराओ के मेल से वृहदाकार होती जाती है। काश्मीर से कन्याकुमारी तक और बगाल से गुजरात तक सभ्यता एक ही है। कुछ वाह्य विभिन्नताये हो सकती है। हमारे इतिहास में भी हमें यही बताया है कि उनमें भिन्नता है। लेकिन हमें उस इतिहास की बहुत-सी बातो को भुला देना होगा जो हमे हमारे विदेशी इतिहासकारो ने पढाया है। हमें अपने अतीत की तरफ दृष्टि फेर कर ऐसी एतिहासिक चेतनता जागृत करनी होगी जिससे हम अपनी सभ्यता की महत्ता तथा कला, दर्शन, धर्म और समाज शास्त्र में उसकी गौरवपूर्ण देन को अनुभव कर सके।"

"युवको का आदर्श है एक नये ससार का सृजन अपने लिये और समस्त मनुष्य जाति के लिये। युवको का पहला कर्त्तव्य यह है कि वे "अपने ही भीतर" के राज्य का स्वप्न लें और उसके बाद उसे सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में कार्यान्वित करने का प्रयत्न करें। मुझे युवकों के कार्यों में विश्वास है, क्योकि युवको के सहवास में ही हमारे भीतर का सर्वोत्तम अभिव्यक्त होता है।"

"ससार में क्राति लाने के लिये अपने आदर्श को ऊचा बनाना ही जरूरी है। इसके बिना कोई क्रान्ति सफल हो ही नही सकती। उद्देश्य

आदर्श रहित क्राति ससार मे कभी भी सफल नही हुई। अस्तु, भारतीयों को अपने आदर्शपूर्ण स्वाधीनता को कभीभी भूलना नही चाहिये।"

'मुझे इसमे रत्ती भर भी सदेह नही है कि हमारे दु खो का एकमात्र इलाज स्वराज्य है। स्वराज्य की योग्यता की एकमात्र कसौटी है हमारी आजादी की अभिलाषा। जिस क्षण हमारे लोगो मे यह अभिलाषा जागृत होजायगी, परतन्त्रता की जजीरे टुकडे-टुकडे होजायेगी। भारत मे ब्रिटिश राज्य हमारे ही लोगो के कारण टिका हुआ है।

"जिस समाज के निर्माण के लिये हम लोग इतनी प्राण-पनसे चेष्टा कर रहे है। इसका प्रारभिक स्वरूप सभा को समानाधिकार देना, धन और ऐश्वर्य पर सवका समान अधिकार होना, जाति प्रथा का अत और विदेशियों के शासन से मुक्ति है"—

"भारत मे सव धर्मों के लिए स्थान है सव धर्मो के लिये यह जरूरी है कि वे एक दूसरे के रीति रिवाजों, आदर्शो और इतिहास से परिचय प्राप्त करे। क्योंकि सास्कृतिक मेल ही साम्प्रदायिक शान्ति व एकता का रास्ता तैयार कर सकता है। मेरी सम्मति मे विभिन्न सम्प्रदायों की राजनीतिक एकता या मूलभूत आधार सास्कृतिक एकता ही है।

"राष्ट्रीयता पर एक दूसरा हमला अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिजम के आधार पर किया जाता है। यह हमला न केवल मूर्खतापूर्ण है बल्कि अनजान मे हमारे विदेशी शासकों को लाभ पहुचाता है। यह तो राह चलता भी समझ सकता है कि हमे नये आधार पर, भारतीय समाज का पुनर्निर्माण करने के लिये पहिले अपने भाग्य को वनाने का अधिकार सो मिल जाना चाहिये। जवतक भारत ब्रिटेन के चरणो को पूजता रहेगा वह अधिकार हमे नही मिल सकता। 'इसलिये न सिर्फ राष्ट्रीय लोगो का वल्कि अराष्ट्रीय कम्यूनिस्टो का भी यह फर्ज है कि वे जल्दी-से जल्दी भारत के लिये, आजादी प्राप्त करें।"

वन्धुओ, आज हम अपने राष्ट्र के इतिहास में बड़ी नाजुक मजिल पर पहुंच गये है। हमें चाहिये कि हम अपनी सब शक्तियो को एक करके

विरोधी ताकत का मुकावला करे। हमारा मतभेद उतनी बातो पर नहीं जितनी पर मतैक्य है। आइये, हम उन बातो को भूल जाय जिन पर हमारा मतभेद है और सिर्फ उन्ही बातो पर ध्यान रखे जिन पर हमारा मतैक्य है। आओ हम कन्धे से कन्धा भिडा कर खडे हो जाय तथा एक-चित और एक स्वर से कहे—यत्न करेगे, खोजेगे, शोध मे रहेगे लेकिन हार नही मानेगे। हम एक महान विरासत के उत्तराधिकारी है। हमें लोकमान्य और देशवन्धु के स्वप्न विरासत मे मिले है। हमे उनको कार्य मे परिणत करना होगा। भारत फिर स्वतन्त्र होगा,इसमें मुझे इञ्चमात्र भी सन्देह नही।'

'कुछ लोगो की ओर से राष्ट्रीयता को सास्कृतिक अन्त राष्ट्रीयता की दृष्टि से सकीर्ण स्वार्थपूर्ण और आक्रमक बनाया जाता है। यह कहा जाता है कि राष्ट्रीयता राष्ट्रो की सास्कृतिक एकता के रास्ते में रुकावट है, लेकिन मै यह कहना चाहता हू कि भारतीय राष्ट्रीयता न सकीर्ण है, न स्वार्थपूर्ण और नही आक्रमक। वह मानव जाति के उच्च आदर्शो–सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् से ओत-प्रोत है। भारत की राष्ट्रीयता ने हमारे अन्दर सचाई, ईमानदारी, मानवीयता तथा सेवा व त्याग की भावना भर दी है। इस के अलावा इस ने हम लोगो की प्रसुप्त शक्तियों को जगा दिया है। फलत भारत के कला क्षेत्र मे नई जागृति दिखाई देती है। स्वतन्त्रता रूपी प्राण के जादू भरे स्पर्श के विना हमारे सस्कृति और कला की न जाने क्या दशा हो जाती—'

'मै कठोर नियन्त्रण का पक्षपाती हू। मेरा किसी से भी द्वेष नही है। मै एक तुच्छ काग्रेस मैन की हैसियत से भी काग्रेस की सेवा करने मे सन्तुष्ट हू। यदि वगाल मेरे नामो-निशा के भी मिट जाने से बचाया जा सकता हो तो मै इसमे अपना सौभाग्य समझू गा, मै इस से भी खुश हू, यदि मेरे देशवासी अपने हृदयो के एक कोने मे मेरे लिए एक थोडा सा स्थान बना ले।'

'इस अवसर पर हमे उन राष्ट्रीय वीरोका अभिनन्दन करना चाहिये

जिन्हो ने काग्रेस को आज के स्वरूप तक पहुचाया है। भगवान हमें अधिक शक्ति दे ताकि हम तब तक अपने काम को जारी रखे जब तक विजय लाभ न हो। और आइये, भूतकाल मे हमने जो भूले की है, उन में सुधार करले। इस चिरस्मरणीय अवसर पर हमे भारत की स्वतन्त्रता की वेदी पर आत्म-त्याग की प्रतिज्ञा को ताजा करना चाहिये।'

'मे अनुशासन की कारवाई से नही डरता और मैं इस का फल भोगने को तैयार हूं। अगर काग्रेस वैधानिक अस्त्र लेकर लडती है, तो इसका क्या मूल्य है? अन्यथा काग्रेस एक दूसरी लिबरल फेडरेशन बन जायगी। यह क्या ही एक अनोखी बात है कि २० वर्षों से स्वातत्र्य संग्राम को सत्याग्रह रूपी हथियार से सामना करते आये और अब वैधानिक अस्त्र अख्तियार करे।'

"भारतीय तथा ब्रिटेन या यूरीपियन हितो के बीच किसी प्रकार का भेद भाव न करने का अर्थ भारतीय गुलामी को बनाये रखना है। एक दैत्य और छोटे से बौने के बीच अधिकारो की समानता कैसे हो सकती है? परस्पर स्वार्थो के हित और साझेदारी के बहाने हमारे राष्ट्रीय अधिकारो को इस प्रकार सकुचित कर उसे न्यायसगत बताना कटे पर नमक छिड़कना है। आज हम विकट परिस्थिति मे पडे हुए है। काग्रेस के भीतर राष्ट्रवादी और समाजवादी दल मे मतभेद है और इस मतभेद की हम अवहेलना कदापि नही कर सकते। जनता की मुक्ति के सग्राम का सर्वोत्तम अस्त्र आज काग्रेस ही है। इस लिये आइये और आगे बढिये कि हम सारे देश को राष्ट्राय महासभा के नीचे लाये। सारे देश को एकता के सूत्र मे बाधने के लिये हमे महात्माजी की परम आवश्यकता है। हमे उनकी इस लिये जरूरत है कि राष्ट्रीय संग्राम कटुता और द्वेष से बचा रहे। हमारा सग्राम केवल ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध नही है, यह तो विश्व के उन सभी साम्राज्यवादों के विरुद्ध है, जिनकी नीव ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर है। इस लिये हम

केवल भारत के स्वार्थ के लिये नही, मनुष्य जाति के लिये लड रहे हैं। स्वाधीन भारत का अर्थ ही है—मनुष्य मात्र की मुक्ति।"

"आपकी अखण्ड साधना की सिद्धि साधारण मनुष्य या साधारण भारतवासी कर सकते हैं, इसका अनुमान ही अन्यायपूर्ण है। मैं भी उन्ही साधारण लोगो मे से एक हू, आपको अखण्ड साधना, आपके महत्व और गौरव की प्राप्ति मे कैसे कर सकता हू। इस तरह का दुस्साहस मैंने कभी नही किया, उसकी प्राप्ति कर्मानुसार और जीवन-व्यापी होती है। अस्तु हमे ऐसा मालूम पडता है कि अगर मै उस पथ पर चल सका, तो क्रमश उसे प्राप्त कर सकूगा।"

—कवीन्द्र रवीन्द्र के प्रति

"हम लोग एक नवीन भारत की सृष्टि करेंगे, जिसकी भित्ति, मानवता के उच्चतम आदर्शों पर अवलम्बित रहेगी। उसी के ऊपर हम लोगों के स्वराज्य का आदर्श भी अवलम्बित रहेगा। उसी के द्वारा हम लोग मानव जाति के प्रत्येक व्यक्ति के विकास, भारतवर्ष को पुन. धनधान्य से पूर्ण करने एव भारत के प्रत्येक नर नारी को योग्य बनाने में समर्थ हो सकते है।

"आज हमारे राजनीतिक आकाश मे काले बादल मडला रहे है और काग्रेस इतिहास के चौरास्ते पर पहुची है। क्या हमे उस वैधानिकता की ओर फिर मुडना चाहिए, जिसे हमने १६३० में अपेक्षा की दृष्टि से देखा था, या हमें सामूहिक आन्दोलन का मार्ग अख्तियार कर, सामूहिक सघर्ष आरम्भ करना चाहिए। मै केवल यही कहूगा कि जागृत भारतवासी, साम्राज्यवाद से समझौता कर अब अपने जन्मसिद्ध अधिकार-स्वाधीनता को छोड नही सकते—आज हम केवल स्वतन्त्र भारत की ही कल्पना नही करते, बल्कि उस भारतीय राष्ट्र की कल्पना करते हैं, जो न्याय और समानता के आधार पर बना हो।"

"सारा देश काग्रेस वर्किंग कमेटी द्वारा साफ और निर्भ्रान्त इस

आशय की घोषणा की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करता है कि साम्राज्य-वाद के साथ किसी भी प्रकार के समझौते की किसी तरह की बात का आखिरी दरवाजा बन्द हो गया। क्या ऐसी घोषणा की आशा की जा सकती है? यदि हा, तो कब? हम लोगो की बदकिस्मती से ब्रिटिश सरकार काग्रेस की उतनी परवा नही करती और ऐसी धारणा बना ली है कि काग्रेस वाले, चाहे जितनी भी बाते करले, आखिरकार जग नही छेड सकते। १६३६ के दिसम्बर से प्रस्तावो और वक्तव्यो की कोई कमी नही रही है। काग्रेस का यह ख्याल है कि इन प्रस्तावो का असर दुनिया पर पडा। लेकिन चाहे दुनिया पर इसका असर पड़ा हो या नही, कम से कम ब्रिटिश लोगो पर तो बिलकुल ही नही पडा है, क्योकि निश्चय ही वे लोग यथार्थवादी जाति के है। गत ६ महीनों में हम लोगों ने उनको केवल कोरी बाते ही दी है और अनेक बार हम लोगो को पुराना ही जबाव मिला है कि जब तक हिन्दू-मुस्लिम समस्या का हल नही होता, पूर्ण स्वराज्य स्वप्न मात्र है—

"जिस विषम परिस्थिति में हम लोग घिर गये है, भले ही भारतीय इतिहास मे उसकी मिसाल न मिले, किन्तु दुनिया के इतिहास में वह बिलकुल नयी नही है। परिवर्तन युग मे ऐसी विषम परिस्थितिया पैदा हो जाया करती है। साम्राज्यवाद का युग समाप्त हो रहा है। और स्वतन्त्रता, गणतन्त्रवाद, और समाजवाद का युग हम लोगो के सामने आ रहा है। इसमें कुछ आश्चर्य नही कि जब कि पुरानी इमारत अपने ही बोझ से गिर रही है और अभी पुराने खण्डहरो से नयी इमारत निकलने ही वाली है, मनुष्य के दिमाग में सन्देह भर जाय। किंतु इस अनिश्चित काल मे हमें आत्मविश्वास नही खो देना चाहिये, या देशवासियो या मानवता मे विश्वास नही खो देना चाहिये। विश्वास खो देना एक बडी विपदा है।"

रामगढ़—समझौता विरोधी सम्मेलन

(३)

वनपर्व

गोलमेज कान्फ्रेंस मे अपना सर्वस्व हार जाने के पश्चात जब कि पाडव अपनी काग्रेस रूपी द्रोपदी समेत बनोवास में थे, उन्होने महावीर सुभाष को स्वाधीनता के लिए लडे जाने वाले अन्तिम सग्राम के निमित्त शक्ति प्राप्त करने के लिए, हिटलर स्टालिन, मुसौलिनी से मिलकर नूतन अस्त्र-शस्त्र प्राप्त करने के लिए हरिलोक मे भेजने का निश्चय किया । यूरोप मे रहते हुए सुभाष ने देखा ब्रिटेन के सूरमा भारतीय देश भक्तो की शक्ति से अत्यन्त भय मान रहे है । हिटलर, मुसौलिनी, स्टालिन से मिलने के पश्चात सुभाष जब बुरे के घर तक पहुचे उन्होने लन्दन मे हाहाकार मचा देखा है । सुभाष कुछ दिन लका में ही ठहर गये । एक दिनउन्होने देखा, बडे २ आगल क्रिप्स, लारैन्म अलैक्जेण्डर, सूरमा चर्चल, वाल्डोन, सैम्युअल होर, अमेरी ईडन, दस नम्बर डौउनिग, स्ट्रीट मे इकत्रित हो भारतीय स्वाधीनता के कल्प वृक्ष को जडमूल से उखाड देने का एक विशाल षडयन्त्र रचा रहे है । महावीर सुभाष भी लघु रूप धर वही आसपास विचरने लगे······ इतने मे उन्होने एक अद्भुत दृश्य देखा । डार्उनिग स्ट्रीट के बाहिर कुछ लोग गाते बजाते उन्होने देखे । ओहो ! यह तो उन्ही के अपने देश की भाषा थी । उन्होने पास जाकर ध्यान से सुना, वे लोग गा रहे थे ।

आओ ! रलमिल लीगी भैया गायें ग्रेट ब्रिटेन की जय ।
हिन्दू राज के उस आतंक से जिसने हम को किया अभय ॥

चर्चिल योधा है बलवान ।
यही तो देंगे पाकिस्तान ॥

इनका भला करे भगवान, ब्रिटेन की कीर्ति हो अक्षय ॥

चर्चल सदा रहे आबाद ।
ग्रेट ब्रिटानियां जिन्दाबाद ॥

जिन की मधुर मधुर सी याद बनाती जीवन को सुखमय ॥

चर्चल, ईडन, अमेरी सारे।
जिन्नाह की आंखों के तारे॥
हम तो जीते तेरे सहारे तू संसार हमारा है।
चर्चल और एमरी का नाम।
लीगी भाइओं का सुखधाम।
इनको बारम्बार प्रणाम सत्ता जिनकी अमरअजय॥

अपने देश बन्धुओ का इस प्रकार पतन देख उस महावीर के हृदय को बहुत आधात पहुचा, भारत के यह विभीषण निश्चय ही अपने देश की ईट से ईट बजाकर दम लेगे। उस समय महावीर ने देखा पारलियामेंट भवन के द्वार खुले। पहरेदार उन भाड़ो के सरदार को अपने साथ भीतर ले गया। भीतर का दृश्य देखने के लिए उस समय उस बजरगबली ने अत्यन्त लघुरूप धारण किया। अद्वार से वे भी भवन मे प्रविष्ट हो गये। वहा उन्होने एक बहुत ही विचित्र लीला देखी। वही उन का देश-भाई चर्चिल के सामने सिर झुकाय खडा था। उस समय चर्चिल ने कहा—भाई! तुम अपने देश को छोड सात समुद्र पार जो आये हो आखिर कुछ प्रयोजन भी तो। कुछ अपना परिचय तो दो—कौन हो, क्या हो, यहा कैसे आये हो। अपने महाप्रभु के ऐसे वचन सुन वह व्यक्ति हाथ जोड इस प्रकार बोला—

सर माई नेम इज़ मिस्टर जिन्नाह नेटिव औफ अरेयिन सी।
जिन्नाह लीडर औफ दी लीग एण्ड गांधीज़ ग्रेटैस्ट ऐनीमी॥
मिस्टर चचर्ल फौर दाई सेक।
नौऊ माई औनर इज़ ऐट स्टेक॥
हौऊ आई प्ले दी रोल औफ कुइज़िलिंग, माई लार्ड चचर्ल यू विल सी।
गांधीज़ प्रैस्टिज़ दो सो ग्रेट।
थिंक इट नौऊ गौन औउट औफ डेट॥
एक्स, वाई, जैड, औफ कांग्रेस फीट विल नौऊ बी ऐट ए. बी. सी.॥

एटी मिलियन्ज़ औफ हिज़ मैन ।
सूनर शैल बी इन माई डैन ॥
औन दी नेम औफ होली इस्लाम आई शैल मेक दैम कांग्रेस—फ्री ॥
आई हैव लैफ्ट माई हिन्दुस्तान ।
टु बी दी किंग औफ पाकिस्तान ॥
नौऊ माई लाइफ, नौऊ माई किंगडम एण्ड माई प्रैस्टिज़ इज़ विद दी ॥

उस समय चर्चिल की प्रसन्नता का पारावार न था । अमेरी की ओर देखकर वह मुस्कराये और नवागन्तुक को आश्वासन देते हुए बोले—

ओ मिस्टर जिन्ना बी एश्यूर्ड हम तेरा मान बढ़ाएंगे ।
गांधी से भी ऊंचे स्थल पै हम तुझ को ला बिठलायेंगे ॥
ए डे शैल कम, सूनर शैल कम ह्वेन बापू लंगोटी वाला ।
शैल वेट टू सी मिस्टर जिन्ना, इन मालाबार की मधुशाला ॥
जो शान आज गांधी की है, वह शान तुम्हें दिलवायेंगे ।
हम ब्रिटिश-मेड गांधी को गांधी बाबा से भिड़वायेंगे ॥
बट विथ दिस इंगलिश हैट कोट, नो मुस्लिम शैल लाइक टू सी ।
इंग्लिश कोटिड एम. ए. जिन्ना होल्डिंग इस्लामिक मोनोपली ॥
इसलिये जनाब की खिदमत में अम्बल रीकुएस्ट हमारी है ।
मानोगे तो सुख पाओगे, आगे मरजी तुम्हारी है ॥
बन बहु रूपिये गिरगिट से कुछ अपने करतब दिखलाओ
भीतर से नही ऊपर से ही थोड़े से मुस्लिम बनजाओ ॥

वहीं पर बैठे २ उस महावीर वज्रंग बली ने देखा—चर्चिल जिन्नाह से खूब घुलमिल कर बाते हुई । तत्काल टेमज का जल मगाया गया और वहीं पर जिन्नाह का राज्याभिषेक किया गया । सभा भवन तालियो की गडगडाहट से गूंज उठा ।

लौंग लिव कायदे आजम मुहम्मदअली जिन्नाह ।
दी किंग एम्परर औफ दी ड्रीम लैन्डज़ औफ पाकिस्तान ॥

उस समय जिन्नाह उठे और हाथ जोड बोले--चर्चिल जी ! आज से मेरा जो कुछ भी है ग्रेट ब्रिटेन ही का है। अब मेरे जीवन का उद्देश्य ब्रिटेन की सेवा करना, ब्रिटेन की सत्ता को भारत मे बनाये रखने में प्रत्येक प्रकार से ब्रटेन का साथ देना तथा जिस उपाय से भी हो ,हिन्दुस्तान की आजादी के लिये भारतीयो द्वारा की ,जा रही सभी कोशिशों को जड से उखाड फेकना है।

(४)

विराट पर्व

इस प्रकार एग्लो-मुस्लिम गठ बन्धन से साम्राज्य की शक्ति का सुदृढ होते देख उस महावीर ने स्वदेश मे आ धर्मराज मे प्रार्थना की "एग्लो-मुस्लिम एलायस को पनपने न दो। ब्रिटेन को यदि अवसर मिल गया वह खूब तैयार हो जायगा, फिर उससे टक्कर लेना कठिन ही नहीं असम्भव हो जायगा, अत शत्रु पर अभी आक्रमण बोल दो। परन्तु धर्मराज अभी वही-,-ठहरो और देखो का मन्त्रजाप कर रहे थे। इधर चर्चिल ब्रादर्ज अन-लिमिटेड को ज्योही इस बात का पता चला कि वज्र ग बली लघुरूप धारण कर हमारे और जिन्नाह के सभी रहस्यो को प्राप्त कर गये हैं और वे तत्काल अपनी सेनाओ सहित हम पर आक्रमण करने वाले है, उन्होने भी एक विशाल षडयन्त्र रचाया और रात रातमे महावीर सुभाषको उठाकर वे अपने बन्दीग्रह मे लेगये।

अग्रेज के बन्दीग्रह मे बैठे २ उस महावीर ने अकेले ही आजादी के लिए एक अन्तिम प्रयास करने का सकल्प किया। परन्तु इतने कडे पहरे से निकला कैसे जाए। इस सम्बन्ध में अपनी ओर से कुछ भी न लिखकर स्वय नेता जी के मुखारविन्द से ही उनके महाऽभिनिष्क्रमण की कथा कहते है।

"इस दुनिया से अलग रहना ही मुझे असह्य मालूम होता था, इसलिये मैंने फोन से अपने सम्बन्ध कायम रखे। इस प्रकार मैं फोन पर ही अपने साथियो से बात चीत और परामर्श कर लेता था। अपनी

तय्यारी को और भी मजबूत करने और इसके उपयुक्त वातावरण बनाने के विचार से ही मैने आध्यात्मिक-साधन करने की घोषणा करा दी थी। दाढी बढाने के सन्देह का निराकरण करने के लिए मुझे भारतीय कर्मकाण्ड में आध्यात्मिक-साधना के प्रवृत्त साधक को क्षौर-कर्म के निषेध का बहाना भी ढूंढना पडा। साधना को सागोपाग चरितार्थ करने के लिये मैने मौन धारण कर लिया और अन्न खाना भी छोड़ दिया। इस प्रकार लगातार चालीस दिन तक मै एकान्तवास करता रहा। मुझे सबसे खुशी इस बात की थी कि मेरी दाढी लगभग ४ इन्च बडी हो गई थी और शीशे मे देखने से मै एक अच्छा खासा मौलवी सा लगता था।

दाढी आवश्यकतानुसार बढ गई थी। सिर के बाल भी काफी लम्बे हो गए थे। आखों का चश्मा उतार उतार कर मै अपने परिवर्तित व्यक्तित्व को देखता था, तो मुझे स्वय अपने इस छद्म वेश पर आश्चर्य होने लगता था। मेरे जाने की सारी तैयारिया पूरी हो चुकी थी। मेरा अन्त करण बडा चिंतित और ऊबा हुआ था। बडी व्याकुल प्रतीक्षा के बाद आखिर मेरे वे सहयोगी आये, जिन्होने मुझे भारत से बाहर ले जाने की जिम्मेदारी ले रक्खी थी। सामान्यत बाहर जाने के लिये भारत में मुख्य तीन मार्ग है। पहला बरमा के रास्ते जापान चले जाना दूसरा किसी बन्दरगाह की राह जल-यात्रा की सुविधायें प्राप्त करके विदेशो में पहुचना, तीसरा मार्ग है सीमात प्रदेश के पर्वतीय मार्गो से पेशावर होते हुये अफगानिस्तान मे दाखिल हो जाना। पहले मेरी इच्छा हुई कि मै बरमा के मार्ग से जापान चला जाऊ और वहा से ब्लाडिवास्टक होते हुए रूस की राजधानी मास्को पहुच जाऊ। अपनी इस यात्रा से लगभग एक साल पूर्व ही मै जापानी कासल से इस विषय मे कई बार मिल चुका था एव मेरे बाहर जाने की प्रत्येक प्रकार की योजना उन्हे हृदय से स्वीकार थी और साल भर का यह निरन्तर सम्पर्क और परामर्श अतत घनिष्ठ मैत्री में परिणत हो गया था।

यूरोप मे ब्रिटेन और जर्मनी मे भीषण युद्ध चल रहा था। रूस और
जापान तब तक तटस्थ थे, किन्तु पारस्परिक अविश्वास और सन्देह
का वातावरण घनीभूत होता जा रहा था। ब्रिटेन, रूस और जापान
को बडी शका की दृष्टि से देखता था। अनुभवी ब्रिटिश गुप्तचर
जापानी कासल (कलकत्ता) के इर्द-गिर्द सदैव घूमा करते थे और
इस बात का पूरा पता ठिकाना रखते थे कि वहा कौन कौन व्यक्ति
मिलने जाया करते है और जापानी कासल का किन किन देशी लोगो
से निकट सम्पर्क है। मै गुप्तचर विभाग की इस जाच पडताल से
अनभिज्ञ नही था। मेरे साथियो ने मुझे गुप्तचर विभाग मे दर्ज एक
विस्तृत रिपोर्ट बताई थी कि भारत सरकार मेरी जापान जाने की
योजना को किसी न किसी प्रकार जानती है और गुप्तचर विभाग इस
तलाश मे है कि मेरी परिपूर्ण योजना क्या है तथा एकान्त निवास
करना और बाहर से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखना भी सरकार
की नजरो मे रहस्यात्मक होता जा रहा था। मेरी चिन्ता बढती जा
रही थी कि किसी प्रकार मै शीघ्रातिशीघ्र अपनी योजना को कार्यान्वित
कर डालू और रहस्य एव गोपनीयता के वातावरण मे पनपने वाले
सदेह और शका को अधिक नही बढने दू। जापान के मार्ग से रूस
जाने की योजना अभी पूरी तरह व्यर्थ नहीं समझी गई थी। सुविधा
और सफलता के अदाजो की अपेक्षा थी। जापानी कासल अब भी
अपने दिये गये वचन पर दृढ थे और जापान से रूस की मार्गी यात्रा
सम्बन्धी सुविधाये देने को वह तैयार थे। मेरी चिन्ता देखकर उन्होने
जापान सरकार से इस विषय मे परामर्श किया था और मुझे बताया
था कि जापान गवर्नमेण्ट को मेरी प्रत्येक प्रकार की सहायता करने मे
बडी प्रसन्नता होगी। साथ ही श्री रासबिहारी बोस का भी एक
सदेश था जिसमे उन्होने मुझसे बडे प्रेम भरे शब्दो मे आग्रह किया
था कि मै जापान अवश्य जाऊ और उनसे मिलकर भावी कार्यक्रम की
रूपरेखा निश्चित करू। मैने जापानी कासल को उनकी सहायता और

जाने वाले विदेशी जहाजो पर जाच पडताल भी प्रारम्भ हो गई थी। किन्तु जापानी कासल इतने पर भी मेरे भागने की जिम्मेदारी लेने को तैयार थे। वडे विचार-विमर्श के वाद आखिर हम लोगो ने जापान जाने की योजना मुल्तवी कर दी क्योकि भारत सरकार पर वह भेद प्रकट हो चुका था और सरकारी गुप्तचर बरमा के रास्ते पर और सिगापुर में मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे।

जापान जाने की योजना मुल्तवी करने के वाद मेरे सामने दो विकल्प शेष रह जाते थे—समुद्री मार्ग और सीमाप्रात के प्रातो से अफगानिस्तान पहुचना। समुद्री मार्गो से वाहर जाने की कोई गुंजाइश ही नही थी। अत वाहर निकल भागने के लिये सीमाप्रान्तो के पर्वतीय मार्ग ही थे। मेरी प्राथमिक योजना भी यही थी जो दाढी वढाने तक चरितार्थ हो चुकी थी। जापान जाने की योजना जितनी शीघ्रता से पेश हुई थी उसी तूफान से छिन्न–भिन्न भी हो गयी। वाद मे मुझे वडा पश्चाताप रहा। इतना समय व्यर्थ नष्ट हुआ। समय के बेकार जाने के साथ-साथ मेरे सामने सरकार के परिवर्धित सन्देह और सतर्कता के खतरे की भी समस्या थी। किन्तु इस पश्चताप और अधैर्य के वीच कभी-कभी मै रासबिहारी वावू के स्नेह भरे शब्दो को स्मरण करके आह्लादित भी हो उठता था। कई दिनो से मेरी उत्कट लालसा थी कि मै जापान जाकर रासविहारी वावू से मिलू। हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई में रासविहारी वावू की उत्ताप्त कुरवानी की भी शक्ति है। भारतवासियो के हृदय मे उनके पुरुषार्थी कर्तव्य के प्रति अपार श्रद्धा और कृतज्ञता रहेगी। अस्तु,

हा तो मेरे सामने सीमात जाने का ही विकल्प था। इसके सिवाय दूसरा और कोई चारा न था। अत वड़े विचार-परामर्श के पश्चात हम लोगो ने जाने का दिन और समय निश्चित कर लिया। किन्तु दूसरे दिन सवेरे फिर एक अशुभसमाचार मुझे मिला। जो तीन व्यक्ति मेरे साथ कावुल तक जाने वाले थे उनमे से एक को पुलिस ने राज-द्रोही

भाषण देने के अपराध में गिरफ्तार कर लिया। असली बात यह थी कि वे जापानियो के निकट सपर्क के व्यक्ति थे और सरकारी आज्ञाओं के बावजूद भी उनका जापानी कासल मे गुप्त रूप से मिलने-जुलने का काम बन्द नही हुआ था। सरकार की दृष्टि मे वे "खतरनाक" व्यक्ति थे और कई बहाने निकाल कर भी प्रातीय सरकार उन्हे जेल मे बन्द नही कर सकी थी। किन्तु इस बार सरकार से नही रहा गया और इस बार उन पर प्रहार करके मेरी योजना पर वज्रपात किया। इस प्रकार मुझे दो रोज रुक जाना पडा। ये अप्रत्याशित आपत्तिया मेरे लिये काफी आतककारी होगयी थी। मै कभी-कभी निराश भी होने लगता कि शायद मै भारत से बाहर न निकल सकू। विशेषकर ये दो रोज मुझे अत्यन्त कष्टकर और भयप्रद महसूस हुए। एक ही कमरे मे इस प्रकार आत्मकारा मे घुट घुट कर बेबसो की तरह तडपते रहना—परिस्थितियो के हृदय हीन व्यग पर मै काफी क्रुद्ध हो गया था।

आखिर मेरी योजना के सहकारी सारी तैयारिया करके आये। उस दिन जनवरी की १५ तारीख थी। उनके साथ मौलवी के छद्म-वेष की पूरी सामग्री थी। मैने मौलवी का वेष बनाया। चुस्त पाजामा और शेरवानी और 'फेजकैप' मे अपनी दाढी के साथ मै पक्का मौलवी बन चुका था, वेष परिवर्तन की सफलता पर किसी को सदेह नही था। सन्ध्या हो चुकी थी और रात का अन्धेरा गहरा होता जा रहा था। मैं प्रतीक्षा मे कल्पना-विभोर बैठा था। अन्धेरा और बढा। रात के नौ बजने की तैयारी थी। मेरे घर से बाहर निकलने का समय आ चुका था। अपने महत्वपूर्ण दायित्व को अन्तस्थ कर मैने चश्मा शेरवानी की जेब मे रखा और निर्भीक कदमो से घर से बाहर निकल आया। लगभग पन्द्रह मिनट तक मुझे पदल चलना पडा। आगे नियत स्थान पर मेरे तीन साथी मोटर लेकर मेरी चिन्तातुर प्रतीक्षा कर रहे थे। मुझे पहले तो दूर से उन्होने पहचाना नही, किन्तु जब मै मोटर के पास आकर रुका तो हर्षातिरेक से उनके चेहरे खिल उठे। मेरे सफल छद्म-

वेष को देखकर सबको आश्चर्य और प्रसन्नता थी। मै झटपट मोटर में बैठा और अपने साथी को आगे बढने को कहा। ग्राड ट्रक रोड पर मोटर रात के अन्धेरे मे अपनी पूरी स्पीड से जा रही थी। ऊपरी निर्भीकता होते हुए भी हमारे हृदयो मे तेज धडकन थी और जरा-जरा सी आवाज या शब्द पर हमारा अन्तरस्थ सदेह सम्पूर्ण स्नायु-जाल मे एक हरारत-सी पैदा कर देता था।

मेरे मन मे अनेक भावनाये सघर्ष कर रही थी। मोटर की तेज गति ने उनको उत्तेजित करके और भी भयानक और लम्बी चौड़ी कर दिया था। हम सब निस्तब्ध अपने-अपने अत करण के द्वद मे आत्म-सलग्न बैठे थे। अप्रत्याशित की शका कभी-कभी इस भाव-मेघाच्छन्न वातावरण मे विद्युत की तरह चमककर विलीन हो जाती थी। आखिर हम लोगो ने वर्दवान स्टेशन पार किया। वर्दवान से आगे वाली स्टेशन पडता है, जो पहले क्रातिकारियो का अड्डा रहा है। वाली की सबसे बडी विशेषता यह रही है कि वह जन-कोलाहल से पूर्णतया परे और प्रशात स्थान है। उसके आसपास का वातावरण ऐसा है कि मनुष्य निर्विघ्नता से अपने उग्र स्वप्नो को सत्य मे परिणत करने की चेष्टा कर सकता है। हम सब वहा उतरे। मै आराम से टहलता-टहलता पास की सराय मे चला गया, जहा तीन चार और यात्री ठहरे हुए थे और उनकी सदेह-प्रेरक बातचीत और नजरो से यह मालूम देता था जैसे वे भी मेरी ही तरह किसी रहस्यमय 'षडयत्र' की कल्पनाये साकार करने जा रहे हो। यहा कुल शायद तीन पुरुष और एक स्त्री थी। सभी विना सरोसामान के थे, सिर्फ उस स्त्री के पास एक गदीसी अटेची थी, जिसे वह बडी सावधानी से पकडे हुए थी। मुझे वहा देखकर वे जैसे सतर्क हो गये। मुझे वहा ज्यादा प्रतीक्षा नही करनी पडी। मेरे साथियो ने मुझे बाहर से सकेत किया और मै उनके साथ चल दिया। वहा से हम लोग पैसेजर गाड़ी से वर्दवान प्लेटफार्म पर पहुचे पंजाबमेल मे जियाउद्दीन के नाम से मेरा रिजर्वेशन करा लिया गया था। मेरे

साथियों ने मुझे अपना कम्पार्ट-मेट बताया और जैसे ही मैं अपनी बर्थ पर बैठा, उन लोगो ने मुझे नमस्कार किया और कामना प्रकट की कि मैं अपने महत्वपूर्ण अभियान मे सफलीभूत होऊ। मैं उनके म्लान चेहरो को देख सकने मे असमर्थ रहा, किंतु उनकी वाणी ने मुझे सब बता दिया। कितना अपार स्नेह और सौहार्द उनके हृदयो मे हिलोरे मार रहा था। मेरे जीवन मे स्नेह-ममत्व के अनेको अवसर आये हैं और मैं अपनी दृढता और निर्भयता की हद तक पहुची सकल्प-शक्ति को मुश्किल से सामर्थ्यवान रख पाया हू और प्राय हुआ यही है कि मैं अपनी भावुकता को जिसे आप मानवता कहिये या आत्म-निर्बलता कहिये, नियन्त्रण मे नही रख पाया हू। गद्‌गद् होने से मेरा हृदय रुक नही सका है और ममत्व की द्रवणशीलता कितनी सक्रामक होती है, तब मेरी समझ मे आ सका है।

गाडी चली। मैंने अपने वेष को एक बार फिर देखा। मैं पूरा मौलवी था—जीवन मे इस प्रकार अपनी हस्ती छिपाने का प्रयास करूगा यह मैंने स्वप्न मे भी नही सोचा था। मेरे मन में ख्याल आया क्यो यह सारी प्रवचना और दम्भ किया जावे, क्यो नही देश ज्वाला-मुखी की तरह अपने दासत्व को स्वाहा कर दे। कब तक ये छिपछिप कर क्राति के असफल उल्कापात पैदा किये जायेगे? क्या यह कायरता नही। यकायक मेरा मन गाधी जी की योजना की ओर गया। एक भव्य व्यक्तित्व एक ज्योति-पुन्ज मानवता जैसे मेरे सामने साकार खडी थी। मैंने महसूस किया क्या युद्ध प्रणाली है इस शख्स की? सारे हथियार शत्रु को बता देता है। और ललकार कर आक्रमण करता है। मेरे सामने मानो प्राचीन भारत का वीरत्व साक्षात खडा था। भर्त्सना का निर्वेद जैसा भाव मेरी रग-रग मे न जाने कैसी जडता का समावेश कर गया। स्टेशन आया गाडी रुकी, मैंने एक अखबार उठाया और बड़े मनोयोग के साथ पढने लगा। प्रयत्न इस बात का कर रहा था कि मेरे मुख पर किसी की दृष्टि नहीं पडने पावे। रात भर इसी प्रकार सज-

गता और सतर्कता के साथ मै गाड़ी मे बैठा रहा। मेरा मन अजीब-अजीब योजनाओं से द्वन्द्व कर रहा था। मेरे सामने संभव और असम्भव दोनो थे और हृदय के बवडर मे दोनो की कल्पना बडी उद्वेगप्रद महसूस हो रही थी। किन्तु मै जन्म से आशावादी रहा हू। उस धुधले भवितव्य के पार भी मैने सभावना का एक सुनहला प्रभात देखा।

रात निर्विघ्नता से कटी। आसमान का अधेरा गायब हो रहा था—पर मेरी सतर्कता बढती जा रही थी। मैने अपने नाम 'जियाउद्दीन' को कई बार दोहराया और अपने अन्तर्मन को सजग किया कि मेरा नवीन व्यक्तित्व क्या है। उजाला और बढा और जैसे ही अगले स्टेशन पर मेल रुका तो मैने देखा कि एक यात्री मेरे ही कम्पार्टमेंट मे मेरे सामने की खाली जगह को लक्ष्य करते हुए आ रहा है। मैं नाची नजरों से अपने समाचार पत्र पढने मे ध्यानस्थ हो गया। काफी देर तक मैं और वह मौन-मूक एक दूसरे के आमने सामने बैठ रहे। मै निरन्तर डरता रहा कि कही वह यात्री मुझसे कोई प्रश्न न पूछ बैठे। शक्ल सूरत से वह सिख प्रतीत होता था। कुछ देर तक तो वह चुपचाप बैठा रहा। फिर अचानक मेरी ओर मुखातिव होकर बोला—

"भजी साहव, अजीब मुसीबत है सफर की आजकल। ये मिलिट्री वाले किसी को गाडी मे सवार ही नही होने देते। वेचारे मुसाफिरो का नाक मे दम आगया।

मैने उसके कथन का समर्थन किया। फिर बातचीत धीरे-धीरे देश और विदेश की राजनीति तक पहुच गई। मै उसकी हा मे हा मिलाता रहा। अकस्मात वह मेरा पता ठिकाना और यात्रा का उद्देश्य पूछ बैठा।

मैने कहा—"मै जाति का मुसलमान हू। जियाउद्दीन मेरा नाम है और इधर कई वर्षो से लखनऊ मे रहता हू। पहले मै स्कूल में अध्यापक था, अब बीमा का काम करता हू। यह काम मेरी मनोवृत्ति के अनुकूल है। गतव्य स्थान के विपय मे पूछने पर मंने उसे वताया कि

मै रावलपिण्डी जा रहा हू। कम्पनी ने मुझे वहा का काम देखने के लिए नियुक्त किया है। इस परिचय के उपरात उसने मुझसे बीमा व्यवसाय के विषय मे अनेक प्रश्न पूछे और राय मागी कि वह बीमा करवाये या नही। दिन भर वह यात्री मेरे साथ-साथ यात्रा करता रहा। उसने दोपहर को खाना मगवाया और मुझे खाने के लिए मजबूर किया। मै उसकी मनुहार को नही ठुकरा सका। भोजनोपरात उसने फिर बात-चीत शुरू की। घूमते फिरते बातचीत का दौर फिर देश की राजनीति पर आकर अटका। मुझे बेहद आश्चर्य था कि भारत का प्रत्येक व्यक्ति कितनी शीघ्रता से देशी राजनीति में दिलचस्पी लेने लगा है। चाहे इन व्यक्तियो में साहस और कर्तव्य-शक्ति का अभाव हो; मगर उनके विचारो में राष्ट्रीयता अपना रग गहरा कर रही है। यह देश के भावी कार्य-क्रम के लिए बडी आवश्यक और अभिनदनीय बात है। उसने काग्रेस और मुस्लिम लीग की नीति के ऊपर अपनी सम्मतिया दी। मै वादविवाद से बचने की चेष्टा कर रहा था; मगर वह बडी चतुरता से प्रश्न पूछ रहा था। आखिर मै उसकी बातो का जवाब देने लगा। उसने भारत की राजनीति के बारे मे मुझसे कई प्रश्न किये। उसने कहा कि साम्प्रदायिकता का प्रश्न भारत की सबसे जटिल समस्या है। हर बार देश की प्रगति में साम्प्रदायिक समस्या ने बाधाए डाली है। बिना इस समस्या का निराकरण हुए देश को स्वतन्त्रता के दर्शन दुर्लभ है। इस बाबत उसने मेरी भी राय जानने की कोशिश की। मै पहले तो पीछे हटा, किंतु बाद में उसकी जिज्ञासा को मुझे शात करना पडा। मैने उससे कहा और वही आज भी मै कहता हू। बरसो के अनुभव के बाद मै इस परिणाम पर पहुचा हू और अनेक बार काग्रेस के सामने मैने वही बात रखी है। बात यह है

"अग्रेज जाति बडी विचित्र जाति है उसकी हा में 'ना' और 'ना' में 'हा' इतनी जटिलता से व्याप्त रहती है कि चतुर से चतुर व्यक्ति भी उसका स्पष्टीकरण प्राप्त नही कर सकता। वे भारत की कमज़ोरी

जानते है। अहिसा के अर्थ वे कायरता से लेते है। बेबसी और शक्ति-साहस-हीनता से लेते है। गाधी जी को वे चतुर राजनीतिज्ञ जरूर मानते है, उनसे डरते है, किन्तु वे इस बात में कभी विश्वास नही करते कि भारतवासी उन्हे जबरदस्ती निकाल फेंकेंगे, और मेरा यह दृढ विश्वास है कि बिना रक्तपात के वे भारत से अपने बिस्तरे नहीं बाधेंगे। अग्रेज कौम मूलत राजनीतिज्ञो की कौम है। वे सामने वाले की शक्ति और सकल्प की बडी शीघ्र थाह प्राप्त कर लेते है। उनका इतिहास देखिये जब तक शस्त्र हाथ मे लेकर उनके सामने कोई नही आया तब तक उन्होने किसी को स्वतत्रता नही दी। अमेरिका यदि रक्तपात पर उतारू न होता तो आज उसकी अवस्था भी भारतवर्ष जैसी ही होती।"

वह बडी दिलचस्पी से मेरी बात सुन रहा था। शस्त्र-युद्ध की बात उसे पसन्द आ रही थी। उसका कौमी खून उबाल पर था, उसकी आखो की चमक से साफ मालूम होरहा था। किन्तु वह आसानी से भाव-प्रवलता मे बहने वाला व्यक्ति नहीं था। उसने मुझसे पूछा —

"लेकिन मिया साहब, हथियार हिन्दुस्तान मे है कहा ? यहा के लोग भेड़-बकरियो का जीवन बिताते है। सदियो से लम्बा चाकू तक भारत की जनता ने अपने हाथो मे नही पकडा। फिर आपके द्वारा बनाया साधन किस प्रकार कारगर हो सकता है ?"

मैंने कहा:—"सरदार जी, हथियारो की दुनिया मे कमी नही है। लाल क्राति के समय क्या रूस के पास हथियार थे ? क्या स में तालीम का स्टैंडर्ड इतना भी व्यापक था जितना आज के हिन्दुस्तान मे है ? किन्तु जनता मे एक लगन थी—आजाद होने की एक जलती इच्छा थी। उन्हे जर्मनी से हथियार मिले। और आयरलैंड को लीजिये। क्या वहा अग्रेजो ने यह नही समझा था कि आयरों के पास हथियार नहीं है ? क्या अग्रेजो को दृढ विश्वास नही कि निहत्थे आयर उन्हें देश से बाहर नही निकाल सकेंगे ? किन्तु 'जब अग्रेजो को वहा

गरम गरम गोलियो का सामना करना पडा तो तो अपनी आठ सौ वर्ष की हुकूमत छोड प्राणों का मोह लेकर भाग निकले । भारत को भी आजादी इसी साधन से मिलेगी। यदि हिन्दुस्तान हथियारो से सामना करने को तैयार हो जाये तो उसे पर्याप्त सहायता मिल सकती है। काम करने की इच्छा मात्र चाहिये।"

मै १७ जनवरी को लगभग ६ बजे पेशावर पहुचा। स्टेशन पर मोटर आई हुई थी, जिस पर बैठकर हम नियत समय स्थान पर पहुच गये। पेशावर मे मुझे दो दिन ठहरना पडा, क्योकि मेरे मित्र मेरे काबुल जाने का प्रबन्ध करने मे लगे थे। मेरे पेशावर पहुचने का समाचार किसी को भी नही मिला और १६ जनवरी को प्रात पठानी लिबास मे रहमत खा और एक दूसरे मित्र के साथ मोटर मे बैठकर पेशावर से चल दिया। हम तीनो के अतिरिक्त मोटर चलाने वाला एक ड्राइवर भी था। आखिर गढी नामक एक ग्राम मे पहुचकर हमने सारी रात बिताई और प्रात काल मोटर को वापिस करके मै रहमत खा तथा दो पठानो के साथ, जिन्होने सुरक्षा के लिए बन्दूके ले ली थी, काबुल को पैदल चल पडा। मार्ग मे मुझसे यात्रियो ने बाते करने का भी प्रयत्न किया, किन्तु रहमन खा ने मुझे गूंगा और बहरा बताकर उन्हे शान्त कर दिया।

आखिर शाम के समय हम हिन्दुस्तान की सरहद पार करके कबीलों के एक छोटे-से गाव मे जा पहुचे। वही पर रात बिताई। अभी तक मार्ग की थकान दूर नही हुई थी। प्रात काल आगे चलना मेरे लिए कठिन हो गया, लेकिन चले बिना गुजारा भी नही था। थोड़ी दूर चलने के बाद हम एक नदी के किनारे पहुचे। उसे पार करने के लिए कोई किश्ती नही थी। वहा के लोगो ने मशको मे हवा भरकर कई मशको को आपस मे जोडकर एक नाव-सी बना ली थी। पहले तो मुझे उन मशको की नाव से नदी को पार करते भय मालूम दिया परन्तु बाद में सबको ऐसा करते देखकर मेरी भी हिम्मत बधी। इस नदी के पार

से ही असली काबुल की सीमा प्रारम्भ होती है। यहा पर सब यात्रियों को अपने पासपोर्ट दिखाने पडते है। इसी मुसीबत से बचने के लिए हमने नदी पार करने का प्रबन्ध किया था। उसके बाद रात मे एक ट्रक से लगभग ४ बजे काबुल पहुचे।'

काबुल मे पहुच कर सुभाष बाबू एक सराय मे ठहरे। सराय मे उस समय ४-५ बग्घिया खडी थी। उसके सहन मे १०-१२ ऊट १०-१५ गधे और कुछ घोडिया भी बधी थीं। सराय क्या थी अच्छी-खासी घुडसाल थी। सराय मे जाकर वे रहने लगे। एक दिन सुभाष बाबू ने अपने साथी रहमत खा को बाजार से कुछ आवश्यक सामान खरीदने भेजा। बाजार से लौटकर उसने सुभाष बाबू से कहा कि ५-६ दिन से नानबाई की दुकान पर मै एक सफेद कपड़े पहन हुए एक आदमी को बैठा देखता हू। वह मुझे बडे गौर से देखता रहता है। मुझे तो ऐसा लगता है कि वह व्यक्ति सी० आई० डी० मे तो नही है। वह सुभाष बाबू से यह बात कह ही रहा था कि इतने ही मे वह व्यक्ति वहां सराय मे ही आगया और सुभाष बाबू से अनेक प्रश्न किए। सुभाष बाबू ने सकेतो द्वारा अपने को गूगा और बहरा प्रमाणित किया और उसे टालने के लिए ५) का अफगानी नोट दे दिया। नोट लेकर वह चलता बना और चलते-चलते भी वह यह कहता गया—"मै पाच रुपये पर फिसलने वाला नही। पाच रुपए की भी कोई कीमत होती है। थानेदार साहब की आज्ञा भी न और पाच रुपये लू। इस प्रकार सिपाही अब रोजाना आता और कुछ-न-कुछ लेकर ही टलता। एक दिन थानेदार भी वहा आया और वह भी सुभाष बाबू की घडी की भेट लेकर चलता बना। इस प्रकार सिपाही से उनकी रोजाना मुठभेड़ होती। वे एक भारतीय व्योपारी श्री उत्तमचन्द्र के यही रहकर अपने बाहर जाने की तैयारी की बात चला रहे थे, जब उन्होने श्री उत्तमचन्द्र से अपनी सारी उक्त कहानी सुनाई तो उत्तमचन्द्र ने उन्हे अपने मकान मे बुलाने का निश्चय कर लिया।

श्री उत्तमचन्द्र के आग्रह पर सुभाष बाबू उनके घर पर रहने लगे और अपने कार्य की सफलता के लिये उन्होंने प्रयत्न जारी रखा। श्री उत्तमचन्द्र ने सुभाष बाबू के सम्बन्ध में अपनी धर्मपत्नी से पहले कुछ भी नही बताया था। सुभाष बाबू को दिन भर कमरे में बन्द रहना पड़ता था, जिससे उनके मकान पर आनेवाले व्यक्तियों को कुछ मालूम न हो सके।

उत्तमचन्द तथा उनसे भी बढ़कर उनकी धर्मपत्नी को कोटि-कोटि धन्यवाद है जिनके पावन प्रयास से नेताजी काबुल में सुरक्षित रह सके तथा उन्हीं के उद्योग से जर्मन कौंसल की सहायता से जर्मनी पहुचने में सफल हो सके। जो काम पाडवो के जीवन में महाराजा विराट ने किया वही काम नेताजी के जीवन में उत्तमचन्द्र ने किया।

(५) उद्योगपर्व

सुभाष के अफगानिस्तान की ओर जाने का भेद कुछएक कम्युनिस्टो ने भारत सरकार के कानो तक पहुचा दिया था। भारत सरकार का इस आशय का तार जिस समय काबुल पहुचा कि एक भारतीय क्रान्तिकारी भाग कर सीमा पार करने के प्रयत्न मे है और उसे तुरन्त गिरफतार कर लिया जाय तो उस समय सुभाष काबुल मे ही थे। उत्तमचन्द के पास रहते हुए इस बात की कोशिश की गई कि रूसी दूत सुभाष को रूस पहुचाने की सुविधा दे, परन्तु रूस ने तो सुभाष को अपने ऊपर से उड कर लन्दन पहुचने की इजाजत तक देना स्वीकार न किया। रूस का कहना था कि हमने अंग्रेजो के विरुद्ध युद्ध की घोषणा नही की। ऐसी अवस्था मे हम एक विद्रोही अग्रेज प्रजा को अपनी सीमा कैसे पार करने दे? अन्त मे एक जर्मन व्यक्ति को रोक कर उसके पासपोर्ट से सुभाष को वायुयान द्वारा जर्मनी ले जाया गया।

जर्मनी की राजधानी बर्लिन मे सुभाष बाबू जर्मन सरकार के मान्य अतिथि थे और वहाँ के एक बड़े होटल मे रहते थे उस समय एक अमे-

रिकन पत्रकार ने सुभाष बाबू से भेंट की थी और उसने अपनी इस भेंट का वर्णन रेडियो द्वारा ब्राडकास्ट किया था। उस ब्राडकास्ट में उसने कहा था—

"विशाल बैन्डन बर्ग होटल के एक शान्त कमरे में भारतीय स्वातंत्र्य-आन्दोलन के एक नेता और क्रान्तिकारी सुभाष बाबू ठहरे हुए थे। मैं उनसे मिलने गया। उन्होंने बड़े प्रेम से मेरा स्वागत किया। मैं तो उन्हें देखकर स्तब्ध रह गया। सुभाष का व्यक्तित्व बड़ा भव्य और विशाल है। उच्च वक्षःस्थल विशाल भुजायें, विस्तृत ललाट, गौर वर्ण वाले इस व्यक्ति के चेहरे पर एक विचित्र दैवी तेज-पुंज है, जो हठात् लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है और उन्हें अपने सामने सिर झुका देने के लिए विवश कर देता है। मैंने सुभाष बाबू मे आधुनिक बुद्ध के दर्शन किए हैं। गुलामी के प्रति उनके हृदय में तीव्र घृणा है और वे भारत को शीघ्रातिशीघ्र अंग्रेजी दासता से मुक्त देखने के लिए आतुर हैं।"

जर्मनी मे आजाद हिन्द सैना का निर्माण कर नेता जी ने बरमा से भारत की आजादी की लडाई लडने का निश्चय किया। उस समय तक बरमा पूर्णतया जापान के कब्जे मे आ चुका था। पनडुब्बी द्वारा वे टोकियो पहुचे। कुछ दिन टोक्यो मे रहने के पश्चात २ जुलाई ४३ को सुभाष सिगापुर पहुचे। मलाया निवासी भारतीयो ने अपने हृदय-सम्राट का जी खोल कर स्वागत किया। ४ जुलाई को फिर एक विराट सम्मेलन हुआ। इस दिन सुभाष ने आजाद हिन्द सैना की अध्यक्षता स्वीकार की। उस समय उन्हो ने कहा—

'आज का दिन मेरे जीवन में सबसे अधिक महत्व का है। आज भगवान ने प्रसन्न होकर संसार के सामने यह घोषित करने का अनुपम अवसर और सम्मान मुझको दिया है कि भारत की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने वाली फौज का निर्माण

हो गया है। जो सिंगापुर किसी समय ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा का स्थान था, उसी सिंगापुर मे यह फौज तैयार हुई है। यह गर्व का विषय है कि इसका संगठन एक विशुद्ध भारतीय नेतृत्व में किया गया है और यह भारतीय नेताओं की छत्रछाया मे ही भारत की ओर कूंच करेगी। पुरानी दिल्ली के लाल किले में ब्रिटिश साम्राज्य की कब्र पर विजय-परेड करना ही हमारा अन्तिम लक्ष्य है। जार्ज 'वाशिंगटन' को अमेरिका में और 'गेरीवाल्डी' को इटली में इसलिए सफलता मिल सकी थी कि उनके पास अपनी फौज थी। हिन्दुस्तान की भी आज अपनी सेना तैयार हो गई है। मैं अन्धेरे मे या प्रकाश मे, दुख या सुख में, पराजय या विजय मे सदा तुम्हारे साथ रहूंगा। ईश्वर की हम पर कृपा हो और आजादी के युद्ध में हमें विजय प्राप्त हो।'

अक्टूबर ४३ में आजाद हिन्द सघ की ओर से विराट सम्मेलनका आयोजन किया गया। उस समय नेताजी ने भाषण देते हुए कहा—मैं सुभाषचन्द्र बोस ३८ करोड़ भारतीयों को स्वतन्त्र करने की शपथ लेता हूं और अपने अन्तिम श्वास तक स्वतन्त्रता के इस पुनोत संग्राम को चलाता रहूंगा। मैं सदैव भारत का सेवक बना रहूंगा और अपने उन ३८ करोड़ भारतीय भाई बहिनों की भलाई में लगा रहूंगा—उस समय ५००० व्यक्तियों की उपस्थिति में यह घोषणा पढ़ी गई।

आज स्वाधीनता आसन्न है। प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य अस्थायी आजाद हिन्द सरकार का संगठन करके इस सरकार के झण्डे के नीचे जमा होकर स्वाधीनता संग्राम चलाना है। परन्तु इस समय भारतके नेता जेलो मे बन्द है। जन साधारणके पास भी कोई हथियार नहीं हैं। इस अवसर पर भारतमे अस्थायी आजाद हिन्द सरकार स्थापित करना या उस सरकार के आधीन

सशस्त्र संग्राम चलाना सम्भव नहीं है। इसलिए पूर्वी एशिया के आजाद हिन्द संघ का ही यह कर्तव्य है कि स्वदेश व विदेश स्थित समस्त देशवासियों का समर्थन पाकर अस्थायी सरकार का संगठन करे और आजाद हिन्द फौज की सहायता लेकर स्वाधीनता का अन्तिम संग्राम संचालित करे।

भगवान के नाम पर, अतीतकाल मे जिन महापुरुषों ने भारतीय जनता को सुसम्बद्ध किया उनके नाम पर और जिन स्वर्गीय वीरों ने वीरत्व और आत्म-त्याग का आदर्श उपस्थित किया और उनके नाम पर हम भारतीय जनता को अपने झण्डे के नीचे आते और भारत की स्वाधीनता के लिए हथियार उठाने के लिए प्रेरित कर रहे है। जब तक अंग्रेज भारत से न जाये तब तक यह संग्राम साहस, अध्यवसाय और विनय में पूर्ण आस्था रखकर चलाना होगा।"

अब हम लोग अपने उत्तरदायत्व का पूरा ज्ञान लेकर कर्तव्य-क्षेत्र मे उतरते हैं। भगवान से हमारी प्रार्थना है कि वह हमारे कार्य और मातृभूमि के लिए हमारे संग्राम को अपने आशीर्वाद से सफल करे। देश की मुक्ति के लिए, देश के मगल के लिए; विश्व मे उसके उपयुक्त स्थान पर उसको आसीन करने के लिए हम अपने साथियों और सहयोगियों सहित जीवन-प्रण करते हैं।

उक्त घोषणा-पत्र पर अस्थायी आजाद हिन्द सरकार के इन सभी सदस्यों के हस्ताक्षर थे—

श्री सुभाषचन्द्र बोस राष्ट्रपति, सेनाध्यक्ष, प्रधान मंत्री और परराष्ट्र विभाग के प्रधान मंत्री। श्री कैप्टन जैनरल लक्ष्मी स्वामीनाथन (महिला फौज की अध्यक्षा) श्री एस० ए० अयय्र (प्रचार व प्रकाशन के अध्यक्ष), श्री लेफ्टिनैंट कर्नल एन० सी० चटर्जी (अर्थ सचिव और आजाद हिन्द फौज द्वारा अधिकृत भूभाग के गवर्नर और अण्डमान तथा निकोबार के शासक)

लेफ्टिनैंट कर्नल अजीज मुहम्मद, लेफ्टिनैंट कर्नल एन० एस० भगत, लेफ्टिनैंट कर्नल भोंसले, लेफ्टिनैंट कर्नल गुलज़ारसिंह, लेफ्टिनैंट कर्नल एम० जेड० कियानी, लेफ्टिनैंट कर्नल ए० पी० लोकनाथन, लेफ्टिनैंट कर्नल ईशान कादरी, लेफ्टिनैंट कर्नल शाहनवाज खां (चीफ आफ जनरल स्टाफ) श्री ए० एम० सहाय (सैक्रेटरी), श्री रासबिहारी बोस (प्रधान परामर्शदाता) श्री कारीमगनी, दीनानाथदास, डी० एम० खां, ए० पलप्या, जे० थिवो, सरदार ईश्वरसिंह (परामर्शदाता) श्री ए० एन० सरकार (कानूनी सलाहकार)

जय हिन्द

अब हम नहीं रुकेंगे। खून ने खून ही पुकारा है। माता ने रूठी, निर्वासित सन्तानों को पुकारा है। हम अब समय व्यर्थ नहीं खो सकते। हमारे शस्त्र अब म्यान में नहीं रहेंगे। सामने पथरीले पहाड पर लहराता हुआ यह पहाडी मार्ग हमारे और हमारी जन्मभूमि के बीच में लहरा रहा है। आगे बढ़ो! इस रास्ते को कुचल कर पहाडियों और घाटियों को पार कर, सुदूर क्षितिज तक पहुंच कर इन कोहरीले बादलों के देशसे अभी आपको अपनी आजादी छीनकर लानी है। ईश्वर आपकी सहायता करेगा। —नेताजी

४ जुलाई से १० जुलाई तक आजाद हिन्द फौज ने सुभाष-सप्ताह मनाया। २ अक्तूबर को इन्ही भारत के सूरमाओ ने गाधीजी की जयती मनाई। इस अवसर पर राष्ट्र-गीत तथा गाधीजी के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए नेताजी ने कहा।

यह गीत केवल एक साधारण गीत नहीं—हृदय के रक्त से लिखा हुआ उत्तम साहित्य है। प्रत्येक जाति के पुनरुत्थान में उसकी जातीय कविता का प्रमुख स्थान है। कवि अपने युग का उन्नायक होता है। जो कवि अपने युग से नाता तोड देता है, वह सरस्वती के शाप का

अधिकारी होता है, बरदान का नहीं। जो जाति अपने कवि का सम्मान भूल जाती है वह कभी भी उन्नति के उच्चतम शिखर पर नहीं चढ़ सकती। हम आज आजाद हैं। हमारे कवि, हमारे युग, हमारी क्रांति की कवितायें लिखते हैं और हम भी अपने कवियों का सम्मान करते हैं।

भारत की आजादी के लिये अंग्रेजी और अमेरिकन साम्राज्यवाद का घोर विरोध करने के लिये प्राणोंका मोह न करते हुए भी हमें अपनी लड़ाई जारी रखनी चाहिये। आजाद हिन्द सरकार ने निश्चय किया है कि हम हर हालत में लड़ेंगे और तबतक लड़ेंगे जबतक कि हमारे पास एक भी सैनिक है और एक भी टूटी हुई बन्दूक है। कुछ साथियों को खुद ही हथियार उठाने होंगे। कुछ को धन से सहयोग देना होगा। अपने साथी सिपाहियों से मै केवल एक चीज चाहता हूँ—खून, ताजा, लाल, गर्म, जवान खून। याद रखो, केवल पूर्वी एशिया ही नहीं, जहां कहीं भी हमें दुश्मन मिलेगा, उससे हम वहीं लड़ेंगे।

भाइयो, इससे पूर्व कि आप लोग इस ऐतिहासिक क्षेत्र से, वापिस जाओ मैं आपसे निश्चय पूर्वक यह जानना चाहता हूँ कि आपमें कितने व्यक्ति आखरी दम तक हमारी इस लड़ाई में साथ देना चाहते हैं। मै नारा नहीं चाहता, यह तो जीवन और मृत्यु का सवाल है। यह मानवता और दानवता का संघर्ष है। सोचो, समझो और अब निश्चय करो। आप में से वे लोग खड़े हो जायें जो अन्तिम समय तक लड़ते रहेंगे। बिना इस बात की परवाह किये कि देश में कांग्रेस, लीग व महासभा क्या कर रही हैं।

"गांधीजी मेरे गुरु हैं, मैं अपने गुरु की स्मृति को प्रणाम करता हूँ। इस क्षितिज के पार, इन कलखती हुई नदियों, लहराते हुये जंगलों के पार स्वर्ण भूमि है, हमारे स्वप्नों का देश। वह देश संसार का सबसे सुन्दर देश है, इसके आकाश मे चांद अजब रोशनी फेंकता है; उसके पेड़ों की डालों पर विहग अजब मिठास घोलते हैं और उन पेड़ों की छांह में बैठकर वहां के ऋषियों ने विचित्र रहस्य हमें बतलाये है।

उनकी जयन्ती हम आज मना रहे है, वह गांधी आधुनिक ऋषि है उनकी अहिंसा ही मानवता की एक मात्र आशा है, लेकिन गुलाम देश की अहिंसा, अहिंसा नहीं कमजोरी होती है। इसलिए हम पहले अपने देश को आजाद करेंगे। मौत की मंजिलें पार करते हुए हमें दिल्ली पहुँचना है। जिस दिन दिल्ली के लाल किले पर तिरंगा झण्डा लहरा-येगा, उस दिन मणि-जटित सिंहासन पर हम महात्मा गांधी को बिठा-येंगे, गंगाजल से उनके चरण धुलायेंगे और उनसे कहेंगे कि अब आप संसार का नेतृत्व अपने हाथ में लीजिये। अब आपकी अहिंसा की जरूरत है— मेरे गुरुदेव!

१३ अक्तूबर को आजाद हिंद फौज ने बाकायदा ब्रिटेन तथा अमेरिका के विरुद्ध युद्ध घोषणा की। १६ मार्च का वह दिन कितन भाग्यशाली था जिस दिन भारत के इन सूरमाओं ने मातृभूमि की सीम को पार किया।

आजाद हिन्द सैनिकों के कुछ गीत

(१)

सीस झुका कर भारत माता, तुझको करें प्रणाम।
शीतल निर्मल तेरी नदियाँ, सब्ज तेरे गुलजार।
खुशबूदार हवायें तेरी, हर सू मौज बहार॥
तेरी मीठी चांदनी [रातें, देतीं सौख्य अपार।
तू है सुख की सागर माता और महा बलवान॥
कितनी सुन्दर बातें तेरी, कितने मीठे बोल।
तू ही मेरा सर्वस्व माता, शब्द तेरे अनमोल॥

(२)

सिर पर तिरङ्गा झंडा, जलवा दिखा रहा है,
कौमी तिरङ्गे झंडे, ऊंचे रहो जहां में।
हो तेरी सर बुलन्दी, ज्यों चांद आसमां में,

तू मान है हमारा, तू शान है हमारी,
तू जीत का निशां है, तू जान है हमारी।
हर इक बशर के लब पर, जारी हों ये दुआयें,
कौमी तिरङ्गा झण्डा हम शौक से उड़ाये।
आकाश और जमीं पर, हो तेरा बोल बाला,
झुक जाय तेरे आगे, हर एक तख्त वाला।
हर कौम की नजर में तू ज्ञान का निशां हो,
हो इस तरह मुअस्सर, साया तेरा जहां हो।
मुश्ताक बेजुबां भी, खुश हो के गा रहा है,
सिर पर तिरङ्गा झण्डा, जलवा दिखा रहा है।

(३)

उठो ! और सोये हुए भारत को जगा दो।
आजादी यूं लेते हैं जवां, ले के दिखा दो॥
खूंखार बनो, शेर बनो, हिन्दी सिपाही।
दुशमन की सफें तोड़ के इक धलका मचा दो॥
निज देश के बदले में भली चीज ही क्या है।
भाई भी यदि बाधा हो, तो मार गिरा दो।
मीनारे कुतब देखता है राह तुम्हारी।
चल इसकी बुलन्दी को तिरंगे से सजा॥
कर याद शहीदों का लहू देश की खातिर।
दो-चार भी दुश्मन के हजारों से लड़ा दो॥
क्यों लाल किला यों रहे दुश्मन के हवाले।
जाओ जहां, भारत की वहां धूम मचा दो॥
है और कोई इच्छा न बाकी मेरे दिल में।
आजाद वतन हिन्द में जय हिन्द धु.

(४)

एक नया संसार बना ले, एक नया संसार।
आओ गाएं नये तराने—मातृभूमि के प्रेम के गाने।
आज बसन्त बहार, देखो आज बसन्त बहार॥

(५)

जीते देश हमारा।

भारत है घर बार हमारा, हमने इस पर सब कुछ वारा,
चरणों में सोने की लङ्का, कण्ठ में नदियों की है माला।
शीश सुहाता ताज हिमालय—जीते देश हमारा,
अद्भुत सागर युगल भुजाये, भाति भांति के पुष्प सुहाये।
आओ मिलकर अस्तुति गायें—जीते देश हमारा,
भारत माता है दुखियारी, भीर पड़ी है उस पर भारी।
आओ! रल मिल सब नरनारी करे देश उद्धारा।
जीते देश हमारा॥

(६)

चलो दिल्ली चलें हम—
सुना सभी ने प्रेम से गाना—हिम्मत बाधे आगे जाना।
क्या काम करोगे, कुछ यह तो बता दो।
भारत के बिखरे हुये तार सजा दो।
फिर हम गायेंगे मिलकर जीवन की सरगम'' चलो दिल्ली०
किसने किया हमको इशारा।
दूर की मंजिल से हमें किसने पुकारा।
भारत ने पुकारा, आजादी ने पुकारा—
नेताजी सुनाते हैं हमें गीत यह हरदम।

(७)

भारत के जांनिसार रलमिल के गीत गाओ।
हिन्दोस्तां हमारा हिन्दोस्तां हमारा,
हिन्दू हो या मुसल्मां, सिख या ईसाई सारे।
माता के नयन सुख हैं, भारत के हैं दुलारे॥
माता की आन पर है, हम सबने प्राण वारे।
भारत के जांनिसारो।
इक घाट शेर बकरी पानी पियेंगे मिलकर,
आपस की मित्रता से दोनों रहेंगे मिलकर।
आजाद ही जियेंगे और आज़ाद ही मरेंगे॥

(८)

इन्कलाब जिन्दाबाद

देखो नया जमाना आया—पलट गई है जग की काया।
हिन्दी सब जय हिन्द की बोलें।
बाग हिन्द में बहार आई, खुश्क कली फिर से रंग लाई।
बुलबुल चहकी कोयल बोली।

(९)

हम दिल्ली दिल्ली जायेंगे, हम बिगड़ी हिन्द बनायेंगे।
अब फौजी बनकर रहना है, दुख दर्द मुसीबत सहना है।
सुभाष का नाम भी कहना है, दिल्ली चल कर रहना है।
हम दिल्ली दिल्ली जायेंगे।
हम गोली खाकर झूमेंगे—हम मौत को बढ़कर चूमेंगे।
मतवाले बन आजादी के, हम पर्वत जंगल घूमेंगे।
हम दिल्ली दिल्ली जायेंगे।
हम फौजी बन कर आयेंगे, हम दिल्ली तख्त सजायेंगे।
हम अपने जानी दुश्मन का कुल नाम निशान मिटायेंगे।
हम दिल्ली दिल्ली जायेंगे।

(१०)

देहली चलो, देहली चलो, जय हिन्द के जवां।
तख्ता हो या कि तख्त है सिर पै वक्ते इम्तहा।
कांपे जमीन खौफ से हिल जायगा फलक।
दिल्ली की ओर देखकर शमशीर की झलक।
आगे बढ़ेगा देखकर यह यूहीं कारवां।
झण्डा तिरङ्गा कौम का लहराते चला जा।
तू दासता की भावना मिटाता चला जा।
रहमत खुदा की खास है जब अपनी निगहवां।
दिल्ली चलो, दिल्ली चलो, अय हिन्द के जवां।

अन्तिम संदेश

"आजाद हिंद सेना के बहादुर अफसरो और सिपाहियो ?

मै बहुत ही भरा हुआ दिल लेकर बर्मा छोड़ रहा हूं वह बर्मा,जहां आपने सन् १९४४ की फरवरी से बहुतेरी वीरतापूर्ण लड़ाइया लड़ी हैं और अब भी लड रहे हैं। आजादी की जो लड़ाई हम लड रहे हे, उसमे इम्फाल और बर्मा में पहला मोर्चा हम हार गए हैं। लेकिन यह केवल पहला मोर्चा है। हमे अभी बहुतेरे मोर्चे लेने है। मैं जन्म से आशावादी हूं और किसी भी हालत में मै हार मंजूर नहीं करूंगा। इम्फाल के मैदानों मे अराकान के जंगलों और पहाडियों में और बर्माके तेल-क्षेत्रों एवं अन्य स्थानों पर, दुश्मनों के खिलाफ लडते हुए, जो बहादुरी के कार्य आप लोगो ने किए हे, वे सब स्वतन्त्रता की लडाई के इतिहास में सदा के लिए अमर रहेंगे।

इन्किलाब जिन्दाबाद। आजाद हिन्द जिन्दाबाद॥ जय हिन्द॥

२४ अप्रैल १९४५ सुभाषचन्द्र बोस

सुप्रीम कमांडर आफ आजाद हिन्द फौज

परिशिष्ट

सुभाष-दिग्विजय की प्रमुख तिथियें

तिथि	घटना	तिथि	घटना
२३-७-९७	सुभाष जन्म	१४-११-३७	यूरोप को
१९२०	सुभाष आई सी एस बने	१०-१-३८	इग्लैन्ड मे
१९२१	आई. सी एस से त्यागपत्र	१२-१-३८	डिविलेरा से भेंट
१९२२	प्रथम गिरफ्तारी	१८-१-३८	हरिपुरा के प्रधान
२१-१०-२४	दूसरी गिरफ्तारी	२५-२-३८	राष्ट्रपति के आसन पर
१५-५-२७	जेल-मुक्त	३०-१-३९	त्रिपुरी के प्रधान
१९-२७-२९	प्रधान बगाल काग्रेस	२२-३-४०	रामगढ़ में
१९३९	ट्रेड यूनियन के प्रधान	२-७-४०	हौलवेल स्मार्क आदोलन मे गिरफ्तार
२७-९-२९	प्रधान पजाब छात्र सघ		
२९-१२-२९	प्रधान बरार छात्रसघ	२६-१०-४०	अनशन
२३ १-३०	तीसरी बार जेल	२६-१-४१	अन्तर्ध्यान
१०-१-३१	चौथी बार जेल	७-१२-४१	जापान द्वारा आक्रमण
२६-१-३१	पाचवी बार जेल	१२-६-४३	टोकियो मे
२९-१२-३१	छठी बार जेल	२-७-४३	सिगापुर पहुचे
२३-२-३३	यूरोप गमन	४-७-४३	सुभाष-सप्ताह
४ ३-३३	वियाना पहुचे	२३-१०-४३	युद्ध घोषणा
२-१२-३४	पिता का देहान्त	७-११-४३	वर्मा मे हैडक्वारटर
९-१-३५	फिर यूरोप को	७-१-४४	रगून ,,
८-४-३६	फिर भारत मे	४-२-४४	प्रथम सग्राम
९-४-३६	सातवीं जेल	१९-३-४४	भारत प्रवेश
१०-५-३६	अ भा सुभाष दिवस	२२-३-४५	दूसरा हल्ला
१७-३-३७	जेल से मुक्त	२४-५-४५	डापसीन

भारतीय इतिहास की तिथि पत्रिका

ई.पू. ५५७	बुद्ध निर्वाण	२४-६-१९०८	लोकमान्य गिरफ्तार
,, ३२६	अलक्षेन्द्र भारत में	२८-२-१९	रौलट बिल
,, ३२२	चन्द्रगुप्त का अभिषेक	६-२-१९	देशव्यापी हड़ताल
,, २६६	अशोक ,, ,,	१३-३-१९	जलियाँ वाला काण्ड
ई ४५०	हूण-आक्रमण	३१-७-२०	तिलक निधन
५७०	मुहम्मद जन्म	१४-२-२२	चौरी चौरा काण्ड
६०६	हर्षवर्द्धन	१-३-२२	गांधी गिरफ्तार
७९९	शंकर जन्म	५-३-२४	,, छूटे
११५०	पृथ्वीराज जन्म	१६-६-२५	चितरंजन देहान्त
१५२७	राणा संग्राम मृत्यु	२६-११-२६	श्रद्धानन्द बलिदान
१५३२	तुलसीदास ,,	१७-११-२८	लाजपत वध
१५३८	प्रताप जन्म	१२-९-२९	जेतन बलिदान
१५७६	हल्दी घाटी का युद्ध	२६-१-३०	आज़ादी-दिवस
१६२७	शिवा जन्म	१२-३-३०	डांडी मार्च
१६५९	अफजल वध	५-४-३०	,, पहुंचे
१६७४	छत्रपति शिवाजी	५-५-३०	गांधी गिरफ्तार
१६७५	गुरु गोविन्द जन्म	६-२-३१	मोतीलाल देहान्त
१७०७	स्वर्गारोहण	५-३-३१	गांधी इर्विन पैक्ट
१७६१	पानीपत का तीसरा युद्ध	२९-८-३१	गांधी लन्दन गये
१७८०	रणजीत जन्म	४-१-३२	गांधी गिरफ्तार
१८३९	स्वर्गारोहण	१७-८-३२	कौम्यूनल एवार्ड
१८४९	पंजाब हरण	२७-९-३२	पूना पैक्ट
२३-७-५६	तिलक जन्म	१-९-३९	विश्व युद्ध
२५-१२-६१	मालवीय ,,	१७-५-४६	मिशन-घोषणा
६-५-६१	मोतीलाल ,,	२-९-४६	जवाहर सरकार
२९-१-६५	लाजपतराय ,,	९-१२-४६	विधान-निर्मात्री
२-१-६९	गांधीजी ,,	१४-११-१८८९	जवाहरलाल

[१]

युग-पुरुष

(नेताजी सुभाषचन्द्र बोस)

अंग्रेज आज भले ही शासनाधिकार छोडते समय छटपटा रहा हो, परन्तु हिटलर और टोजो के साथ लोहा लेने वाला अंग्रेज आज यदि भारत को कुछ दे रहा है, सब नेताजी द्वारा सदूरपूर्व मे किये गये आजादी के भीष्म प्रयास का पुण्य प्रताप है। नेताजी को यद्यपि अन्तिम सफलता नही मिली, परन्तु जो कुछ मिला उसे हम विफलता भी तो कभी नही कह सकते। नेताजी का पच भौतिक शरीर आज इस ससार मे नहीं परन्तु उनका नाम अमर है। नेताजी की कोई समाधि नही, कोई उनका मैमोरियल नही "जय हिन्द" ही उनका सब से बडा मैमोरियल है। युग-धर्म, अस्थायी सरकार तथा विधान-निर्मात्री के साथ इस युग-पुरुष का अटूट सम्बन्ध होने के कारण हम सर्वप्रथम नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की पुनीत स्मृति में कतिपय पत्र पुष्प भेंट करते है।

(अप्रकाशित सुभाष-दिग्विजय से)

दिन छब्बीस जनवरी का था और निशा थी महाकाली।
पड़ी खाट पर ऊंघ रही थी नौकरशाही मतवाली॥
आज भाग्य शालिनी बनी थी काली कलकत्ते वाली।
उसका पुत्र चला था करने मां की गोदी हरियाली॥
हुआ कालिमा के आंचल में अन्धकार में एक प्रकाश।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥
जोश तिलक का ले उर में गांधी जी का बलिदान लिए।
देश भक्त अज्ञात शहीदों का गौरव अभिमान लिए॥

युग-धर्म

शूलों के पथ पर निकला शोणित का अमर निशान लिए।
वीरों का सरदार चला सरदारों का रणगान लिए॥

जग में जो साम्राज्य बना है करने उसका पूर्ण विनाश।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥

वर्द्धमान की ओर कार मे बाका वीर पठान चला। २
समर क्षेत्र मे रणचंडी का वह करने आह्वान चला॥
सिन्धु पार सीता स्वतन्त्रता का पाने वरदान चला।
लंक दासता की ढाने मानों सचमुच हनुमान चला॥

जगदम्बा की लाज बचेगी, होगा दशकन्धर का नाश।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥

ठुकरा कर निज राजमुकुट बन गया विश्व आदर्श फकीर।
बन्धन में रख सकी तुझे न परवशता की दृढ़ जंजीर॥
तुम्हें देख हथकड़ियो की दृढ कड़ियां भी कड़कड़ टूटीं।
तुम्हें देख पाशविक शक्ति की महमाती आखें फूटीं॥

तुम्हें देख हर्षित भये सुरगण, असुर समूह मे छाया त्रास।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥

कपिल वस्तु के उस कुमार के हिय मे क्या वैराग्य जगा।
राजमहल के वैभव छोडे देशहेतु सब कुछ त्यागा॥
कर्म योग का शस्त्र हाथ में लेकर निकल पड़ा जो वीर।
सहम गये अत्याचारी गण देख जाहि की छवि गम्भीर॥

जीवन मे करके दिखलाया तू ने रामायण बनवास।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बाकुरा वीर सुभाष॥

धन्य पिशावर के अब्बासखां उत्तमचन्द तुम्हें भी धन्य।
वैभवशाली कौन हुई सकै धरतीतल पर तो सम अन्य॥
विजय गान के हे विराट औ रामायण के हे सुग्रीव।
मिले तुम्हें नेता सुभाष जैसे मिलते माया को जीव॥

तेरे ही पावन प्रयास से फूली फली हिन्द की आशा।

वही रूस जो बना हुआ है दीन जनों का ठेकेदार।
नेता जी को अपनाने में उसने साफ किया इन्कार॥
किन्तु फिर भी प्रभु कृपा से मुश्किल शीघ्र बनी आसान।
कौन बिगार सके कुछ उसका जिसके रक्षक हों भगवान॥
वायु वेग से उडा सूरमा पहुंच गया हिटलर के पास।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥
हिटलर हार गया तो क्या था शक्ति का था वह अवतार।
किया वीर ने भरी सभा मे नेता जी का जयजय कार॥
कहा सूरमा ने सुन हिन्दी, खुला तेरी मुक्ति का द्वार।
देख तेरे कल्याण हेतु ही लियो आज प्रभु ने अवतार॥
अब तो निश्चय कट जायेंगे भारत मां के बन्धन पाश।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥
बरलिन की उस सभा में गर्जा वह भारत का बमभोला।
टैन डौउनिंग सट्रीट मे उसने फैंक दिया बम का गोला॥
चर्चल, स्टालिन, रूजवैल्ट तीनो का सिहासन डोला।
भरी सभा मे त्रिपुरारी ने मस्तक का ज्यूं नेत्र खोला।
बीस सहस्र सूरमाओं का उसी सभा में हुआ प्रकाश।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥
पैदा होते ही शिव के गण लगे हिन्द की जय गाने।
नौकरशाही के कारिन्दे बने देश के परवाने॥
यूरोप में आजाद हिन्द सेना का यूं करके निर्माण।
दूर पूर्व की ओर चले फिर टोजो को देने वरदान॥
बोल उठा फिर वरुण देव भी, तेरी हिम्मत को शाबाश।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष॥
हाथ जोड़कर बोला टोजो, प्रभो! मुझे यह दो वरदान।
नष्ट भ्रष्ट कर अंग्रेजों को करूं एशिया का मैं त्राण॥
हों स्वतंत्र फिर चीन, हिन्द चीनी, बर्मा और हिन्दोस्तान।

जन्म सिद्ध स्वाधीन सभी हों यही जगत मे गूंजे गान ॥
कर दूंगा फिर से मैं जग में रामराज की छटा प्रकाश ।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष ॥

देकर के वरदान तजो को सिगापुर मे आए नाथ ।
पाकर के अनुपम नेता आजाद हिन्द दल भयो सनाथ ॥
गाने लगे वीर भारत के भारत मा की गौरव गाथ ।
आज करेंगे रण भूमि में भारत मां का उज्जवल माथ ॥
होगा मां के शूरसुतों का समर भूमि में सफल प्रयास ।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष ॥

वीर सपूतो के तप से मा, स्वतन्त्रता का वर पाये ।
विजयी विश्व तिरंगा प्यारा लालकिले पर फहराये ॥
मातृ वन्दना करके वीरो आगे को अब बढ़े चलो ।
विजय तुम्हारी होगी निश्चय दृढ़ प्रतिज्ञ हो चले चलो ॥
तुम भविष्य के निर्माता हो अत न होना कभी निराश ।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष ॥

शाहनवाज, बुरहान, भौंसले, सहगल, ढिल्लन, गिल, अहसान ।
सिघाडा सिंह, फतहखान, अब्दुलरशीद से वीर महान ॥
भारत मां की जय जय गाते कूद पढे सब रण मंझार ।
गूंज उठी फिर अराकान में वह झांसी वाली हुंकार ॥
लिखा जायगा इन वीरों का स्वर्ण अक्षरों में इतिहास ।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष ॥

हे सुभाष. हे आत्म-त्यागी हे सरदाताओं के सरदार ।
आज तलक भी गूंज रही है वह त्रिपुरा वाली हुंकार ॥
अनाचार, साम्राज्यवाद से युद्ध किया रण में घमसान ।
चमक उठा था तुम्हें प्राप्त कर देव ! तुम्हारा हिन्दुस्थान ॥
चन्द्र दिवाकर है जबलौं तबलौं इसका होगा परकाश ।
चला हिन्द आजाद कराने वीर बांकुरा वीर सुभाष ॥

हे भारत की नवनौका के कर्णधार नेता नागर।
आओ कर दो फिर स्वदेश में उद्वेलित सुख का सागर॥
हे स्वतंत्रता की तन्त्री के रुचिर राग से रंजित तार।
गूंजेगी तुझसे ही जग में भारत गौरव की झंकार॥
सदा फूलने फलने वाली वह भारत भविष्य की आश।
आएगा आजाद हिन्द मे भारत मां का लाल सुभाष॥

आजाद हिन्द रेडियो पर नेताजी द्वारा समय-समय पर दिये गये ब्रौडकास्ट भाषणों से कतिपय पत्र-पुष्प—

"सबसे पहले मैं आपसे अपने बारे मे कुछ कहूगा। मैं चाहता हू कि आप सब लोग यह जान ले कि मैं क्या हू और मेरा व्यक्तिगत जीवन क्या है' विश्वविद्यालय की शिक्षा के पश्चात १६२१ मे मैंने राजनैतिक दुनिया मे प्रवेश किया। उस समय सबसे मुख्य सवाल यह था "गत महायुद्ध मे भारतीयो ने क्या किया, उसका परिणाम क्या हुआ, भविष्य के लिये हमे कौनसा अनुभव मिला और हमने क्या सीखा? भारत और इग्लैन्ड मे हमे यह अनुभव हुआ कि हमारे नेताओ की नीति गलत थी। किन्तु कार्य करने के लिए हम अपने नेताओ पर ही अवलम्बित थे। हम तरुण और विद्यार्थी वर्ग सपूर्ण रूप से निराश हो गये। सत्याग्रह मे हमारा विश्वास न था क्योकि सत्याग्रह से दुश्मन को परेशान तो किया जा सकता है, परतु उसे आजादी देने पर मजबूर नही किया जा सकता।

गत महायुद्ध के इतिहास के अध्ययन से प्राप्त अनुभवो के आधार पर सन २१ मे हमने भारत मे कार्य प्रारम्भ किया था। खिलाफत के साथ मिलकर हम लोगो ने अग्रेजो के मुकाबले मे, राष्ट्र की इज्जत बचाने और अपनी लडाई चलाने का निश्चय किया, किन्तु हम लोग निश्चित रूप से जानते थे कि भद्र अवज्ञा आन्दोलन से भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता नही मिल सकती। इस आदोलन से जनता मे राजनैतिक जागृति पैदा हुई है। इस आन्दोलन ने जनता को सशस्त्र सघर्ष के

ए बेपूर्ण कर दिया। यह मेरा व्यक्तिगत मत नही, बल्कि उन तरुणो का मत है जो सन २१ मे महात्मा गाधी से प्रभावित हुये।

सन ३३ मे मै यूरोप गया। वहा ३५ तक ठहरा। यूरोप मे रहते हुए मै बरलिन गया। वहा मैने हिटलर से मुलाकात की। मैने उनसे यह साफा साफ पूछा कि वे कब युद्ध ठानने जा रहे है। उन्होने उत्तर दिया कि वे ब्रिटेन से बिल्कुल नही लडना चाहते। उन्हे आशा थी कि ब्रिटन द्वारा उनकी मागे पूरी कर दी जायेगी। वे ब्रिटेन से सुलह करने के पक्ष मे थे, परन्तु ३८ मे जब मै यूरोप गया मैने वातावरण सर्वथा भिन्न पाया। जर्मनी समझने लग गया था कि ब्रिटेन उसकी सम्पूर्ण मागो की पूर्ति कभी नही करेगा। सन ३४ के सितम्बर मे, जर्मनी ने सुडेटन जर्मनो का मामला पेश किया। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री श्री चैम्बर-लेन हर हिटलर से सुलह करने म्युनिख दौडे। एक समय था, जब अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की चर्चाए लन्दन मे हुआ करती थी। जब मैने ब्रिटिश प्रधान मन्त्री को अपना देश छोडकर जर्मनी भागते देखा तब यह जाना कि ब्रिटेन कमजोर होता जा रहा है और जर्मनी मजबूत। तब मैन यह प्रचार करना शुरु कर दिया कि योरोप मे युद्ध अवश्य-म्भावी है। भारतीयो का कर्तव्य है वह सावधान रहे, तथा ब्रिटेन को अपनी मागे मजूर करने को विवश करे। और यदि ब्रिटेन अस्वीकार करे तो भारत लडने की तैयारी करे। मै जनता मे होने वाली अपने प्रचार की प्रतिक्रियाओ को देख रहा था। मै जानता था मुझे जनता का सम्पूर्ण समर्थन प्राप्त है। किन्तु हमारे नेता कुछ और ही सोच रहे थे—खासकर महात्मा गाधी। उनकी नीति ठहरने और परिणाम देखने की थी। तथापि हम तरुण उनकी इस नीति मे विचलित नही हुए। हमने दूने वेग से अपना प्रयत्न और प्रचार आरम्भ कर दिया।

मार्च ३९ मे त्रिपुरी मे मैने ६ महीने मे भारत को सम्पूर्ण स्वत-न्त्रता देने का और यदि ब्रिटेन ऐसा न करे तो फिर उससे युद्ध ठानने का प्रस्ताव रखा। जब ३९ मे युद्ध छिड गया तब मार्च मे मेरे कहे

गये वचनो के तत्व को दुनिया समझने लगी। उस समय हमारा कर्तव्य था कि अपनी तमाम शक्तियो को एकत्रित करके वृटेन पर आखिरी चोट करते किन्तु हमारे नेताओ के विचार और कार्य भिन्न थे उनकी वह धारणा थी कि युद्धकाल मे ब्रटेन कमजोर पड जायगा और भारत से सहायता पाने के लिये वह हमसे समझौता कर लेगा। मैंने इस धारणा की असम्भाव्यता दिखाने की कोशिश की और कहा कि लडाई के समय चाहे ब्रिटेन की जो भी कमजोरी हो, कह भारत मे अपनी शक्ति हारने नही देगा—ज्यो-ज्यो वह कमजोर पडता जायगा, त्यो-त्यों भारत पर उसकी पकड सख्त होती जायगी—भारत के बिना वह युद्ध को सफलतापूर्वक चला न पायगा और ज्यो-ज्यो वह कमजोर होता जायगा, त्यो त्यो वह देश के साधनो का शोषण करता जायगा। मार्च ४० मे रामगढ मे हमने आगे कदम बढाने की कोशिश की किन्तु गाधीजी अपने पथ पर अडे रहे। परन्तु हमने युद्धविरोधी आन्दोलन आरम्भ कर दिया। सत्याग्रह आदोलन मे हमारा विश्वास न था। तब हम ने पुन इतिहास के पन्ने टटोलने शुरु किये। एक उदाहरण अमरीका का मेरे सामने था, मैं सब कुछ अध्ययन करने पर इस निष्कर्ष पर पहुचा कि विना वाहरी सहायता के भारत की क्राति सफल न होगी। दुनिया के इतिहास मे किसी देश के लिए अपनी स्वतन्त्रता हासिल करने के लिय विश्व के अन्य राष्ट्रो की सहायता लेना कोई नई बात नही थी। भारत मे जो सम्वाद मिलते थे वे तोड मरोड और अधिक-तर प्रचारात्मक ढग के हुआ करते थे। भारत मे रह कर बाहर की दुनिया की वस्तुस्थिति समझ लेना सभव नही था। अत इसी समस्या ने हमें विवश किया कि हममे से किसी एक को बाहर जाकर वस्तुस्थिति का स्वय अध्ययन करना चाहिये। मैंने कुछ लोगो को विदेशो मे भेजने की बात सोची, यह काम बहुत कठिन था। मैंने सोचा किसी ऐसे आदमी को भारत छोडना चाहिए जिसे अग्रेज लोग सचमुच कुछ समझते हो, और भारतीय जनता भी जिसकी बातें ध्यान देकर सुन

संकेती हो। अन्त मे मैंने स्वय भारत से बाहर जाने का निश्चय किया। अपनी जन्मभूमि को छोडने के बाद मुझे अनेक अनुभव हुये, मेरे सामने ३ मार्ग थे--(१) युद्ध मे अलग रहना (२) वृटेन के पास जाकर स्वतत्रता को भीक मागना (३) वृटेन के शत्रुओ के साथ मिलकर युद्ध में भाग लेना और स्वतन्त्रता प्राप्त करने की योग्यता प्राप्त करना। वृटेन के शत्रुओ से मिलकर युद्ध करना और वृटिश साम्राज्य के विनाश मे भाग लेना ही मुझे ठीक रास्ता मालूम दिया।

"मै स्पष्ट कह देना चाहता हू कि मैने जापान की सहायता ली है और मै इसके लिए जरा भी शरमिन्दा नही हू। जापान ने हिन्दोस्तान की आजादी का एलान कर दिया है। अस्थायी आजाद हिन्द सरकार को स्वीकार कर लिया है। इसी आधार पर हमने समझौता किया है। मगर आप! आप तो उस सरकार से समझौता करने जा रहे है जो सदियो मे आप का खून चूस रही है फिर भी आप हम पर आरोप करते है।"

"यह ठीक है कि जापान ने हमे लडाई के लिए हथियार दिये है परन्तु फिर भी वह एक आजाद मित्र राष्ट्र की सी सहायता है। हमारी सैना सर्वथा हमारी सैना है। इस सैना को हिन्दोस्तानी शिक्षको द्वारा राष्ट्रभाषा मे शिक्षा दी गई है। हमारा खुद सैनिक स्कूल है जिसमे हिन्दोस्तानी अफसर शिक्षा देते है। इस सैना का झडा भारत का है छोटे से छोटे सैनिक से लेकर वडे से वडे अफसर तक हिन्दुस्तान की आजादी का दिवाना है। आप हमारी सैना को कठपुतली सैना कहते है कठपुतली सेना सरकारी सेना है जो चादी के टुकडो के लिए साम्राज्यवादी लडाई लडती है।"

"मुझे कुछ भी कहने की जरूरत न होती अगर मै एक कुर्सी तोड क्रातिकारी होता। अगर मै और मेरे साथी यहा विदेश मे आजादी या मौत की लडाई लड रहे है—हमारे बहादुर लडाको को मोर्चे पर मौत से खेलना पडता है। हम जब ब्रह्मा मे थे तो मशीनगन और बम तो

हमारे आस पास के तमाशे बन गये थे। मैंने अपनी आखो से अपने साथियो को ब्रिटिश बमो से आहत होकर तडप तडप कर मरते देखा है। मैंने देखा है कि यूनियन जैक वाले हवाई जहाजो ने आजाद हिन्द फौज के रगून वाले हस्पताल को जान बूझ कर मशीनगनो और बमो से जमीदोज कर दिया। उनके घाव मेरी पसलियो मे चिपक गये है। उनकी आहे मेरे गले में रुध गई है। उनका खून मेरी आखो मे उतर आया है।'

"अगर मै और मेरे साथी अब भी जिन्दा है, तो यह केवल ईश्वरीय कृपा है। हमको आप से बोलने और आपको सलाह देने का पूरा अधिकार है क्यूकि हम मौत की छाया मे जिन्दा रहे है और लडते रहे है। आप जो बडे बडे बगलो मे रहते है आपको नही मालूम कि बमबाजी का क्या असर होता है। आप नही जानते कि जिस वक्त आपके सिरो पर बृटिश जहाज मडरा रहे हो आप से हाथ भर के फासले पर सन्नाती हुई मशीनगनो की गोलिया उड रही हो, बच्चे मर रहे हो, औरते अस्त-व्यस्त भाग रही हो, खून बह रहा हो, पसलिया टूट रही हो, मुर्दे सडको पर बिछ रहे हो उस वक्त का अनुभव कितना गहरा होता है। हमारे दिल मे इन खूनी लकीरो के दाग पड गये है। मगर हम समझौते की ओर नजर उठाकर भी देख नही सकेंगे। नही कभी नही हिन्दुस्तानी खून इतना पतला नही होता।"

"मै ज्यादा कुछ नही कहना चाहता हू मगर आप को याद रखना होगा विद्रोही वह है जो सत्य मे विश्वास रखता है कि आखिर मे सत्य और न्याय की ही विजय होती है। जो असफलताओ से क्षणिक घबरा कर निराश हो जाता है उसे अपने को विद्रोही कहने का कोई हक नही। विद्रोही का बाना है—आखो मे आशा के सपने, हाथों मे मौत के फूल और दिल मे आजादी का तूफान।"

"मुझे इसमे कोई सन्देह नही कि दस साल के अन्दर अगला विश्व-युद्ध आ रहा है। हिन्दुस्तान आजाद होगा यह तो निश्चित है, कब तक

यह हम पर निर्भर करता है। हो सकता है अभी कुछ दिन और लगें किन्तु इसमें ,इतनी निराशा की क्या जरूरत है कि हम वायसराय भवन मे घुटने टेकने को तैयार हो जाए। मेरे साथियो अपना तिरगा झडा ऊचा रखो जब तक कि वह खुद वायसराय भवन और लाल किले पर फहराने लग जाय।"

"इस लिये मै साफ साफ कह देना चाहता हू चाहे अग्रेज राज-नीतिज्ञ मरते मर जाये मगर वह हिन्दुस्तानका राज छोड देगा ऐसा सोचना केवल पागलपन है। इस लिए एगेजो से किसी भी समझौते की उम्मीद हमे नही रखनी चाहिये। आजादी के लिए समझौते बेमानी होते है। आजादी दी नही जाती ली जाती है।"

"हिन्दोस्तान की आजादी के लिए लडना हमारा अपना कर्त्तव्य है और किसी पर हम इस भार को छोडना नही चाहते। अगर हमारे शत्रु जानवरो से बदतर और हथियारो से लैस है तो उनके आगे सवि-नय अवज्ञा आदि बेकार है। हमे काटे को काटे से निकालना है। दुश्मन ने अपनी कमान निकाल ली है हमे भी मौका नही चूकना। अब पीछे हटनेका मौका नही। आगे आगे और हमेशा आगे बढना है। विजय की ओर आजादी की ओर -"

"मै आप को विश्वास दिलाता हू कि इस खतरनाक काम को करने से पहले मै सप्ताहो और महीनो तक इस के पक्ष और विपक्ष के बारे मे सोचता रहा। इतने दिनो तक अपने देश की सेवा करने के बाद अपने देश को प्यार करने के बाद मुझे पहला देश-द्रोही बन जाने का शौक नही था। मै अपनी जनता का अपने भाईओ का विश्वास जीत चुका था, और उन्होने मुझे लगातार दो बार अपना राष्ट्रपति चुन कर मुझे जीवन मे सर्वोच्च गौरव प्रदान किया था। मुझे एक दिल मिल गया था, फारवर्ड ब्लाक जिस का हर सदस्य मेरे लिये जान दने को तैयार था। मै मानता हू कि हिन्दुस्तान से भगने मे न केवल मै वरन् मेरी प्यारी सस्था भी खतरे मे पड गई थी। अगर मुझे यह विश्वास

होता कि युद्धकाल मे भारत मे ही रह कर स्वतन्त्रता पूर्वक आन्दोलन चला सकूगा तो यकीन मानिये मै आपके चरणो मे दूर कदापि न होता।"

"हा धुरी राष्ट्रो का प्रश्न शेष है, क्या उन्होने मुझे धोका दिया था क्या मै धोका खागया हू। दुनिया जानती है कि अग्रेज दुनिया की सब से बडी धोखेबाज कौम है, जो व्यक्ति जीवन भर इन धोखेबाजो से जिन्दगी और मौत की लडाई लडता रहा है वह फिर दूसरो से धोखा नही खायगा। अगर अग्रेज राजनीतिज्ञ मुझे धोखा नही दे सके तो दूसरे भला मुझे क्या धोखा दे सकेगे और अगर जिन्दगी भर जेल मे बन्द रख कर मेरी नसो को चूर-चूर कर बृटिश सरकार मेरी नैतिकता पर धब्बा नही लगा सकी तो यकीन मानिये दुनिया की कोई ताकत मेरे चरित्र को झुका नही सकती। मैने आज तक हिन्दुस्तान की आन कायम रखी है, हिन्दुस्तान के झडे को झुकता हुआ देखने से पहले मै हमेशा के लिये अपनी आखे मूद लूगा।"

"आज मै तुमसे उसी हैसियत से बोल रहा हू जिस हैसियत से एक विद्रोही दूसरे विद्रोही को विद्रोह का निमत्रण देता है। हिन्दुस्तान आज भयानक राजनीतिक सकट मे पडा है और आज यदि आप ने कोई भी गलत कदम उठाया तो आप की आजादी की मजिल महज एक सपना बन कर रह जावेगी। आप नही समझ सकते कि आज मेरे दिल की धडकनो मे कितनी चिन्ताए आगई है जब कि एक तरफ मै तो आजादी को इतना करीब देख रहा हू और दूसरी तरफ आप की मनोवृत्ति से आजादी को कोसो दूर हटते हुए पा रहा हू।"

"मुझे यह देख कर ताज्जुब हो रहा है कि अग्रेजी सरकार अपने धोखे व प्रचार मे इतनी सफल हो गई है कि तीन साल पहले जिस मुल्क ने करवट बदल कर आजादी की लडाई का एलान किया था और करो या मरो का नारा लगाया था आज उसी मुल्क के रहनुमा चन्द सीटो और पदो से सतुष्ट होने के लिए तैयार है। हम जो इस वक्त विदेशो मे है भारत की स्थिति को अच्छी तरह देख सकते है और इसी

लिये मेरा कर्तव्य है कि मैं आपको वास्तविकता से परिचित कराऊ।"

आज के राजनैतिक सकट का प्रमुख कारण यह है कि हमारे देश के वे प्रभावशाली व्यक्ति जिनके दिल में तीन साल पहले आजादी के भाव भडक उठे थे आज वे ही समझौते के लिये अपना अभिमान बेचने के लिए तैयार है। कदम बहुत गलत है। आजादी के मसले पर समझौता नही लडाईआ हुआ करती है, सन्धिया नही बलिदान हुआ करते है। फिर आपकी निराशा यह मेरी समझ में नही आता। मुझे यकीन है कि जल्द और बहुत जल्द हम अपनी मातृ-भूमि को आजाद करा लेंगे।

वाहदुरशाह की कबर पर फूल चढाते समय नेता जी ने कहा "आश्चर्यजनक समता ती इस बात की है कि भारत के अन्तिम सम्राट् की लाश वर्मा में लाकर गाडी गई और बर्मा के अन्तिम सम्राट की लाश भारत में गाडी गई। इस पवित्र स्मारक के सामने हम अपने निश्चय को फिर से दुहराते है। हिन्दुस्तान की आजादी की लडाई के इस समर मैंनानी का हम अभिनन्दन करते है। वह आदमियो में बादशाह था और वादशाहो मे आदमी था। आज हमने अपनी अ।जादी की लडाई शुरू कर दी है और हम मौत के इस घर के सामने खडे होकर शपथ लेते है कि मौत भी हमे अपने रास्ते से हटा न सकेगी। ब्रह्मा और हिन्दुस्तान के साथी शस्त्र से आजादी जीतकर मानवता का त्राण करने के लिये कदम मिलाकर चलेंगे। लगभग १०० साल पहले बहादुरशाह और उनके साथी विद्रोहियो ने पहले ही हमे दिखला दिया है कि अत्याचार का जवाब कैसे दिया जाता है। यह एक गम्भीर अवसर है और इस वक्त अपने बहादुर सिपाहियो को मै वतला देना चाहता हू कि आजादी की लडाई महज शरीर की नहीं आत्मा की लडाई है। बलिदानो के रक्त से आत्मा के विश्वास पर हमे आजादी का आवाहन करना है। हमे बहादुरशाह का वह शेर याद रखना है—

गाजियों में बू रहेगी जब तलक ईमान की,
तख्ते लन्दन तक चलेगी तेग हिन्दुस्तान की।"

सादर समर्पणम्

पूर्वी बंगाल तथा पच्छमी पंजाब

के उन धर्मवीरों की पावन स्मृति को

जिन्होंने धर्म पर हँस हँस कर प्राणों का बलिदान किया।

क्यूंकि वे राम और कृष्ण के भक्त थे, क्यूंकि उन के हृदयों में गोमाता गंगा और गायत्री के प्रति श्रद्धामयी भावनायें थीं क्यूंकि वेह प्रत्येक अवस्था में वेद माता के सच्चे सपूत ही बने रहना चाहते थे- संसार का कोई भय, कोई प्रलोभन उन धर्मवीरों को धर्म-पथ से विचलित न कर सका। केवल इसी अपराध में पाकिस्तानी शैतानों ने उन्हें अमानुषिक यातनायें दीं। आज वे धर्मवीर हमारे बीच में नहीं, परन्तु उन धर्मवीरों का पवित्र बलिदान कदापि अकारथ न जायगा।

यह ग्रन्थ उन्हीं देशरत्नों की पुनीत स्मृति को भेंट करता हूं।

जो चले गये।

वे अपनी आशायें, अपनी महत्वाकांक्षायें अपने साथ ले गये

हम जो पीछे रह गये

हमें इस पाकिस्तानी विषवृक्ष के उपद्रवों की

चरमसीमा को अभी देखना है।

परमात्मा हमें शक्ति दे

और भीषण से भीषण परिस्थितियों में भी देश और धर्म के प्रति हमारी निष्ठा तथा बलिदान की भावना को

बनाये रखे।

परमात्मा हमें राम सा साहस दे, कृष्ण सी नीति दे, प्रताप, शिवा, गुरु गोविन्द सा स्वदेशाभिमान दे, और सुभाष सी प्रतिभा प्रदान करे।